शुभ प्रभात

इस उपन्यास के अंश राजस्थान साहित्य अकादमी की पत्रिका
"मधुमती" मे प्रकाशित हुए थे—
"मैं भालू सा नही बनूगा"
नाम से

मन की बात

मैंने एक सपना देखा था।
मैंने क्या मेरे जैसे अनेक लोगों ने देखा था।
तब देश स्वतन्त्र नहीं था। हम गरीब थे और
अन्याय-अत्याचार सह रहे थे। सोच रहे
थे कि देश स्वतन्त्र होगा तो अन्याय,
अत्याचार, शोषण, गरीबी आदि से
छुटकारा मिलेगा और हम इन्सानों की तरह
जी सकेंगे।

मेरा सपना सच हुआ।
देश स्वतन्त्र हुआ। देश ने तरक्की भी की।
परन्तु मैं और मेरे जैसे अनेकानेक
लोग अन्याय, अत्याचार, शोषण, गरीबी
आदि से छुटकारा नहीं पा सके। पर क्यों?

मैं फिर से सपना देखने लगा।
दुगनी ताकत और जोश से पुनः काम
में जुट गया। अथक काम किया। परन्तु
मेरा सपना सच नहीं हो सका।
पर क्यों?

मैं अभी थका नहीं हूं।
मैंने सपना देखना भी नहीं छोड़ा है।

1

"कल्लू ऽ ऽ'''," लाला रघुवरदयाल चीखा, "जरा तेज़ी से हाथ चला।"
कल्लू चौंक पड़ा। उसके हाथ से काँच का गिलास छूटते-छूटते बाल-बा
बचा। उसके मोटे और बाहर को निकले बदसूरत होंठों पर कपकपी दौड़ गई
उसके कानों में जलते तवे पर पड़ी अनेक बूँदें अचानक एक साथ चीख पड़ी
उसकी कोलतार-सी दुबली-पतली देह कच्छप-सी सिमटकर रह गई। पता नहीं
लाला को यह क्या होता है कि वह असमय और अकारण दहाड़ने लगता है। व
अपना काम दत्तचित्त होकर कर रहा था और सपाटे से हाथ चला रहा था। फि
लाला क्यों चीख़ा ?

कल्लू ने अपने चारों ओर देखा, सब ठीक था। दूकान में कोई नहीं था उस
और लाला के अतिरिक्त। उसने इधर-उधर देखा, कोई ग्राहक उधर आता दृष्टि
गत नहीं हुआ। चारों ओर सन्नाटा पसरा पड़ा था किसी जंगली अजगर-सा।

तापमान शून्य के आसपास चक्कर काट रहा था। बरछे-सी तीखी और ठ
हवा तन-मन को काट रही थी। कल्लू इस सबसे बेख़बर होकर अपना तन-म
काँच के गिलास साफ करने में लगाये हुए था। उसके सिर पर ढेर सारा का
पड़ा था। सोने से पहले उसे वह सारा काम अकेले ही निपटाना था। वह गह
साँस लेकर मन-ही-मन बुदबुदाया, "मालूमा अभी तक नहीं लौटा। ''पता न
कि वह आज लौटेगा भी या नहीं !" कल्लू ने स्वयं उत्तर दे डाला, "ऐसी ठण्ड
वह शायद ही लौटे।"

रात सियाह काली थी—एकदम नागिन-सी फुफकारती हुई। कल्लू बल्ब
पीले प्रकाश में बैठा हुआ तेजी से हाथ चला रहा था। काँच के गिलासों
खनखनाहट लयबद्ध होकर बह रही थी।

"मोटिया कहाँ मर गया ?" लाला रघुवरदयाल दहाड़ा। एकबारगी उस
थुलथुल देह चट्टान-सी हिल गई।

सन्नाटा बल खाकर अवसन्न रह गया। इस बार कल्लू नहीं चौंका औ

उसके मोटे और बाहर को निकले थलथुल होंठ ही थे। वह यन्त्रवत् अपने काम में लगा रहा।

लाला रघुवरदयाल को यह खामोशी रास नहीं आई। वह उद्विग्न हो उठा और पुनः चीखा, "क्या वह मुझसे कुछ कहकर गया था !"

"नहीं।" कल्लू ने दृढ़ता से कहा।

"तो फिर वह मोटिया कहाँ मर गया !" लाला रघुवरदयाल ने प्रश्न आकाश में उछाल दिया, पहेली के समान।

कल्लू जानता था कि लाला ने यह प्रश्न उससे ही किया है लेकिन अप्रत्यक्ष रूप से। वह उत्तर नहीं देगा तो लाला और उद्विग्न होगा। वह और क्रोधित होगा। होता है सो हो, लेकिन वह उत्तर नहीं देगा। यथार्थतः उसके पास लाला के इस प्रश्न का कोई उत्तर है भी तो नहीं—सम्भावित उत्तर भी तो नहीं है।

लाला अपनी प्रकृति के अनुसार बराबर बड़बड़ा रहा था, "हरामखोर यहाँ आकर मरते हैं···सौ बार नाक रगड़ते हैं···गिड़गिड़ाते हैं। कब का गया हुआ है, नमकहराम। रास्ते में गप हाँकने बैठ गया होगा। आज आने दो कामचोर को··· फिर देखना, वह रहेगा या मैं।" लाला ने अपना निर्णय सुना दिया था।

कल्लू जानता था कि मालूखा लाला को झूठ-मूठ की कोई कथा-कहानी सुना देगा और लाला का सारा क्रोध छूमन्तर हो जाएगा। मालूखा कथा-कहानी गढ़ने में दक्ष है। लाला यह जानते हुए भी उसकी कहानी के चक्रव्यूह में फँसेगा और वास्तविकता ज्ञात होने पर अपनी मूर्खता पर मलाल करके रह जायेगा।

"नहीं, आज उसे आने दो। उसकी कोई कहानी नहीं चलेगी। हरामखोर को निकाल बाहर करूंगा!···तब उसे नानी-दादी याद आ जायेगी।" लाला पुनः बड़बड़ाया। वह ऐसा कह-कहकर कल्लू को डराये रखना चाहता था।

कल्लू चुपचाप अपने काम में लगा रहा। उसने लाला की ओर मुड़कर भी नहीं देखा। लाल की बैठी हुई नाक और गुब्बारे से गाल अंधेरे में भी बिल्ली की आँख की तरह उसके मस्तिष्क में चमकते रहे।

लाला खीझ से भरकर बोला, "कल्लू, पता है, मोटिया कब से गायब है?"

"नहीं।"

"क्या कहा,—नहीं ऽ'। तुझे पता नहीं'' तू क्या दिन में सोता रहता है? —लो बोलो, कर लो बात,'''जनाब को कुछ पता ही नहीं। मैं मर भी जाऊंगा, तो भी तुझे पता नहीं चलेगा।'''ओ शैतान की औलाद,—सच-सच बता दे!" लाला हाँफ-सा गया था। उसका भावशून्य चेहरा विरूप हो उठा था।

"मैं सच कहता हूं, लाला।"

"तुझे मोटिये के बारे में कुछ नहीं मालूम? क्या यह तू कहता··· अपनी लाल-लाल आँखें पूरा ज़ोर लगाकर उसके मासूम चेहरे प···

प्रयास किया।

कल्लू सहम गया। उसके होठों पर जड़ता छा गई। यथार्थतः वह नहीं जानता था कि मानूस्वा कब कहाँ से गया था। लाला के सौ काम होते हैं। दिन में वह उसे कई जगह भेजता है। तब क्या उसे पता होता है। कई बार तो लाला उसके कान में फूंक मारता है, और वह मुस्कराकर सरपट दौड़ पड़ता है। देर से लौटता है।···इतनी देर में कि वह सो जाता है—तब ?

"क्यों रे, तू उससे डरता है ?"

कल्लू सिर हिलाकर कहता, "नहीं।"

"तो फिर बता दे, मेरे बाप, कि वह कहाँ गया है ?"

"सच मे मुझे कुछ पता नहीं।" कल्लू गिड़गिड़ाने लगता। उसका खरगोश-सा मन घबरा जाता।

"मोटिया कहाँ गया है ?" लाला ने उसके अधूरे वाक्य को पूरा करते हुए अपना निचला होंठ काट लिया। लाला के कान हिलकर रह गये।

मानूस्वा मोटिया नहीं था। वह तो सींक सलाई-सा पूरा मर्द था। उसके घनी मूछें थीं—बेतरतीब जंगली घास-सी। उसका कद नाटा था। परन्तु उसके होंठ पतले थे और उसकी आँखें बड़ी व चमकदार थीं। वह गाता अच्छा था। सदा चिथड़ों में लिपटा रहकर भी वह खुश रहता था। कभी चिंता को वह अपने पास नहीं फटकने देता था। आकाश में उड़ते पक्षी के समान वह निर्द्वन्द्व और मस्त रहता था। न उसे किसी से कोई शिकायत थी और न अपेक्षा। चाहे लाला उसे कितना भी दुतकारता-फटकारता रहे परन्तु वह उसे कभी जवाब नहीं देता था—सिर्फ मुस्कराकर रह जाता था। जैसे कुछ हुआ ही न हो। कल्लू तब उस पर आँख गड़ा देता था और उसे पकड़ने का प्रयत्न करता था—वहाँ से पकड़ने का प्रयास करता था, जहाँ वह ऐसे अवसरों पर अपने को छिपाकर, काँटा चुभने पर, सुमन-सा खिलकर अपने काम में लगा रहता था।

मानूस्वा का दिमाग और हाथ-पांव सपाटे से चलते थे। मानो उसके एक दिमाग और दो हाथ-पांव न होकर अनेक हों। वह कैसे एक साथ कितने गिलास या कप प्लेट ग्राहकों के सामने रखता और कैसे वह उनको एक साथ समेट लेता उसका यह जादू देखते ही बनता था! सारे दिन, सुबह से देर रात तक वह बिना किसी तनाव और थकान के दोहराता रहता था—दो चालू चाय, एक स्पेशल, चार रस, दो मठरी,···तीन चाय पाव में—एक फीकी, तीन कड़क। उसके कंधे पर सदा एक कपड़ा रहता था, जिसे वह चाबुक की तरह मेज पर चलाता रहता था।

मानूस्वा ग्राहकों का बहुत ध्यान रखता था। उसे उनकी पसंद-नापसंद की पहचान हो चली थी। वह ग्राहक के हाव-भाव को अच्छी तरह समझने लगा था।

उसके मोटे और बाहर को निकले बदसूरत होंठ ही बोले । वह यन्त्रवत् अपने काम में लगा रहा ।

लाला रघुवरदयाल को यह खामोशी रास नहीं आई । वह उद्विग्न हो उठा और पुनः चीखा, "क्या वह तुमसे कुछ कहकर गया था !"

"नहीं ।" कल्लू ने दृढ़ता से कहा ।

"तो फिर वह मोटिया कहाँ मर गया !" लाला रघुवरदयाल ने प्रश्न आकाश में उछाल दिया, पहेली के समान ।

कल्लू जानता था कि लाला ने यह प्रश्न उससे ही किया है लेकिन अप्रत्यक्ष रूप से । वह उत्तर नहीं देगा तो लाला और उद्विग्न होगा । वह और क्रोधित होगा । होता है तो हो, लेकिन वह उत्तर नहीं देगा । यथार्थतः उसके पास लाला के इस प्रश्न का कोई उत्तर है भी तो नहीं—सम्भावित उत्तर भी तो नहीं है ।

लाला अपनी प्रकृति के अनुसार बराबर बड़बड़ा रहा था, "हरामखोर यहीं आकर मरते हैं ''सौ बार नाक रगड़ते हैं'''गिड़गिड़ाते हैं । कब का गया हुआ है, नमकहराम । रास्ते में गप हांकने बैठ गया होगा । आज आने दो कामचोर को''' फिर देखना, वह रहेगा या मैं ।" लाला ने अपना निर्णय सुना दिया था ।

कल्लू जानता था कि मालूखा लाला को झूठ-मूठ की कोई कथा-कहानी सुना देगा और लाला का सारा क्रोध छूमन्तर हो जाएगा । मालूखा कथा-कहानी गढ़ने में दक्ष है । लाला यह जानते हुए भी उसकी कहानी के चक्रव्यूह में फंसेगा और वास्तविकता ज्ञात होने पर अपनी मूर्खता पर मलाल करके रह जायेगा ।

"नहीं, आज उसे आने दो । उसकी कोई कहानी नहीं चलेगी । हरामखोर को निकाल बाहर करूंगा !'' तब उसे नानी-दादी याद आ जायेगी ।" लाला पुनः बड़बड़ाया । वह ऐसा कह-कहकर कल्लू को डराये रखना चाहता था ।

कल्लू चुपचाप अपने काम में लगा रहा । उसने लाला की ओर मुड़कर भी नहीं देखा । लाल की बैठी हुई नाक और गुब्बारे से गाल अंधेरे में भी बिल्ली की आंख की तरह उसके मस्तिष्क में चमकते रहे ।

लाला खीज से भरकर बोला, "कल्लू, पता है, मोटिया कब से गायब है ?"

"नहीं ।"

"क्या कहा,—नहीं 5'' । तुझे पता नहीं ''तू क्या दिन में सोता रहता है ? —लो बोलो, कर लो बात,'''जनाब को कुछ पता ही नहीं । मैं मर भी जाऊंगा, तो भी तुझे पता नहीं चलेगा ।'''ओ शैतान की औलाद,—सच-सच बता दे ।" लाला हांफ-सा गया था । उसका भावशून्य चेहरा विरूप हो उठा था ।

"मैं सच कहता हू, लाला ।"

"तुझे मोटिये के बारे में कुछ नहीं मालूम ? क्या यह तू कहता है !" लाला ने अपनी लाल-लाल आंखें पूरा जोर लगाकर उसके मासूम चेहरे पर चिपकाने का

प्रयास किया।

कल्लू सहम गया। उसके होठो पर जड़ता छा गई। यथार्थत: वह नहीं जानता था कि मालूखा कब वहाँ से गया था ! लाला के सौ काम होते हैं। दिन मे वह उसे कई जगह भेजता है। तब क्या उसे पता होता है ! कई बार तो लाला उसके कान मे फूक मारता है, और वह मुस्कराकर सरपट दौड पडता है। देर से लौटता है।···इतनी देर से कि वह सो जाता है—तब ?

"क्यो रे, तू उससे डरता है ?"

कल्लू सिर हिलाकर कहता, "नही।"

"तो फिर बता दे, मेरे बाप, कि वह कहाँ गया है ?"

"सच मे मुझे कुछ पता नहीं।" कल्लू गिडगिडाने लगता। उसका खरगोश-सा मन घबरा जाता।

"मोटिया कहाँ गया है ?" लाला ने उसके अधूरे वाक्य को पूरा करते हुए अपना निचला होंठ काट लिया। लाला के कान हिलकर रह गये।

मालूखा मोटिया नही था। वह तो सींक सलाई-सा पूरा मर्द था। उसके घनी मूछें थी—बेतरतीब जगली घास-सी। उसका कद नाटा था। परन्तु उसके होंठ पतले थे और उसकी आखें बडी व चमकदार थीं। वह गाता अच्छा था। सदा चिथडो मे लिपटा रहकर भी वह खुश रहता था। कभी चिंता को वह अपने पास नही फटकने देता था। आकाश में उडते पक्षी के समान वह निर्द्वन्द्व और मस्त रहता था। न उसे किसी से कोई शिकायत थी और न अपेक्षा। चाहे लाला उसे कितना भी दुतकारता-फटकारता रहे परन्तु वह उसे कभी जवाब नही देता था—सिर्फ मुस्कराकर रह जाता था। जैसे कुछ हुआ ही न हो। कल्लू तब उस पर आंख गड़ा देता था और उसे पकडने का प्रयत्न करता था—वहां से पकडने का प्रयास करता था, जहा वह ऐसे अवसरों पर अपने को छिपाकर, कांटा चुभने पर, सुमन-सा खिलकर अपने काम मे लगा रहता था।

मालूखां का दिमाग और हाथ-पाव सपाटे से चलते थे। मानो उसके एक दिमाग और दो हाथ-पाव न होकर अनेक हो। वह कैसे एक साथ कितने गिलास या कप प्लेट ग्राहको के सामने रखता और कैसे वह उनको एक साथ समेट लेता उसका यह जादू देखते ही बनता था ! सारे दिन, सुबह से देर रात तक वह बिना किसी तनाव और थकान के दोहराता रहता था—दो चालू चाय, एक स्पेशल, चार रस, दो मठरी,···तीन चाय पाच मे—एक फीकी, तीन कडक। उसके कधे पर सदा एक कपड़ा रहता था, जिसे वह चाबुक की तरह मेज पर चलाता रहता था।

मालूखां ग्राहको का बहुत ध्यान रखता था। उसे उनकी पसद-नापसद की पहचान हो चली थी। वह ग्राहक के हाव-भाव को अच्छी तरह समझने लगा था।

जाऊ।

उस ग्राहक ने मालूखा की ओर नहीं देखा। वह अपने में पूर्ववत् खोया रहा। मालूखा भी यथावत् खड़ा रहा। इस समय वह उस ग्राहक की ओर नहीं देख रहा था। कुछ देर बाद वह ग्राहक बोला, "ले जाओ।" परन्तु उसने मालूखा की ओर नहीं देखा। वह यथावत् अपने से उलझता रहा।

मालूखा ने कप उठाया। गमछे से मेज साफ की और शालीनता के साथ बोला, "बाबू सा'ब, आज्ञा हो तो एक स्पेशल चाय और ले आऊं। बरतन साफ करके, बनाकर लाऊंगा। दूध भी अभी ताजा आया है।" वह इतना ही कह पाया था कि उस ग्राहक ने अपने कठोर चेहरे पर जड़ी पथरीली आंखों से, भावशून्य होकर, अपलक उसकी ओर देखा और थोड़ी देर के लिए वह बुत बन गया। मालूखा सकपकाकर तुरत संभल गया और मुस्कान बिखेरकर वहीं खड़ा रहा।

कल्लू के मन में इस समय हलचल मच रही थी। उसे लग रहा था कि वह ग्राहक पल दो पल में मालूखा को बुरा-भला कहकर वहां से भगा देगा अथवा चुपचाप स्वयं उठकर गरदन नीची किये, एक चाय के पैसे चुका कर चलता बनेगा। प्रायः ऐसी विषम स्थिति में इन दोनों में से एक बात ही सम्भव हो सकती थी। अचरज, ऐसा कुछ नहीं हुआ। उस ग्राहक ने एक बार ऊपर से नीचे तक मालूखा को भरपूर निगाह से देखा और फिर आहिस्ता से बुदबुदाया, "जाओ, ले आओ।"

मालूखा की यह विजय कल्लू के मन पर स्थायी प्रभाव छोड़ गई थी। वह सोचता था कि मालूखा नहीं होगा तो दूकान का क्या होगा! मालूखा और *ग्राहकों के बीच आत्मीयता का जो स्रोत बह रहा है, फिर उसका क्या होगा?* उसके अभाव में लाला की दूकान का क्या होगा! ऐसी बात नहीं है कि लाला मालूखा को समझता न हो! वह जो कुछ समझता था, उसका वह कभी इजहार नहीं होने देता था। सदा वह उसको कोसता-फटकारता ही रहता था। वह जानता था कि मालूखा कुए का मेढक है, वह उसकी दूकान छोड़कर कहीं नहीं जा सकता। कदाचित् वह ठीक ही सोचता था क्योंकि मालूखा में कभी भी लाला के प्रति विद्रोह की आंधी नहीं उठी। वह बराबर लाला रघुवरदयाल के आगे-पीछे दुम हिलाता घूमता था। पर क्यों? कल्लू इस पर खूब सोचता परन्तु उसका सारा सोच इस तिलिस्म का ताला नहीं खोल पाता। वास्तव में यह कल्लू का सोच नहीं था। यह सोच तो उन ग्राहकों का था, जो मालूखा की खिदमत को देखकर लाला के उसके प्रति किये गये दुर्व्यवहार की भर्त्सना करते थे और उसकी मुक्त कंठ से तारीफ। उनका सोच भी यहां आकर ठहर जाता था कि मालूखा सदा शुतुरमुर्ग की ही भूमिका क्यों निभाता रहता है! उसके तेवर बल क्यों नहीं खाते हैं! क्यों वह शत्रु पर चील की तरह झपट्टा नहीं मारता है! ' आखिर क्यों?

इसी समय जोर से रेल का इंजन दहाड़ा भूखे शेर की तरह। कल्लू च
पड़ा। उसने लाला की ओर देखा। लाला झपकी ले रहा था। उसने राहत स
ली ही थी कि उसकी बगल से एक जोड़ा उसके सामने आकर बोला, "दो स्पे
चाय और एक प्लेट नमकीन।" इसके साथ ही वह जोड़ा दुकान के अन्दर घुस
ऐसी जगह बैठ गया, जहाँ से बाहर का आदमी उनको नहीं देख सके। दोनों बी
बाईस के करीब की उम्र के थे। दोनों ही पैंट पहने थे। लड़का ऊपर जर्सी
था और उसकी कमीज का कॉलर खड़ा हुआ था। वह हाथ में दस्ताने पहने थ
जबकि लड़की कंधे पर कश्मीरी शॉल डाले थी और उसकी गरदन में पड़ा लॉ
का पैण्डल साफ चमक रहा था एकदम उसकी हिरनी की आँखों की तरह कुछ न
कुछ रहस्य भरा और शीत लहर की उपेक्षा करता हुआ। वह न हाथों में दस्ताने
चढ़ाये थी और न कलायी में काँच की चूड़ियाँ पहने थी। उसकी एक कलायी में
बहुत ही खूबसूरत सोने का कड़ा पड़ा था और दूसरी कलायी पर घड़ी बंधी थी।
उसके बाल बॉब कट थे।

लाला का तीसरा नेत्र खुल चुका था। वह झपकी लेते-लेते ही गुर्राया, "कल्लू
तेरे बाप इधर आ।" इसके साथ ही उसने अपने कानों पर मफलर कसा और
कम्बल से अपने आपको अच्छी तरह ढक लिया था।

जब लाला सभलकर नहीं बोलता है, तब वह अपने असली लहजे में आकर
बोलने लगता है। वही इस समय हुआ। लाला कह रहा था, "देख क्या रिया है,
फटाफट दो चाय बना और नमकीन दे आ।"

कल्लू ने हाथ धोये। भट्टी को धौंकाया और केटली में पानी चढ़ा दिया।

अब तक ठण्ड लड़खड़ा उठी थी। लगता था कि तापमान नया कीर्तिमान
स्थापित करने का अभ्यास कर रहा है।

कल्लू अपनी कोलतार-सी देह पर एक फटी-पुरानी कमीज लटकाये था। वह
कमीज उसकी देह पर झूल रही थी। वास्तव में वह कमीज किसी बड़े आदमी
की उतरन थी। उसने नीचे निकर पहन रखा था। फिर भी वह काँप नहीं रहा
था। उसने अपनी माँ से एक बार पूछा था, 'माँ' माँ मैं भी कोट पहनूँगा
ऊनी कोट। मुझे भी ठण्ड लगती है।"

उसकी माँ ने प्रश्न किया था, "तूने मछलियाँ देखी हैं, कल्लू।"

"हाँ माँ, देखी हैं।"

"कहाँ?"

"इस वक्त पानी कितना ठण्डा होगा !"

"बहुत ही ठण्डा, मा।"

"तू उसमें खड़ा रह सकता है क्या ?"

"नहीं मा !—इतनी ठण्ड में और पानी में ! कदापि नहीं।"

"मछलियां रहती हैं !···वे कुछ नहीं पहनती हैं। · पशु-पक्षियों को देखता है, वे भी कुछ नहीं पहनते। क्यों रे, क्या उनको ठण्ड नहीं सताती है !" उसकी मां लालटेन की चिमनी साफ करती हुई पूछ अवश्य रही थी परन्तु उसका हृदय अन्दर-ही-अन्दर कांप रहा था।

कल्लू निरुत्तर रह गया। यथार्थतः वे सब वस्त्र कहां पहनते हैं? न उनको लू सताती है और न भयानक शीत लहर। कल्लू सोच रहा था।

मा उसे समझा रही थी, 'ठण्ड दुर्बल मनुष्यों को लगती है।'

"दुबले-पतलों को मां ?" कल्लू बीच में जिज्ञासा फैला बैठा।

"नहीं···।" मा ने सहज मुस्कान बिखेरते हुए कहा, "मनुष्य शरीर के मोटे होने से नहीं, मन-आत्मा की सुदृढ़ता से शक्तिवान् होता है। यदि मन में वस्त्रों का अभाव घर नहीं करे तो ठण्ड पास नहीं फटकेगी।···यह सब मनुष्य पर निर्भर है कि वह सबल बने या निर्बल।···बोल तू क्या बनेगा !"

"सबल·· सबल, मा।" कल्लू ने मा की ओर देखकर कहा, "तू रो रही है मां !"

मा ने मुंह फेरकर पल्लू से आंसू पोंछ लिये। वह यह आज तक नहीं जान सका कि उसकी मां उसे सबल बनाने का पाठ पढ़ाते-पढ़ाते रो क्यों पड़ी ? परन्तु उसने एक बात गांठ में बांध ली थी कि निर्बल व्यक्ति को ठण्ड लगती है, सबल को नहीं। उसे इस वक्त भी ठण्ड कहां लग रही है, जबकि लाला ऊनी कुरता, बण्डी, कम्बल और सिर कानों पर मफलर कसकर भी ठण्ड से सिकुड़ा जा रहा है। उसकी अपेक्षा तो वह लड़का बहादुर है और वह लड़की जिसने लापरवाही से अपने कंधों पर काला शाल डाल रखा है और जिसने कार्डीगन के कुछ बटन बंद नहीं किये हैं, वह लाला और उस लड़के से भी बहादुर है और वह इन सबसे बहादुर-सबल है। यह सोचकर उसका मन खिल उठा कि वह भी कुछ है और बहुतों से सबल है।

"चाय कड़क हो।" उस लड़के का स्वर था।

"नहीं बाबा !" वह लड़की बुदबुदायी। कल्लू ने उसका स्वर सुनकर कहा, "मेम साब, आपके लिये मीडियम।"

"ठीक है।" उस लड़की ने नमकीन गुटकते हुए जरा प्रसन्न होकर कहा और पार्श्व में बैठे लड़के की ओर विजय-गर्व से निहारा।

था। वह भारत-भारत हांफने लगा था और कह रहा था, "हराम की औलाद, कुत्ते की दुम, आंख पर पट्टी बांधकर चलता है। लगता है, तुझे भी मोटिये की तरह मुफ्त के रोट रास आने लगे हैं। 'जा भाग, मेरी नजरों से दूर चला जा। फिर कभी भूलकर भी इधर न आना'''वर्ना मुझसे बुरा कोई नहीं होगा। समझा ''जा भाग, कमीने, भाग ' फौरन भाग।"

कल्लू घिघिया रहा था। लाला से हाथ जोड़कर विनती कर रहा था, "लाला, सिर्फ एक बार ' आखिरी बार, मुझे मुआफ कर दो। मैं तुम्हारे पांव पड़ता हूं ' लाला, रहम करो, भगवान् के नाम पर मुझे इस बार मुआफ कर दो।'' मैं आगे से ऐसी गलती नहीं करूंगा। यदि फिर ऐसी गलती की तो बेशक निकाल देना परन्तु इस बार ''।"

"हर बार तू यही कहता है।'' मैं तुम कमीनों की आदत अच्छी तरह पहचानता हूं।'''नहीं, अब मैं तुझे नहीं रखूंगा।" लाला हांफता हुआ बड़बड़ाता जा रहा था। उसकी तोंद तेजी से हिल रही थी। उसकी आंखों से लपटें निकल रही थीं।

"लाला, इस बार मुझे मुआफ कर दो। बेशक इन प्यालों के पैसे मेरी तनखा से काट लो।" कल्लू का स्वर नम हो उठा था। उसके हाथ-पांव कांपने लगे थे। वह पांव की तेज जलन को जब्त किए था।

"तेरी तनखा से नहीं काटूंगा तो क्या तेरे बाप की तनखा से काटूंगा।" लाला के स्वरों का तनाव पहले की अपेक्षा कुछ ढीला पड़ गया था।

"लाला'''।"

"नमकहराम, पैसे काटने की धौंस देता है।'' बड़ा आया भट्टी का धन्ना सेठ।'' गांठ में नहीं हैं दाने, अम्मा चली भुनाने। ' अण्टी में नहीं दो पैसे कि काट लो! सुबह से शाम तक का हिसाब कर लो''।" लाला इतना ही कह पाया था कि अन्दर से आवाज आई, यह महाभारत चलती रहेगी या चाय भी मिलेगी।"

"शीत लहर का एक तेज और तीखा झोंका आया, जिसने लाला की थुल-थुल देह को एकबारगी अन्दर ही अन्दर कंपा डाला। लाला फिर अपनी जगह आकर बैठ गया और उसने कम्बल ओढ़ लिया।

कल्लू दर्द से बेहाल था। पर वह मौन था एकदम पत्थर हुए बुत के समान। उसके चेहरे पर दर्द की खरोंच साफ उभर आई थीं। उसके होंठ पर खून की बूंद आकर ठहर गई थी। लाला बड़बड़ाया, "भूतनी के खड़ा-खड़ा क्या कर रिया है, अब चाय बना।'''रोज ठण्ड की चपेट में सैंकड़ों आ रहे हैं परन्तु यह कमीना ना मालूम किस मिट्टी का बना है कि'''।"

कल्लू फिर चाय बनाने लगा। उसके पांव में बहुत तेज जलन हो रही थी।

यहाँ फासला पड़ गया था।

कल्लू ने अपने दर्द को भूलकर पहले की तरह चाय बनाई
चाय उसने लाला की ओर बढ़ा दी। लाला ने चाय की चुस्की
बढ़िया बनी थी। उसने लाला का सारा पागलपन उतार दिया।
हो गया।

कल्लू लड़खड़ाता हुआ उस जोड़े के सामने पड़ी मेज पर
आया।

लड़की ने ध्यान से कल्लू की ओर देखा। कल्लू का ध्यान
लड़का मुह लटकाये कुछ सोच रहा था। लड़की ने देखा कि वह
रहा है। वह उससे कुछ कहना चाहती थी—दो शब्द सहानुभूति
वह नहीं पाई। इस कारण उसमें जरा-सी बेचैनी बढ़ी और उसने
को चाय 'सिप' करके टालना चाहा। अचानक एक शब्द बाहर से
उन दोनों के बीच आ गिरा, "चाय बढ़िया है।"

"बहुत बढ़िया।"

"लड़के को शाबाशी दो।" लड़की ने कहा।

"वह लाला दे चुका है।"

"भेड़िया !" लड़की ने सक्रोध कहा।

"मालिक है।" लड़का कहता।

"तो क्या जान से मार डालेगा ?"

"यह मैंने कब कहा ?"

"तो क्या कहा !" लड़की ने नाराजगी उड़ेलते हुए कहा।

"उसने नुकसान किया है।"

"क्या उसने जानबूझकर नुकसान किया ?" लड़की ने तैश में
किया और प्याला मेज पर रख दिया।

कुछ देर वातावरण में मौन बना रहा। दोनों चाय का आनन्द
इस वक्त दोनों में कुछ ऐसा फासला था, जिसे दूरी कहा जा सकता
उस लड़की ने खीझते हुए पूछा, "चुप क्यों हो ?"

"प्याले तो उसकी गलती से टूटे हैं।"

"जानते हो कि उसका पाँव ···।"

"उसे देखकर चलना चाहिये था।"

"वह जल गया तो···।"

"ओह···!" वह लड़का चाय की चुस्की लेने लगा। उसे इस तरह

यह कहां का इन्साफ है। यह कैसी मानवता है!" लड़की ने जिरह करनी चाही।

"यह दुनिया ऐसी ही है, मंजु।"

"पर क्यों?"

"है तो है। इसमें पर-वर का सवाल नहीं उठता।" उसने चाय को सिप करते हुए आगे कहा, "वह ऐसी ही थी, इतिहास साक्षी है और ऐसी ही रहेगी। इसके लिए चिन्ता करना एकदम बेकार है। "चाय का आनन्द लो और कुछ और सोचो।"

"और क्या सोचूं!" लड़की का थकाहारा स्वर था।

"कुछ भी।" लड़की ने लापरवाही से कहा।

"पर यह नहीं।" लड़की ने उसे पढ़ना चाहा।

"क्या फायदा?"

"फायदा है।"

"क्या?"

"तुम लड़के को बुलाओ।"

"क्यों?"

"तुम्हारी कुछ समझ में नहीं आया क्या?"

"नहीं।" उसने सिर हिलाकर कहा।

"तो सुनो, हम इस लड़के को रख सकते हैं।

"वह जाना। उसने मंजु की ओर प्यार से देखा। वह जरा मुस्कराया। फिर वह बोला, "बेशक परन्तु···।"

"सस्ता पड़ेगा।···लगता है कि उसके कोई आगे-पीछे भी नहीं है।···अकेला है।"

"हो भी तो क्या?"

"खाना-कपड़ा और जेब खर्च देने से काम चल जायेगा।"

"मेहनती भी है और होशियार भी। यह चाय उसने ही बनायी है।', वह चहकी।

"बढ़िया बनायी है।"

"तो फिर देर किसलिये?"

"हां देर किसलिये···।" उसने दोहराया।

"जानते तो हो, मैं ऑफिस से आती हूं तो बेहद थकी-मांदी होती हूं। किचिन में जाने का मन नहीं करता। फिर घर की सफाई, झाड़ू-बुहार, चौका-बरतन, कपड़े-लत्ते धोना आदि न जाने और जाने कितने झंझट लगे रहते हैं। ··· सचमुच मैं बहुत थक जाती हूं। लेकिन···।" वह चुप हो गई। उसकी निगाह

अचानक [illegible] उसकी ओर ही [illegible] हुए, था।

वह तो सच है।

वह चुपचाप चाय का घूंट लेती रही और उसने काफी देर के लिए अपना [illegible] बंद कर दिया।

यह देखकर उस लड़के को बहुत हैरानी हुई कि उस अचानक यह क्या हुआ है कि उसने [illegible] कर दी। वह [illegible] था। उसने कहा, "क्या नाराज हो गई हो [illegible] रहा था।" इस लड़के ने कोई बात कर गये है।'

वह मौन रही। उसने हंसते हुए लड़के की ओर कनखियों से देखा। मानो उधर नहीं देख रहा था। उसने इत्मीनान से गहरी सांस ली। उसने सोचा कि शायद वह पहले भी उसकी ओर नहीं देख रहा था। उसे यों ही भ्रम हो गया था। उसने मुस्कराते स्वर में कहा, 'यह लड़का तुम्हारे बड़े काम का सिद्ध होगा।"

"तुम समझती हो कि इतना सब कुछ यह छोकरा कर लेगा।" नमकीन मे से पांच-छह मूंगफली के दाने मुंह मे डालते हुए वह उसकी प्रतिक्रिया जानने हेतु उस लड़के की ओर देखने लगा जो इस वक्त अकेला रगड़-रगड़कर साफ कर रहा था। उसके चेहरे पर अब पीड़ा की खरोंचें नहीं थी। उसका चेहरा भावपूर्ण और गंभीर था।

"तुम्हें कोई शक है क्या ?"

"पूछता हूं ?"

"इस वक्त क्या बजा है ?"

"ग्यारह···।" लड़के ने कलाई पर बंधी घड़ी देखकर कहा।

"और यह लड़का अभी तक फुरती से दुकान का काम निबटा रहा है।··· उसके चेहरे पर कोई शिकवा-शिकायत नहीं है।" उसने चाय का अन्तिम घूंट लिया और प्याला मेज पर सरका दिया। वह पुनः कहने लगी, "अभी-अभी देखा न ···कितनी मार-फटकार झेली थी उसने ! लाला कैसे लाल-पीला हो रहा था और फिर भी वह शुतुरमुर्ग की नाई नीची गरदन किये गिड़गिड़ा रहा था, मोहरे निकाल रहा था और गुहार लगा रहा था।"

"यह तो है।" उसने नमकीन मे से मूंगफली के दाने बीनते हुए कहा और वह फिर उस लड़के की ओर देखने लगा। वह उनकी तरफ ही आ रहा था। वह अब भी लगड़ा रहा था और शायद पहले से ज्यादा।

"कुछ और चाहिये, बाबूजी।" उसका भावमग्न चेहरा सद्यः घटी दुर्घटना के दुष्परिणामों के चिह्न मिटा चुका था। वह शालीनता से खड़ा था और उसका मौन मुखर हो रहा था। कभी क्या होता है कि आदमी बोलता तो बहुत कम है

परन्तु वह बहुत कुछ जाता है। बिलकुल उसके विपरीत जो बराबर चपड़-चपड़ करता रहता है परन्तु वह कुछ नहीं पाता।

"तुम्हारी मां क्या करती है?" लड़की ने पूछा।

"मां नहीं है, मेम सा'ब।"

"पिता।"

"नहीं है, मेम सा'ब।" उसने बहुत धीमे से कहा।

"भाई।"

"नहीं, मेम सा'ब।"

"चाचा-ताऊ।"

"कोई, नहीं है, मेम सा'ब।···कोई भी नहीं।" कल्लू का स्वर यह कहते-कहते आर्द्र हो उठा था। उसके मासूम चेहरे पर कुछ परछाइयां घिर आई थीं।

"अकेले हो।" लड़की का दृढ़ स्वर था।

"जी।"

"कहां रहते हो?" लड़का मुंह में मूंगफली के दाने डालते हुए बीच में बोल पड़ा।

"यहीं।"

"इस दुकान में?"

"जी।"

"ओह!" लड़की का तनिक विचलित स्वर था। वह आश्चर्य से उसकी ओर देख रही थी। इस समय उसे वह लड़का और भी भला और नेक लगने लगा। मानो वह एकदम गोरा-चिट्टा हो गया हो और उसमें किसी देवदूत की आत्मा उतरकर देदीप्यमान तेजस्वी सूर्य की नाईं मुस्करा उठी हो। सारा 'निर्जन' उसके स्वागत-अभिनन्दन में गा उठा हो। देवारण्य सुगंध-सौरभ में महक उठा हो।

लाला की तीखी आवाज ने उनके स्वप्न-घोंसले को चूर-चूर कर दिया। लड़का जा चुका था परन्तु उनके कानों में वह कर्कश स्वर-ध्वनि अभी तक गुनगुना रही थी। हालांकि लाला का चेहरा उनकी ओर नहीं था, फिर भी उनके सामने एक राक्षस आ खड़ा हुआ था, जिसके बड़े-बड़े नुकीले दांत बाहर को निकले हुए थे और जिसके सिर पर तीखे सींग थे।

लड़की ने एक प्लेट नमकीन और मंगा लिया था। लाला शान्त हो गया था। उसने मफलर, सिर और कानों पर अच्छी तरह कसकर लपेट लिया था।

वह फिर कल्पना बुनने लगी, "हम इस लड़के को थोड़ा प्यार-पुचकार कर रखेंगे तो वह भाग-भागकर सारा काम करेगा।···मेरी मानो तो उससे साफ-साफ बात कर लो।

कहा।

"अभी नहीं।" लड़के ने कुछ सोचकर निर्णय सुनाया।

"फिर ?" लड़की ने आंख फैलाकर उसकी ओर देखा।

"कल।"

"कल का कुछ पता नहीं।" उसने नाराजी व्यक्त करते हुए कहा, "—यार कहां रहता है ?"

"देखती नहीं हो, वह सामने बैठा है।···कल अलग में बुलाकर उससे करूंगा।" उसने नमकीन मुंह में डालकर लाला की ओर देखा।

"पर तुम्हें यह काम करना है, गांठ बांध लो।"

"तुम इसकी चिन्ता मुझ पर छोड़ो।"

"आस-पड़ोस में सभी के नौकर हैं।"

"जानता हूं।"

"वे अपने यहां आते हैं तो कैसे नाक-भौं सिकोड़ते हैं। मिसेज लूथरा मिसेज अहलूवालिया कैसे तीखा व्यंग्य बाण छोड़ती हैं···।" वह उन ि की आवाज की नकल उतारते हुए कहने लगी, "मिसेज कालरा, आप जरा लोगों के बीच में बैठें। हमारे आने पर आप चूल्हे-चौके में घुस जाती हैं, बात तो कुछ हो ही नहीं पाती है।···ओह मिसेज अहलूवालिया, तुम्हें मालूम नहं कि मिस्टर कालरा नौकर रखने के सख्त खिलाफ हैं।"

"···परन्तु पहले तो वे।" मिसेज अहलूवालिया ने टोका।

"पहले जनाब बैचलर थे और हर अक्लमन्द बैचलर चुग्गा डालने में क भूल नहीं करता। एक बार मनपसन्द चिड़िया जाल में फंसी नहीं कि फिर धीरे-धीरे उसके स्वप्न-डैनों को एक-एक करके नोच-नोचकर बड़ी बेरहमी परन्तु सफेद कॉलरी सभ्यता-शालीनता में लपेटकर 'डस्टबिन' में डालता जा है।"

"परन्तु तुम्हारे साथ तो ऐसा नहीं हुआ।" मिसेज अहलूवालिया ने टोका।

"मिसेज लूथरा ने ठहाका लगाकर कहा, "हमने दाना भी चुगा और जा को उड़ा ले चले।···सो बेचारे आज तक पीछे-पीछे घूम रहे हैं।"

"या नाक रगड़ रहे हैं।···"इस पर सब खिलखिला पड़ीं।

वह अपनी हंसी नहीं रोक सका। वह इतने जोर से हंस पड़ा कि लाला औ कल्लू दोनों एक साथ उनकी ओर देखने लगे।

लाला खिसियाकर अस्फुट स्वर में फुसफुसाया, "पागल।"

वह लड़की तनिक परेशान होकर पूछने लगी, "इसमें इतने जोर से हंसने की क्या बात थी ?"

उसने हंसी रोककर कहा, "तुम लोगों एक्टिंग बहुत अच्छा कर लेती हो।"

"मजाक छोडो, राकेश।" 'हम जिन लोगो के बीच मे रहते हैं, वे इन्सान नही, प्लास्टिक-स्टील के लोग हैं—बौने।"

"तो तुम्हे इसलिए नौकर चाहिये, मजु।"

"ना बाबा, ना। मुझे नही, हम दोनो को नौकर चाहिए, ताकि हम लोग थोडा 'रिलेक्स' होकर, अपने स्वप्नो के लिए जी सकें—अपने आपसे बतिया सकें। हम सवादरहित होकर न रह जायें यह डर लगा रहता है और कभी-कभी इसी से परेशान होकर हम परस्पर झगड पड़ते हैं—ना कुछ बात के लिए, बेबात।" उसने सहृदयोष्मा से वातावरण गरमाते हुए कहा।

"मैं महसूस करता हू, मजू।' 'और दिल मे चाहता हू कि हम दोनो के बीच निरन्तर स्वप्नो का सवाद मधुर तालमय-सा बहता रहे किसी पहाडी दरिया-सा रनन-झुनन करता हुआ।" वह गम्भीर और भावुक हो उठा था।

"चलें।" उसने कार्डीगन के बटन बद करते हुए कहा और खड़े होते ही सिर पर 'मेहन्दन' रंग का स्कार्फ कस लिया। फिर उसने आदतानुसार मुस्कराकर राकेश की गहरी नीली आखो मे बेमतलब झाका।

राकेश आख झपकाकर रह गया। उसके सामने जीवन के स्वर्णिम सपने नव मेघो मे नर्तन कर उठे। दूर-दूर तक हरी दूब पर निर्भय होकर खरगोश परस्पर क्रीडा करते हुए मुस्करा उठे। ऊपर चिडियो चीं-चीं-ची कर चहक उठीं। वह लाला से पूछ रहा था, "कितने पैसे!" इसके साथ ही उसने दस का नोट लाला की ओर बढा दिया था।

लाला गल्ले मे से पैसे निकालता हुआ बिना उन लोगो की ओर देखे हुए, बडबडाता रहा, "खयाल तो नेक है" पर यह हरामजादा हमारा खरीदा हुआ है।'''पिल्ले के गले मे पट्टा पडा है। ''तीस पैसे हैं।"

"नहीं।"

"चिल्लर नही है।"

"चिल्लर को गोली मारो, रुपये हवाले करो।"

लाला ने उनकी ओर चार रुपये बढा दिये। उसने चार रुपये लेते हुए लाला की ओर घूरा। मजु कल्लू को देख रही थी। कल्लू उनके कप-प्याले उठाकर नल के नीचे रख रहा था। उसे लगा कि कल्लू हाड-मास का नहीं, लोहे का बना हुआ है और वह मात्र एक यन्त्र है, जिसे दुःख-सुख से कुछ लेना-देना नही। न उसे कांटा चुभना है और न मुलायम घास पर चलने का सुख अनुभव होना है।

"चलो।"

उन्होंने आखिरी बार उस लड़के की ओर देखा और बिना अपनी प्रतिक्रिया जाहिर किए वे दुकान से बाहर आकर अंधेरे-उजाले रास्तो की ओर बढ गये।

लाला उनके चले जाने के बाद होंठ चबाते हुए फुसफुसाया,

लंगर समझकर आ जाते हैं।' 'जब बम्पर से घर नहीं संभलता तो ऑफि
जाती है।' नौकर चाहिये···नौकरों को नौकर··· रईसजादे, मक्कार···
कहीं के।"

कल्लू चुपचाप अपने काम में लगा रहा। मालूखा अभी तक नहीं लौट
लाला शायद उसे भूल गया था अन्यथा वह फिर इसे लेकर बड़बड़ाने लगत

"सुनता है, मैं जा रिया हूं।" लाला ने गल्ले की रकम अण्टी में चढ़ाते
कहा। वह दुकान से बाहर आकर बोला, "ध्यान से सोना। पीछे का दर
लगा कर अन्दर से सिटकनी चढ़ा लेना।" कुछ स्मरण आते ही वह
"मालूखा आयेगा तो···?" लाला कुछ देर तक सोचता रहा।

"मालूखा···।" कल्लू फुसफुसाया।

एक तेज हवा का झोंका आया। लाला चलते हुए कहता गया, "ठीक है।"
उससे "सुबह निपटूंगा।" कल्लू कुछ नहीं समझ पाया। लाला जा चुका था।

कल्लू अकेला रह गया था। उसने लड़खड़ाते हुए पहले पिछवाड़े का दरवाजा
बन्द किया और उसके बाद सामने का। उसके चारों ओर सन्नाटा था और पाव
में जलन की पीड़ा। वह भट्ठी के पास आया और हाथ तापने लगा। भट्ठी की आंच
मद्धिम पड़ चुकी थी। फिर भी उसके ताप से उसको राहत मिली। उसने ऊपर
देखा छिपकली शान्त भाव से छत से चिपटी हुई थी। शायद वह भी डरी हुई
थी। वह सोच रहा था कि वह गिरती क्यों नहीं? उसकी समझ में उसके छत
से चिपके रहने का कारण नहीं आ रहा था।

कल्लू ने वहां से ध्यान हटा कर सोने की तैयारी करने की योजना बनायी।
बोरियां इकट्ठी की। दो बोरी नीचे बिछायी और तीन बोरी मिला कर लिहाफ
बना लिया। सोचा कि अब मालूखा नहीं आयेगा। उसे तो जाना चाहिये। सुबह
बहुत जल्दी उठना होता है। उसने सोने से पहले अपना पाव देख लेना उचित
समझा हालांकि उसके पाव देखने या न देखने से कोई अन्तर पड़ने वाला नहीं था।
फिर भी, पाव तो उसका था! वह दुखता भी तो था!

कल्लू ने ध्यान से अपने पाव को देखा। वह देखता रह गया। फफोला बन
कर फूट चुका था। उसने बत्ती बुझा दी। अंधेरा फैल गया। वह बोरिया ओढ़ कर
धीरे धीरे [illegible] सा गया।

और सन्नाटा पहरा देने लगा।

2

अभी सवेरा भी नहीं हुआ था और न चिड़ियों के चहचहाने की आवाज ही
सुनायी पड़ी थी। सारी दुनिया [illegible] रही थी। कहीं से भी [illegible]

आवाज़ सुनायी नहीं पड़ रही थी। कल्लू सोच रहा था कि आज पानी जम गया होगा। उसे जमा हुआ पानी देखने की बड़ी इच्छा थी। कइयों से उसने सुना था कि आज कल रात को इतनी ठण्ड पड़ रही है कि सुबह पानी जमा मिलता है। अफसोस! वह आज तक इस दृश्य को नहीं देख सका था। उसे लोगों की ऐसी बातें सुनकर आश्चर्य होता था। उसे लगता था कि लोग झूठ बोलते हैं कहीं पानी भी जम सकता है! आज भी उसने पानी से भरे हुए सब बरतनों को देखा परन्तु उनमें से किसी में भी पानी जमा हुआ नहीं था। थोड़ी देर के लिए वह अनमना और उदास हो गया। उसमें पांव की पीड़ा कुलबुला उठी। वह अचानक मुस्करा उठा। ये वे क्षण थे जब वह अपने में कुछ ऐसा अशांत अनुभव कर रहा था, जिसे वह समझने की लाख कोशिश करने पर भी नहीं समझ पा रहा था। इससे वह और उद्विग्न होने लगा। उसने खिड़की से बाहर झांका। बाहर सियाह समन्दर शान्त अजगर सा पसरा पड़ा था। दूर-दूर तक परछाईं बना हुआ था शहर। न शोर था, न हवा धड़क रही थी और न झगड़े-सुलह की लम्बी बातें चल रही थीं। प्राय: वहां आकर लोग-बाग आपस में धीरे-धीरे बतियाते-बतियाते एकदम ऊंची आवाज में मायरस से बज उठते थे और फिर उनमें से कोई नाते-रिश्तेदारों की कसम खा-खिला कर उस उबाल में ठण्डे पानी के छींटे मारने का प्रयास करता था। वे पुन: शान्त हो जाते थे और उनमें से कोई चार-पांच सौ ग्राम मिठाई का आदेश देकर इससे पूर्व की सारी ऊंच-नीच और कूद-फांद पर पोता मार देता था।

कैसे-कैसे रंग-बिरंगे और बेमतलब लोग वहां सुबह से रात गये तक आते जाते रहते। फिजूल में कोई हंसता और हंसते-हंसते थकने का एहसास पाकर वह तीन चाय पांच में लाने का आदेश दे देता। लाला बहुत ध्यान से ऐसे सफेदपोशी कॉलिज के लड़कों को देखता और मन ही मन भुनभुनाता। यदि कल्लू उनको चाय देने में देर करता तो वह उस पर बरस पड़ता। वह कहता, "कितनी बार कहा है कि सबसे पहले इन लड़कों को निपटाया कर! जानता है, ये कॉलिज में पढ़ते हैं और इनसे सारा शहर वैसे ही डरता है जैसे टिड्डी दल से। ये झुण्ड के झुण्ड यहां इकट्ठे न होने पायें इसका खयाल रखा कर। अब दिद्दे फाड़ कर पागलों की तरह मेरी ओर क्या देख रिया है। जा, उनको चाय देकर आ।" कल्लू मन ही मन खुश होता। सोचता कि आखिर लाला भी डरता तो है। उसे प्रसन्नता होती जब कॉलिज के लड़के वहां आ जाते क्योंकि तब लाला भीगी बिल्ली बना कनखियों से रह-रह कर उनकी ओर देखता रहता और मन में उबलता रहता।

लाला उनसे नहीं पूछता कि छुट्टे हैं या चिल्लर है। प्राय: वह उन पर दस-बीस पैसे छोड़ता हुआ मुस्करा कर कहता दस-बीस पैसों की क्या बात है, फिर आ जायेंगे।... आखिर यह दुकान आपकी ही तो है।"

कल्लू लोगों के नाना रूप रोज देखता। उसे अचरज होता कि जो थोड़ी देर

बाहर निकाल दी थी और लकड़ी के टुकड़े डाल कर उसमें पत्थर के कोयले जमा दिए थे। अब तो उस पर थोड़ा-सा मिट्टी का तेल डालकर तीली दिखानी शेष थी कि जिससे देखते ही देखते लपटें उठने लगें और सारा कमरा गर्मा जाये। इससे उसे बहुत सुकून मिलता। वह पहले अपने हाथ तापता और फिर उन गर्म-गर्म हाथों से अपने मुंह को गरमाता था। लाल सुर्ख होते हुए कोयलों से इन दिनों उसे बहुत आत्मीयता सी महसूस होती।

धीरे-धीरे सुर्ख दहकते कोयले उसके मनोमस्तिष्क में सियाह काले पड़ने लगे। उसकी यादों के व्रण हरे होने लगे थे। वह अपनी मां के साथ ये ही कोयले बीनने तो रेल की पटरी-पटरी घूमता था। चार-पांच कोयले पाकर वह दौड़ा-दौड़ा अपनी मां के पास आकर कहता था, "मां-मां,···कोयले···ये कोयले।"

उसकी मां उसकी ओर देखती थी। देखकर कुछ देर तक सोचती थी। उसके नन्हें हाथों में चार पांच पत्थर के कोयले नहीं मानो अशरफियां हों। वह भाव-विह्वल होकर अपनी झोली में उन कोयलों को डाल लेती थी। वह फिर कोयलों की तलाश में यह कह कर भाग जाता था 'और लाता हूं मां···ढेर सारे कोयले।'

कल्लू की आखें गीली हो उठीं। उसे लगा कि उजाला होने वाला है। उजाले की भयाशंका ने उसकी यादों के मेघ शावकों को आनन-फानन में तितर-बितर कर दिया। उसने भाग कर खिड़की से झांका और धुंध अंधेरे में अचेत पड़े शहर को देखकर उसको चैन आया।

कल्लू ने दूकान का सारा सामान यथास्थान जमा दिया। अब तो उसे मालूखा को जगाना ही पड़ेगा। भट्टी नहीं चेती तो लाला सुबह का स्वागत गाली गलौज से करेगा। सारा दिन खराब हो जायेगा। कदाचित् घने कोहरे के कारण दिन उगने का पता नहीं चले। आज कल सूरज नाम मात्र को निकलता था और वह भी काफी दिन चढ़े, थोड़ी देर के लिए "उसने आव देखा न ताव तुरन्त मालूखा को आवाज लगा दी। परन्तु मालूखा तो घोड़े बेच कर सोया हुआ था अतः वह टस से मस नहीं हुआ यथावत् लेटा रहा। वह मुख्य द्वार खोलता हुआ कहता जा रहा था, "मालूखां, दिन निकल आया।···तुरन्त उठ जा। लाला आता ही होगा।" रात को वह तुझसे बहुत नाराज था।···सुन तो रहा है, शहजादे।··· खुदा के लिए सुबह खोटी मत कर।"

वह काम करते हुए उसे बराबर ताकीद करता जा रहा था। मुख्य द्वार खोलकर उसने बाहर छिड़काव कर दिया और वह वहां बैंच व मेज लगाने लगा।

मालूखां एक करवट लिए लेटा रहा। अब तो वह मेज व बैंच पर पानी छिड़क कर पोंछा भी लगा चुका था। चिड़ियों के चहचहाने का संगीत बिखर उठा था। अवकाश प्राप्त मुख्तीआर बाबू अभी-अभी आता होगा। आते ही कहेगा

"कल्लू, एक स्पेशल चाय, जरा कड़क।"

मुरलीधर ने हैड बाबू से अवकाश प्राप्त किया था। घर वालों से उनकी बनती नहीं थी। पत्नी गुजर चुकी थी। लड़के और उनकी बहुएं उनको पूछते नहीं थे। उसे मुसीबत मानते थे। इस कारण वह उनको छोड़कर एक किराये के मकान में रहने लगा था वह सुबह अलस-सुबह, अधिकांशतः सबसे पहले यहां चाय पीने आता। उनकी अवस्था पैंसठ की होगी परन्तु वह पचास-पचपन से ज्यादा की उम्र का नहीं लगता। देर रात को सोता और पौ फटने से पहले जग जाता। वह कहता है क्या करूं, कल्लू बेटे। नींद नहीं आती बहुत जल्दी आंख खुल जाती है और मैं खटिया पर पड़ा हुआ बाहर झांकता रहता हूं। कई बार भोर के धोखे में रात को ही तुम्हारी दुकान का चक्कर लगा कर लौट चुका हूं।

"उठते ही चाय की तलब लगती होगी, मुरली बाबू।" मालूआ बीच में बोल पड़ता।

"कुछ भी समझो, मालूआ, पर एक बार जग जाने के बाद खटिया पर पड़े रहने का मन नहीं होता। सोचता हूं, चाय मेरी आदत नहीं, बाहर घूम फिर आने का कारण है। 'यह दुकान बीच में पड़ती है इसलिए सुबह-सुबह चाय ले लेता हूं। 'इसके साथ अखबार भी देख लेता हूं।" वह सहज भाव से तर्क देकर हंसता।

"कल्लू, एक स्पेशल चाय, जरा कडक।"

मुरलीधर ने हैड बाबू से अवकाश प्राप्त किया था। घर वा
बनती नही थी। पत्नी गुजर चुकी थी। लडके और उनकी बहुएं उ
थे। उसे मुसीबत मानते थे। इस कारण वह उनको छोडकर एक
मे रहने लगा था वह सुबह अलस-सुबह, अधिकाशत. सबसे पहले
आता। उसकी अवस्था पैंसठ की होगी परन्तु वह पचास-पचपन
उम्र का नही लगता। देर रात को सोता और पौ फटने से पहले
वह कहता है क्या करूं, कल्लू बेटे। नींद नही आती बहुत जल्दी
है और मैं खटिया पर पडा हुआ बाहर झाकता रहता हूं। कई बार
मे रात को ही तुम्हारी दुकान का चक्कर लगा कर लौट चुका हूं।

"उठते ही चाय की तलब लगती होगी, मुरली बाबू।" मालूम
पडता।

"कुछ भी समझो, मालूमा, पर एक बार जग जाने के बाद घ
रहने का मन नही होता। सोचता हू, चाय मेरी आदत नही, ब
आने का कारण है।...यह दुकान बीच मे पडती है इसलिए सुबह
लेता हू।...इसके साथ अखबार भी देख लेता हू।" वह सहज भा
होकर कहता।

"आप अखबार क्यो नही खरीदते बाबू ?" मालूमा तर्क सुनता

'अखबार दिन पर दिन महगे होते जा रहे हैं और समाचार
के नाम पर थोथे होते जा रहे हैं। उनमे विज्ञापन अधिक होता है, सम
अब तुम्ही बताओ कि बेकार मे अखबार खरीदने से क्या फायदा ?'
बाबू सरलता से अपना गणित समझाने लगते।

"बाबूजी, हम तो पढे-लिखे हैं नही फिर हम इस बारे मे क्या
एक बात समझ मे आती है। हालांकि समझ मे हमारा कोई सीधा
है।... तब भी हम कभी-कभी समझ की दुहाई दे बैठते हैं। आपको
लगे तो हम कुछ अर्ज करें।" बातो का शौकीन मालूमा मूछ मटकाते हु
मुस्कियाना अन्दाज मे कहता है।

मुरलीधर बाबू चाय की घूट भरकर अखबार पर ऐनक टिकाते हु
"इसमे नागवार लगने की क्या बात है मालूमा! जो मन मे हो, उसे बिना
कह डालो।"

तो सुनो बाबूजी—" मालूमा बैठे का रुख बदलकर, [illegible]
[illegible] 'बाबूजी पचास पैसे की चाय। [illegible]

अखबार सिर्फ एक रुपये में।···है न, बाबूजी, एकदम सौ फीसदी समझ की बात।"

इस पर मुरलीधर बाबू ठहाका लगा उठते।

कल्लू को इस प्रसंग की स्मरणोष्मा ने जोश में भर दिया और वह मालूखा को झकझोरता हुआ बोला, "उठ मालूखा, तुम्हारे जिगरी यार मुरलीधर बाबू इधर आ रहे हैं।"

मालूखा मुरलीधर बाबू का नाम सुनते ही अंगड़ाई लेता उठ खड़ा हुआ। उसने चारों ओर देखा। मुरलीधर बाबू नजर नहीं आये। उसने एक बारगी अपने सिर को जोर से हिलाया जैसे बेर के दरख्त को हिलाते हैं। उसने पूछा, "कल्लू, बाबूजी कहां हैं?"

"मेरे सिर में।" मालूखा ने हंसकर उत्तर दिया।

"तूने सारा काम कर लिया, कल्लू।" उसने चारों ओर देखकर कहा।

"हां।"

"पर इतनी जल्दी!"

"दिन हो रहा है। कुहरे के कारण अंधेरा है। इसलिए तुझे अभी रात नजर आ रही है।" इसके साथ ही कल्लू ने भट्टी को तीली दिखा दी। फुव्वारे-सी लौ ऊपर उठने लगी। चारों ओर प्रकाश फैल गया।

"मुझे जगा लेता, कल्लू।"

"तू ठिठुरा पड़ा था, मालूखा।···तूने मुझे क्यों नहीं जगाया! रात भर ठण्ड में सिकुड़ता रहा। जगा देना तो···"

"तो क्या होता?"

"मैंने तेरी बोरिया थोड़ी और बिछाई हुई थी।"

"मूरख···!" मालूखा ने प्यार जताते हुए कहा, "तो क्या हुआ! मुझे लगा कि तू आज सुख की नींद सो रहा है। तुझे दो बोरिया और चाहिए। मैंने सोच लिया कि मैं कल तक, कैसे भी, कहीं से भी, दो-तीन बोरिया और लाऊंगा।···अब से यह सारे का सारा मखमली बिस्तर तेरा।"

"ना···ना···मालूखा, ना। इस भूल की मुझे इतनी बड़ी सजा मत दे।··· जो बोरियां तुम्हारी हैं, वे तुम्हारी रहेंगी। उन्हें मैं नहीं लूंगा।···कदापि नहीं।" मालूखा बिफर पड़ा था।

"पर क्यों, कल्लू?"

"मेरी मां ने कहा था कि कभी किसी से कुछ मत लेना—मुफ्त में कदापि नहीं। जो लो, वह अपनी मेहनत की कमाई से—अपने खून-पसीने की कमाई से।

"तब वे जिंदा हैं।"

"नहीं।"

"मैंने ठीक बताया न, बाबूजी।" मालूखा ने खुश होते हुए कहा और अपने आप ही अपने को शाबाशी दे डाली।

"पर क्यों ?…कैसे ?" मुरलीधर बाबू ने उसका कारण जानना चाहा।

मालूखा चुप। वह क्या जवाब दे ? उसने सोचकर तो उत्तर दिया नहीं था, उसने अलल्टप्पू कह डाला था।

"अच्छा, तुम बताओ, कल्लू कि ये जिंदा कैसे हैं ?"

"सो रहे हैं।" कल्लू ने तुरन्त उत्तर दे डाला।

"जो सोये हुए हैं उनके चित्र देने से क्या लाभ ?"

"लाभ ! कैसा लाभ ?" कल्लू चकरा गया।

"अखबार वालों व उसके पाठकों को उससे क्या लाभ मिलेगा ?"

"वे देखेंगे।" मालूखा ने कहा।

"तो फिर उन्हें मत सोने वालों के चित्र छापने चाहिए।" मुरलीधर बाबू ने उन्हें उलझाया।

कल्लू चाय छानकर ले आया। उसने एक चाय मालूखा को भी दे दी। उन दोनों को लाला दो चाय और दो रस दिन भर में देता था।

मालूखा भट्टी पर दूध से भरी कड़ाही रखकर लौट आया और पुनः चाय की घूंट लेने लगा।

अब हवा कुछ तेज चलने लगी थी और दरख्तों के पत्ते हिल रहे थे। ठण्ड पहले तेज अनुभव हो रही थी। सूर्य का कहीं अता-पता नहीं था। सड़क पर चहल-कदमी हो रही थी। कल्लू के मन में मुरलीधर बाबू की बात चक्कर लगा रही थी। उसने शून्यता से घबराकर पूछा, "बाबूजी, आप ही बता दें।"

मुरलीधर बाबू चाय की चुस्की लेते हुए उन दोनों की ओर देखने लगे। उनका मुखमण्डल अभी तक अति गंभीर था। वह खखारकर कहने लगे, "इस चित्र में जिनको देख रहे हो, वे रात को फुटपाथ पर सोये अवश्य थे परन्तु हमेशा के लिए।…" अखबार मेज पर बिछाकर वह बोले, "यह एक परिवार है, जिसमें तीन बच्चे और उनके मां-बाप हैं। वे सब ठण्ड से मारे गये।…हो सकता है कि भूख उनकी मृत्यु में सहायक हुई हो।"

मालूखा ने फिर पूरे ध्यान से उस चित्र की ओर देखा। वह अन्दर ही अन्दर सहम गया। उसके मनोमस्तिष्क में तेज धार वाला चाकू चमक गया। उसे लगा कि कोई उसका गला काट रहा है और वह चीख-चिल्ला नहीं पा रहा है। रात उसके साथ कुछ ऐसा ही हुआ था। उसने कल्लू को आराम से गहरी नींद में सोया पाकर यह तय किया था कि वह उसे नहीं जगायेगा। भट्टी में अभी तक गर्माहट

और भयानक शक्ल-सूरत उसके सामने ताण्डव कर उठे थे। वह कदाचित् चीख पड़ता परन्तु इसी समय लाला आ गया और वह घबरा गया। उस समय उसके हाथ में कुछ नहीं था, इसके लिए उसने भगवान का लाख-लाख शुक्रिया अदा किया, अन्यथा जो कुछ उसके हाथ में होता, वह उसके हाथ से छूटकर चूर-चूर हो जाता और इस तरह एक नये दिन की शुरुआत अत्यन्त अफसोस और चीख-चिल्लाहट से होती।

वह अपने काम में जुट गया। मालूखा ने मुरलीधर बाबू के सामने एक प्याली चाय और रख दी थी। वह अखबार को पढ़ता हुआ चाय के घूट लेने लगा।

लाला रघुवर दयाल ने देवी-देवताओं के आगे पूरी बारह अगरबत्तियां जलायीं और मन ही मन रोज की तरह पूजा की। चारों ओर पानी छिड़का और अगरबत्तियों का सुगन्धित धुआं गल्ले और सारी दुकान को दिया। इसके साथ वह मन ही मन कुछ दोहराता रहा। इस वक्त उसका चेहरा एकदम शान्त और पवित्र लग रहा था। वह उन्नी बण्डी पहने था और बण्डी के ऊपर शाल ओढ़े था।

बल्लू नित्य नियम की तरह सिर्फ उसके लिए खालिस दूध की दालचीनी व इलायची वाली चाय बनाने में जुट गया। लाला पूजा के बाद चाय पीता था। वह जब तब बढ़िया चाय बनाने के नये गुर भी इस्तेमाल करवाया करता था। उसने चाय में सोन्फ के डोडे का प्रयोग शुरू करवा कर चाय के क्षेत्र में एक क्रांति ला दी थी। उसके यहां की चाय पर ग्राहक टूट पड़ते थे। जिसने एक बार लाला की दुकान की चाय चख ली, वह कभी भी किसी दूसरी दुकान की चाय नहीं पीता था। बल्लू लाला को चाय का प्याला देकर साइकिल वाले दूधिया से दूध लेने के लिए आगे बढ़ गया।

उस दिन वह दो-तीन बार मालूखा के सामने पड़ा परन्तु हर बार मालूखा ने उसकी ओर से मुंह मोड़ लिया। वह समझ गया कि मालूखा सुबह वाली बात को लेकर उससे नाराज है—उसने उसकी लोरियां लेने से साफ इन्कार कर दिया था। वह मालूखा की नाराजी बर्दाश्त नहीं कर सकता था क्योंकि वास्तव में वही उसका शुभ-चिन्तक था। वह दिन भर इसी समस्या को लेकर उलझता-बिखरता रहा। उसका किसी काम में मन नहीं लगा। हालांकि उसने रोज की तरह दुकान के सारे काम समय पर और ढंग से निपटा दिये थे। किसी काम पर उसमें चल रहे अन्तर्द्वन्द्व की परछाईं का कोई भी असर कहीं नजर नहीं आया। वह भारी मन से मालूखा को मनाने के रास्तों के बारे में सोचता रहा, परन्तु उसकी समझ में कोई भी कामयाब रास्ता नजर नहीं आया। वह दुःखी होकर, लाला की दुकान से चले जाने के बाद, अपने बिस्तर पर जा पड़ा। उन दोनों के बीच कोई संवाद नहीं हुआ। वह चुपचाप करवटें बदलता रहा और दीवार पर अपनी हर्षें जिजासी

भायं-भायं करता हुआ किसी जंगली पहाड़ी नाले-सा बहता रहा। कल्लू से नही रहा गया, वह पुनः बोला, "मालूखा, मुझे मुआफ कर दो। परन्तु खुदा के लिए मुझसे कुछ बोलो। चाहे मुझे गाली दो और मुझे मारो, पर बोलो अवश्य! तुम्हारे बिना मेरा इस ससार मे कौन है? ''कोई भी नही, मालूखा, कोई भी नही।'' वह अचानक फफक पड़ा। उसका रुदन दिग्भ्रमित होकर अंधेरे की दीवारो से जा टकराया।

मालूखा अब और अपने को नहीं रोक सका। वह गुस्से मे था अत तेज स्वर मे ताना देते हुए बोला, "मालूखा, मुसलमान है।"

कल्लू का रुदन एकदम थम गया। उसने आज तक नही सोचा था कि वह हिन्दू है और मालूखा मुसलमान! ये हिन्दू-मुसलमान का प्रश्न उसके दिमाग मे कैसे और क्यो कर उठा? कल्लू ने धीमे स्वर मे कहा, "तुम मुझे इस तरह गाली देना चाहते हो तो जरूर दो, तुम मेरे से बहुत बड़े हो, मैं तुम्हे जवाब नही दूगा।"

"बनाते हो।" आग की लपटें धुए मे बदलने लगी।

"नही, बडे भाई, कभी नही! मैं तुम्हें क्यो बनाने लगा। न मैं मदिर जा पाता हूं और न तुम मस्जिद! न मुझ पर आरती आती है और न तुम पर नमाज। फिर मैं कैसे हिन्दू हुआ और तुम कैसे मुसलमान? ''हमारा कैसा धर्म और कैसी जाति? ''तमाम गरीबो का एक ही धर्म है और एक ही जाति है। जानते हो, वह क्या है?"

"क्या है?" अचानक मालूखा के मुख से यह वाक्य फुटबॉल की तरह उछल कर कल्लू के मैदान मे आ गिरा। कल्लू ने सहजता के साथ उत्तर दिया, "मानव-धर्म और मानव-जाति। ''हम सिर्फ मानव हैं, मानव के अलावा और कुछ नही। मालूखा, मेरी बात का विश्वास करो।"

मालूखा का हृदय बहुत कोमल है। वह कभी किसी के दुःख-दर्द को बर्दाश्त नही कर सकता। उसमे तर्क-जिरह करने का माद्दा भी नही है अत उसने सहज ही इन तर्कों के सामने हथियार डाल दिये। वह सीधा मूल बात पर आ गया और खखारकर कहने लगा, "तुमने मेरी छोटी-सी भेंट को स्वीकार क्यो नहीं किया?"

"क्या तुम इसीलिए नाराज हो?"

"ऐसा ही समझो।" मालूखा ने जवाब दिया।

"तुमने मेरी मा को नहीं देखा।"

"नही।" मालूखा का मन आर्द्र हो उठा। वह मद्धिम स्वर मे कह रहा था, "मैंने कभी अपनी मा को भी नही देखा।"

"तभी।"

"तभी क्या?"

"मेरी मां ने मुझसे प्रतिज्ञा करवायी थी।"

"क्या ?"

"माता है, मा तुम्हो, परन्तु इसके साथ एक शर्त है !"

'क्या ?"

'तुम्हे मेरी यह कहानी सुननी होगी कि उसने यह क्यो और किमनि
था कि ..." वह कुछ रुककर बोला, "जो भी लो, वह मेहनत की कमाई से,
से नही।" कल्लू का कण्ठ भर आया था। उसके सामने उसकी मां आ खड़ी
थी। फटी धोती मे परन्तु स्वाभिमान और साहस से भरी। उसका रंग गे
था। उसके मुखमण्डल पर तेज था और नाक-नक्श मे आकर्षण। उसके होंठ ब
पतले थे और आखें बहुत बड़ी। उसकी बड़ी आखो मे हल्की-सी लालिमा थी औ
गहरी भावाभिव्यक्ति। वह पूछता, "मा, हम कोयले क्यो बीनते है ?"

वह भाव विह्वल होकर उसकी ओर देखती और मुस्कराने की चेष्टा क
कहती, 'बेटे, यह भी मेहनत का काम है।"

"तो स्टेशन के पास से क्यो नही कोयले उठाते हैं। वहा तो ढेर सारे कोयले
पड़े रहते हैं और हम बहुत जल्दी वहा से कोयले उठा सकते हैं।" कल्लू तर्क देता।

'नही, बेटे, हम वहा से कोयले नही बीन सकते हैं।"

"क्यो, मा ?—वहां से और भी तो कोयले बीनते है।"

'बेटे, वह रेलवे की सम्पत्ति है। वहां से कोयले उठाना जुर्म है।" वह उसे
समझाती।

"जुर्म क्या होता है, मा ?" कल्लू जिज्ञासाभिभूत होकर सहज प्रश्न करता
और अपनी मा की बड़ी-बड़ी आखो मे अपलक झाकने लगता। उसे लगता कि मा
की आखें अन्दर ही अन्दर पिघल उठी हैं और वह कोशिश करके उनको बाहर
आने से रोक रही है। वह कुछ देर मौन रहती। उसके होठ काप रहे होते। जैसे
वह कुछ कहना चाह रही हो परन्तु वह कुछ कह नही पा रही हो।

"मा, आप बोलती क्यो नही हैं ?" कल्लू मा की चुप्पी से घबरा कर कहता।

"क्या बोलू, बेटे ?" वह टालना चाहती।

'जुर्म क्या होता है ?" कल्लू दोहराता।

वह क्या बताये कि जुर्म क्या होता है। फिर भी वह कुछ सोच कर जवाब
ती, "कानून के विरुद्ध काम करना।"

"कानून क्या होता है ?"

"कानून क्या होता है ?" उसकी मां ने मन ही मन मुस्कुराया और सामने की
देखने लगी। सोचने लगी कि वह उसे कैसे समझाये और उसके बारे मे क्या
। आकाश मे एक बड़ा टुकड़ा खण्डिता नायिका की भूमिका मे मुस्करा
। वह कहने लगी, "कानून वह होता है जो सरकार बनाती है।"

"सरकार क्यो बनाती है ?" कल्लू ने फिर प्रश्न

उसकी निगाह दो कोयलों पर पड़ गई। वह भाग कर उनको उठा लाया और मां की झोली में उन्हें डाल कर उसकी ओर मुस्कराता हुआ देखने लगा।

मां ने सोचा कि अब वह अपने प्रश्न को भूल गया है। परन्तु ऐसा नहीं हुआ। आखिर उसके पुनः प्रश्न करने पर उसे कहना पड़ा, "हमारी स्वतन्त्रता, सुरक्षा और विकास के लिये सरकार कानून बनाती है, ताकि सब उन्नति के समान अवसर पा सकें और कोई किसी के विकास में बाधक नहीं बन सके।"

"परन्तु मां, हम तो बहुत गरीब हैं।" क्या सरकार गरीबों की सुरक्षा और उन्नति के लिये कानून नहीं बनाती है।" कल्लू ने सिर खुजाते हुए प्रश्न किया।

"बनाती है।"

"फिर हम कोयले ही क्यों बीनते घूमते हैं?"

"यह भी एक काम है, बेटे।"

"क्या खाक काम है, मां, इसमें दो वक्त भी हम भरपेट खाना नहीं खा सकते हैं और न रहने को घर पाते हैं। खुले आसमान के नीचे सोते हैं और दर-ब-दर की ठोकरें खाते, मारे-मारे घूमते हैं।···कुछ लोग तो मौज से जीते हैं। उनके बच्चे नये से नये कपड़े पहनते हैं और खूब खेलते हैं। वे स्कूल भी पढ़ने जाते हैं।' परन्तु हम तो'' मां ' क्या कानून में हमें भूखों मरने की सुरक्षा मिलती है?" कल्लू में एक नेता के स्वर गूंज रहे थे। उसके सामने नेता आ खड़ा हुआ था। वह उसकी शब्दावली दोहरा रहा था।

"तुझे यह सब किसने सिखाया, रे?" साश्चर्य उसकी मां ने उससे पूछा।

कल्लू के स्वरों में विद्रोह था और उसकी चेहरे की आकृति से आक्रोश झलक रहा था। उसने अत्यन्त आत्मविश्वास के साथ कहा, "नेताजी ने।"

"कौन से नेताजी ने?"

"क्या तू भूल गई, मां?"

"क्या?"

"तूने ही तो मुझे उन आदमियों के साथ भेजा था।'' मैं ट्रक में बैठ कर गया था। ''याद आया—लगातार कई दिनों तक ''बड़ा मजा आया था। सारे दिन हम ट्रक में घूमते रहे और नारे लगाते रहे—जीतेगा भाई, जीतेगा,—हाथी वाला जीतेगा।'' वोट किसको दोगे—रामदयाल टोपीवाले को।'' गली-गली में शोर है—कालीचरन चोर है।" कल्लू जोर-जोर से नारे लगाने लगा। उसके छोटे-छोटे हाथ हवा में घूसा तानने लगे। वह बहुत खुश होकर बता रहा था, "मां नेताजी अपनी टोपी सीधी करते हुए कह रहे थे—लगातार हमारा देश गरीब होता जा रहा है। गरीबों की संख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है। उनको न दोनों वक्त के लिए भोजन है, न पहनने को कपड़े हैं और न रहने को घर। आप देख रहे हैं, जिन बच्चों की लिखने-पढ़ने की उम्र है, वे स्कूल जाने की बजाय होटल, रेस्त्रां आदि

में काम कर रहे हैं या भीख माग रहे हैं। कानून गरीबों की रक्षा के लिए नहीं, अमीरों की सुरक्षा के लिए है और उनकी उन्नति के लिये।"

कल्लू धाराप्रवाह बिना अर्थ समझे बोलता रहा। उसकी स्मरण शक्ति गजब की है। एक बार सुनने के बाद वह ज्यों का त्यों उसे सुना सकता है।

उसकी मां चुप हो गई। उसी ने तो उसे भेजा था। कटोरी, उसके साथ की थी। उसके पास आकर बोली थी, "कल्लू की मां, तू अपने लाडले को चुनाव तक पार्टी वालों को सौंप दे। उसको खाना मिलेगा और साथ में पांच रुपये रोज अलग।"

"कहां जाना होगा उसे ?"

"वे उसे ट्रक में ले जायेंगे और वापस घर छोड़ जायेंगे।"'कुछ दिनों तक खासा काम चल जायेगा। कल्लू भरपेट खाना खा सकेगा। मैं भी तो अपने लाडले को भेज रही हूं।" कटोरी ने बड़ी आत्मीयता के साथ कहा।

वह मान गई। फिर वह कुछ नहीं बोली। चुपचाप अपने कथन की अर्थहीनता पर विचारती रही। उसने जो कुछ कहा था, बिना सोचे समझे कहा था और यह सोच कर कहा था कि उसे कल्लू को चुप करना था। उससे कल्लू तर्क करेगा, यह तो उसने सोचा ही नहीं था। वह भी कल्लू को स्कूल भेजना चाहती थी परन्तु परिस्थितिवश वह कुछ नहीं कर पा रही थी। उसे चुप देख कर वह बोला, "मां''' मां ' आप दुःखी हो रही हैं।'' मुझे कुछ नहीं चाहिए मां।'''काश ! हमेशा चुनाव चलते रहें तो कम से कम हमें दो वक्त खाना मिल सके।"

वह कुछ नहीं बोली। एकदम सुस्त हो गई। वह अकेली कर भी क्या कर सकती थी ? उसने लाख चाहा परन्तु कुछ नहीं हो सका। अपनी मां को सुस्त और दुःखी देख कर वह गुमसुम रहने लगा। सोचने बोलने से क्या होना है ? परचूने लाला ही खरीदता था। तोल-मोल का कोई खास प्रश्न ही नहीं उठता था। लाला जो देता, वे उसी में सब्र कर लेते थे। चूंकि मौके-ब-मौके लाला उनको दो-चार रुपये उधार दे दिया करता था।

उस संध्या को उनके पास कुछ नहीं था। सुबह से उसकी मां को ज्वर था। वह मां को छोड़ कर कहीं नहीं जा सका। हार कर वह लाला के पास पहुंचा। दुर्भाग्य से उस दिन लाला की दुकान बन्द थी। वह कटोरी के पास पहुंचा। वह कटोरी को ताई से सम्बोधित करता था। कटोरी ने उस समय मदद कर दी थी। उसकी मां की तबीयत और खराब हो गई थी। कटोरी ने उसे समझाया था कि वह उसके लड़के के साथ चला जावे, वह उसकी मां को अस्पताल ले जायेगी। जब उसने पूछा कि उसे क्या करना होगा तब कटोरी ने जवाब दिया, "यह मत पूछो, मेरे लाल। जो वह करे, वही तू भी करना।" उसके स्वर में निराशा थी।

"वह क्या करता है ?"

कटोरी कुछ देर तक सोचती रह गई। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि वह उसे, क्या बताये और कैसे बताये? फिर भी उसने मन कड़ा करके उससे कह दिया, "हम गरीब हैं, मेरे लाल, और सबसे गरीब। हमारा कोई मान-सम्मान नहीं है। हमें कुछ भी करने में लज्जा नहीं आनी चाहिए।···आजकल भीख मांगने वाले भी लखपति हैं। यह भी एक व्यवसाय है और व्यवसायों की तरह। शुरू-शुरू में थोड़ी-सी झिझक लगती है परन्तु धीरे-धीरे झिझकी दूर हो जाती है। तो तुझे मेरे लाल,···।"

"ताई, भीख मांगने जाना होगा।"

"नहीं, नया व्यवसाय शुरू करने जाना होगा।" कटोरी ने दृढ़ता से कहा।

"यह मुझसे नहीं होगा, ताई।"

"क्यों नहीं होगा? जो भीख माग रहे हैं, वे भी इन्सान हैं···हमारी तुम्हारी तरह के इन्सान!···और जो भीख दे रहे हैं, वे बाहर से धन नहीं लाये हैं, उनकी तिजोरियों में हमारा-तुम्हारा धन बन्द है। यह बात दूसरी है कि वे आज मालिक बने हुए हैं और हम भिखारी।···परन्तु इसमें जरा-सी भी लज्जा-शर्म की बात नहीं है। हम कोई चोरी नहीं कर रहे हैं और न किसी से जोर जबर्दस्ती या छीना झपटी कर रहे हैं।···हम सम्मान से माग रहे हैं और जो दे रहे हैं या नहीं दे रहे हैं, उनका हृदय परिवर्तन करना चाहते हैं, यह बतला-समझा कर कि हम उनके भाई हैं और हमारी इस दयनीय स्थिति के लिए हमारे से अधिक वे जिम्मेदार हैं।" कटोरी ने उन सारे तर्कों को कल्लू के गले उतारने में जरा-सी भी भूल नहीं की थी, जिन्हें पहली मर्तबा उसे व उसके पुत्र को भिखारियों के नेता बाबा हरिहर-दास ने भीख मागने के व्यवसाय का अर्थ व समाज शास्त्र समझाते हुए बताये थे। वह रटी-रटायी भाषा जरूर बोल रही थी परन्तु उसके पीछे अब तक उसका अर्थ-संसार भी था, जो उसे भीख मागने के व्यवसाय में हिस्सा लेने से अपने आप समझ में आने लगा था। वह कह रही थी, "दरअसल हम उनसे भीख नहीं, अपना हिस्सा विनम्रता से माग रहे हैं।···यह चन्दा क्या है, कल्लू—सभ्य लोगों का भीख मांगने का आधुनिक तरीका। चन्दे में लाखों का घोटाला ही जाता है परन्तु भीख मागना, बिना किसी के मन को जरा-सा आघात पहुचाये, हृदय-परिवर्तन का शुरू आध्यात्मिक आन्दोलन है। इससे समाज में दया, करुणा, प्यार आदि भाव सदैव जागृत रहते हैं।···तू कुछ मत सोच, मेरे लाल। तेरी मां बीमार है, उसकी दवा-दारू के लिए भी पैसों की जरूरत होगी। जा, मेरे लाल, जा।"

कल्लू मां की मूर्ति सामने आते ही दहल गया। उसको अपनी मां की बहुत चिन्ता है। उसके लिए वह कुछ भी कर सकता है। वह तुरन्त चुपचाप चल दिया।

इससे पहले उसने भीख मागने वाले देखे अवश्य थे परन्तु उसने कभी उनको

और ध्यान नहीं दिया था। यों कल्लू ज्यादा मुतासिर होता कि उसका ध्यान न भी उसकी ओर गया ही नहीं था। कटोरी का सहारा उसे समझा रहा था, "यहां हम भिखारियों की हदें निर्धारित हैं। भीख मांगने में जो कुछ मिलता है, उसका कुछ भाग बाबा हरिहरदास को देना होगा।...वह मां तै कर लेगी।...आज तू यहीं हद में ही भीख मांगना।... पहले तू मुझे देख ले कि मैं भीख कैसे मांगता हूं और फिर तू भी वैसे ही भीख मांगना।"

कल्लू की समझ में कुछ नहीं आ रहा था। उसका सारा ध्यान अपनी बीमार मां पर था। उसे उसकी दवा-दारू के लिए रुपये-पैसों की जरूरत थी। वह उसे कैसे भी मिलें उसे मिलने ही चाहिए, उसकी सारी सोच-शक्ति वहां केन्द्रित थी।

वह कल्लू को किम्कर्त्तव्य विमूढ़-सा देख कर बाबा हरिहरदास से प्राप्त मंत्र-दीक्षा को उत्था करने लगा, "कल्लू, तू घबरा रहा है। इसमें घबराने की कोई बात नहीं है। भीख मांगना एक व्यावसायिक कला है। तू दाता या दात्री के चेहरे की ओर देख कर निर्णय कर सकेगा कि वह किस गुत्थी में पड़ा हुआ है। आज-कल प्राय हरेक ही किसी-न-किसी गुत्थी में डूबा हुआ है। तू उसके प्रति सहानुभूति दरसाना और कहना सेठ या माई वह जो भी हो, इस वक्त तू परेशान है। जितना सोचता है उतना ही उलझ रहा है, परन्तु तेरी परेशानियों के दिन शीघ्र ही खतम हो रहे हैं और तू शीघ्र उन परेशानियों पर अचानक विजय पा सकेगा।"

यह सुनकर कल्लू को हंसी आ गई, क्योंकि इस दरम्यान वह अपने को दाता की भूमिका में ले आया था। उसने जिस तरह से भीख मांगने में सधी-सधाई और सुथरी भाषा का प्रयोग किया था उससे उसके मन में एक प्रश्न उठा, जिसे उसने उसके सामने रख दिया, 'दाता या दात्री यह नहीं देखेगा या सोचेगा कि उसके प्रति भविष्यवाणी करने वाला कितनी छोटी अवस्था का है! उसे उसकी बातों पर कैसे विश्वास कर लेना चाहिए?"

"अवश्य, कल्लू वह अवश्य सोचेगा या सोचेगी।" इतना कहने के बाद तुरन्त उसने दो श्लोक उच्च स्वर में पढ़ दिये और पूछा, "तू इसका अर्थ जानता है।"

"नहीं।" कल्लू ने घबरा कर कहा।

इस बार उसके हंसने की बारी थी। उसने जोर का ठहाका लगाया और हंसी थमने पर वह कहने लगा, "मैं भी नहीं जानता, कल्लू।"

"फिर?" कल्लू के मन में जिज्ञासा पैदा हुई। उसने अपने चारों ओर देखा। अभी सड़क चलने में रफ्तार नहीं पकड़ पाई थी—इक्का-दुक्का ही उस ओर से गुजर रहा था।

"नहीं, मैंने जो कुछ कहा है, उसका अर्थ मैं भी नहीं जानता हूं—परन्तु मुझे

बाबा हरिहरदास ने यह रटा दिया है ताकि मुझ जैसे बालक को इतनी शुद्ध तथा उच्च हिन्दी-संस्कृत बोलना देख कर दाता या दाती का मन पसीज उठे और उसे हम भी परमात्मा का करिश्मा लगें।" वह प्रवाह में कहे जा रहा था।

"मुझसे यह सब नहीं होगा!" कल्लू ने हथियार डालने की घोषणा कर दी।

"मैंने भी यही सोचा था, कल्लू, जैसे तूने कहा है। यह सब मेरी समझ में नहीं आया था। परन्तु धीरे-धीरे मेरी सब समझ में आने लगा। बाबा के शब्दों में समझ की तीसरी दृष्टि तब खुलती है, जब हमें अनबूझ मंत्रों से झड़बेरी के गिरे बेरों के समान आमदनी होने लगती है। पैसा जैसे-जैसे हाथ में आने लगता है वैसे ही वैसे हम अपने व्यवसाय को सम्मान की दृष्टि से देखने लगते हैं और हमारा आत्मविश्वास पुख्ता होने लगता है।···तू भी सब समझ जायेगा।···दूसरे की जेब से पैसा निकालने की कला में तुझे भी अपने अनुभवों से महारत हासिल होने लगेगी और तू मांगने की कला में जरूर कोई नया प्रयोग कर सकेगा।" इसके साथ उसने कल्लू के चेहरे पर आंख गड़ायी और कुछ देर तक उसके चेहरे का निरीक्षण करने के बाद उसने गहरी सांस लेकर कहा, "तेरा चेहरा भावों से भरा है। तुझे बाबा के शब्दों में परमात्मा ने भीख मांगने के लिए ही भेजा है। तेरा चेहरा निश्छल है और हरेक स्त्री-पुरुष को वह सहज ही अपनी ओर खींच सकता है।"

कल्लू को वह मायावी लगने लगा—अपनी उम्र से बहुत बड़ा आदमी और वह भी अपनी भाषा में पारंगत! उसका मस्तिष्क रहस्य से भरने लगा था। वह कह रहा था, "छोड़ो इस लेक्चरबाजी की उद्घाटनी रस्म को, तू अब मेरे पीछे-पीछे आ-जा और देख व सुन कि मैं कैसे भीख मांगता हूं।"

वह भीख मांगने लगा। कल्लू ने देखा कि वास्तव में उसमें भीख मांगने का हुनर है। जैसे-जैसे वह पैसे समेटने लगा वैसे ही वैसे उसमें इस हुनर को आत्मसात करने की जबर्दस्त प्रेरणा मिलती गई। एक अवसर वह भी आया जब वह उससे काफी पीछे रह गया और अपने पास से गुजरने वाली युवती से कह उठा, "तेरा मनचीता आज अवश्य होकर रहेगा।···आज कामयाबी तेरे पांव चूमेगी।··· इस भक्त का आशीर्वाद खाली नहीं जायेगा।"

उस युवती ने उसकी ओर पलट कर नहीं देखा। वह चिढ़ कर बोली, "ईश्वर जाने इस देश को क्या हो गया है कि सुबह से मंगते घेरने लगते हैं।··· ऐ लड़के, भीख नहीं,···कुछ काम करो। भीख मांगना पाप है और तू सोते-उठते ही जड़ पाप में लग गया है।···अभी तेरी उम्र क्या है? जा भाग,··· कुछ काम कर।" वह युवती उसे बेतरह से फटकारती हुई सामने की आलीशान पांच मंजिला बिल्डिंग में चली गई। कल्लू उस बिल्डिंग की सीढ़ियों पर फटकार खाकर बैठ गया। उसको मालूम पड़ा कि यह धंधा हिकारत और जलालत भरा है। वह

युवती उसे [illegible] हुई सेठों से उस दिन [illegible] गई। उसने [illegible] था। [illegible] कि वह [illegible] नहीं सकेगा। तो फिर वह क्या करता? वह [illegible] था [illegible] करता? उसके सामने [illegible] हो गया। अब वह ठीक स्थान पर आ पहुंचा था जहां से उसे शरण [illegible] थे और विश्राम के लिए कोई संकेत नहीं था। आगे वह किधर जाये, वह यह नहीं जान पा रहा था। उसे कौन मार्ग बतायेगा? कौन [illegible] उसका दुःख बांटा? दिमाग ने [illegible] जवाब दिया कि हाथ-पांवों ने भी धरना शुरू कर दिया। वह अचानक थकान से भर गया। रह-रह उसके दिलो-दिमाग में उस ऊंची ऐड़ी वाली युवती की फटकार अनुभूत रही थी। इसीलिए उसने ठीक कहा था। उसे कोई काम करना चाहिए। पर कौन देता उसको काम? क्या कर सकेगा वह काम? तब वह क्या करे? यही सोचता हुआ वह भूखा-प्यासा वहीं सीढ़ियों पर सो गया था। दोपहर गुजर रही थी परन्तु उसे कुछ पता नहीं था।

अचानक वह हड़बड़ा कर उठा। वह क्या देखता है कि वही ऊंची ऐड़ी वाली मेम साहिबा उसके सामने खड़ी है। वह डर गया। क्या यहां सोना अपराध है? पता नहीं उसे कैसे नींद आ गई थी। वह उठना चाहता था परन्तु उसमें इतनी हिम्मत नहीं थी कि वह उठ कर भाग खड़ा हो। वह अवश्य फिर उसे डांट-फटकारेगी।' उसने सोच लिया कि उसे जो करना है, करे, वह चुपचाप, बिना उसकी ओर देखे, सह लेगा।

"क्यों रे, नन्हें ज्योतिषी, तूने खाना खाया क्या?"

"नहीं।" वास्तव में उसने सुबह से कुछ नहीं खाया था और इस वक्त खाने की बात सुन कर उसमें, जठरानल तेज हो जानी चाहिए थी। अचरज, खाने के नाम से उसमें ऐसी कोई हरकत पैदा नहीं हुई जो उसकी भूख को व्यक्त कर सकती। वह पूछ रही थी, "खायेगा।"

"नहीं।" कल्लू ने दृढ़ता से उत्तर दिया।

"क्यों?"

"मेरी मां बीमार है, उसकी दवा-दारू के लिए मेरे पास एक भी पैसा नहीं है।" कल्लू का स्वर पिघल गया।

"तेरा बाप तो होगा।"

"नहीं।"

"और कोई बड़ा।"

"नहीं।" कल्लू ने जड़ता की अभिव्यक्ति दी।

वह युवती उसके चेहरे की ओर देख रही थी और वह नीचे जाती सीढ़ियों की ओर, आत्मग्लानि से लबालब भरा, टकटकी बांधे देख रहा था और सोच रहा था कि वह उसके सामने से हटे तो वह भाग खड़ा हो [illegible] घर पहुंच कर सांस

थे ! उसे घर नाम पर दया आ गई। उसका कौन-सा और कैसा घर ? उसकी मा तो सरकारी धर्मशाला में बीनरानी पुल के नीचे पड़ी है। जहां से भी, कभी-कभी पुलिस गश्त लेते हुए उन सबको गाली देती और मारती-पीटती भगा देती है।

"क्या बीमारी है, तुम्हारी मां को ?"

"तेज बुखार है।"

"इसलिए तुम भीख माग रहे हो।"

"नहीं।"

"तो क्या ज्योतिष विद्या जानते हो ? शायद यह तुम्हारा पुश्तैनी धधा होगा।" उस युवती ने कहा।

कल्लू चुप रहा। दरअसल वह उसका अर्थ ही नही समझा फिर वह हां-ना क्या कहे !

"कोई बात नही, नन्हे ज्योतिषी !" ऐसा कहते हुए उस युवती के चेहरे पर अनिच्छित प्रसन्नता फूट पड़ी, एकदम घने कुहरे से अचानक निकलते सूर्य की तरह। फिर भी कल्लू ने उसकी ओर नही देखा। वह सहमा हुआ था। भूलना उसे आता नहीं था। यादगार उसकी बहुत तेज थी। उस युवती ने मुस्कराते हुए उससे कहा, "नन्हे ज्योतिषी ···।"

"नहीं भिखारी।"

"खैर तुम जो कुछ भी हो, वह तुम जानो। परन्तु मेरा बहुत मुश्किल काम, जिसकी मुझे बिलकुल आशा नहीं थी, आज हो गया। मुझे नौकरी मिल गई थी। मेरी मा भी बीमार है।" वह नम स्वर में बोली।

"क्या !" इस बार कल्लू ने भरपूर दृष्टि से उसकी ओर देखा। वह युवती अपनी मा की उस नसीयत को याद कर रही थी, जिस पर से उसका विश्वास उठ गया था। उसकी मा ने आज चलते समय उसे अपनी नसीयत की याद दिलायी थी, "निराशा मृत्यु हैं, बेटी। तू तो इतनी पढ़ी लिखी है और इतना सारा ज्ञान होते पर तू हार रही और मैं,···देख तो रही है, इस असाध्य रोग से लड़ते हुए भी निराशा नही हू, जो रोग कुछ माह मे मुझे हमेशा-हमेशा के लिए निश्चित रूप से मिटा देगा।···फिर भी मेरी उसमें·· ऊपर वाले में···आस्था पहले से ज्यादा प्रखर हो रही है। जानती है कि क्यो ?"

"क्यो ?"

"क्योकि इस असाध्य रोग का भय मेरे मनोमस्तिष्क पर कतई नही है। मैं इतनी ही खुश हूं जितनी पहले थी और आखिरी सास तक रहूगी। बेटी, यह विश्वास ही है जो मौत मे जिन्दगी के स्थान भर देता है।·· पता नहीं, वह किस रूप में सामने आ जाये और तेरे जीवन मे अजूबा हो जाये।···पर होगा अवश्य बेटी, यह मेरा मन कहता है। ··और मेरे मरने से पहले ही होगा, तू देख

लेगा।"

"मम्मी'''प्लीज मम्मी ''आपको कुछ नहीं होगा।"

"तू होने से डरती है।" वह मुस्कराती और आगे कहने लगी, होनी होकर रहती है। हमें उसकी चिन्ता क्यों? उससे कैसा डर! डर 'वेटी' होने न होने के पहले जीवित रहते हुए मौत की जर-जर अवस्था को भोगने की वह अहम्य दास्तान है, जिसका अस्तित्व नहीं है, फिर भी उसे हम स्वीकारते हैं। वहम का इलाज तो हकीम लुकमान के पास भी नहीं है।'''जा बेटी, आज तेरा काम जरूर बनेगा।"

वह चुपचाप चल पड़ी। मां ने हर बार यही तो दोहराया था। उसमें अब कोई नवीनता व आकर्षण नहीं रह गया था।

इस वक्त उसे मां की बात और सामने बैठे नन्हे ज्योतिषी की बात रह-रह कर छेद रही थी। उसने अपने बटुए में से दस रुपये का नोट निकाला और उसकी ओर वह नोट बढ़ाते हुए बोली, "इस वक्त यही है।" वहां उसकी ओर देखे तेजी से सीढ़िया उतर गई।

कल्लू ठगा-सा रह गया। वह अवाक् था। अचरज से भरा। उसके पांव पर दस का नोट पड़ा हुआ था। दस का नोट उसके पास होना उसके लिए सातवें आश्चर्य से कम नहीं था। सचमुच में उसके पास दस का नोट है। उसने नोट को अच्छी तरह उलट-पुलट कर देखा और धीरे-धीरे उसमें जिजीविषा की लहरें हिलोरें लेने लगी। वह शायद वहीं से चीखना चाहता था और सारी दुनिया के अरब-खरब पतियों को यह बतलाना चाहता था कि वह चोर, लुच्चा, उठाई गिरा नहीं है, वह छत्रपति है।' '

दोपहरी ढलने की तैयारी कर रही थी। उसने चारों ओर देखा परन्तु उसे कहीं भी कटोरी का पुत्र, जिसके साथ वह वहां आया था, नजर नहीं आया। वह कहां गया! वह उसकी किधर तलाश करे। नहीं, अब उसके पास उसे तलाश करने का वक्त नहीं है। तलाश करते-करते कहीं उसकी मुट्ठी में दबा दस का नोट नहीं खिसक जाये। तब तो वह जरूर पागल हो जायेगा। आज पहली बार उसका ध्यान जेब पर गया। उसकी फटी कमीज में जेब नहीं थी। उसके निकर की जेब बेतरह से फटी हुई थी। उसे अनुभव हुआ कि जेब होना कितना जरूरी है। वह दौड़ते हुए पुराने पुल के पास पहुंच गया। वहां वह जरा रुका और उसने उमड़ आई सांस को थोड़ा-सा विश्राम दिया। उसने सामान्य होकर अपनी कमीज से ही अपना मुंह पोंछा और पुल के नीचे टाट पर सोयी पड़ी अपनी मां के पास आ खड़ा हुआ।

इस वक्त उसकी मां आराम से गहरी नींद में थी। उसने पहली बार अपनी मां को ध्यान से देखा। उसका पीतवर्णीय चेहरा बुखार के कारण मुर्झ...
वह चाहता था कि मां आप सोये तो वह मुट्ठी में दबे-छिपे दस के...

के सामने रख दे। शायद ही मां ने कभी दस का नोट अपने हाथ में लेकर देखा हो। मा भी चकित रह जायेगी।

"और कहीं पूछ लिया कि ये नोट कहां से आया तब !" कल्लू को यह सोचते ही पसीना आने लगा। वह क्या जवाब देगा ?"'ओह! तब तो '। उसे क्या करना चाहिये। वह दस का नोट मा को बताये या नही बताये। बताने से वह अपनी खुशी मे अपनी मा को सम्मिलित करना चाहता था और न बताने से वह प्रसन्नता का गला घुटता हुआ अनुभव कर रहा था। वह अजीब पसोपेश मे पड गया था। दस रुपये तो उसके लिये एक मुसीबत पैदा करने लगे थे। शनै-शनै सोच के इस चक्रव्यूह मे वह असहाय अभिमन्यु की नियति मे जुडता जा रहा था। उसके चारों ओर कौरवों के महारथी थे, जो जानते हुए अनर्थ करने मे सलग्न थे। न उन्हें पाप का डर था और न परिणाम का। वे योद्धा रौद्रताभिभूत होकर अपनी मर्यादा और युद्ध-धर्म को तिलाजलि देने पर आमादा थे। कहीं उसके साथ तो ऐसा नही होगा। वह भयाशका से वशीभूत होकर घबरा गया।

वह शीघ्र ही मायावी जाल से मुक्ति पाने की आशा से यह भी सोच गया कि मा को रुपये देने से लाभ क्या है ? उसे यह रुपया किस चीज पर खर्च करना है, वह यह तो नही जानता है। इसके लिये तो उसे कटोरी ताई की सहायता लेनी होगी। और उसने वही किया। कटोरी को उसकी पहली कमाई, पर जबर्दस्त आश्चर्य हो रहा था। इतनी कमाई तो अब कही जाकर, और वह भी रोज-रोज नहीं जब-तब पूरे दिन मे उसका पुत्र कर पाता था। उसने पहले ही दिन करिश्मा कर दिखाया। उसने बलैया लेते हुए प्रसन्नता मे कहा, "कल्लू, तू नसीब का धनी है। तुझे इस नये धंधे मे पहले ही दिन इतनी बडी रकम हाथ लग गई है और वह भी चद घण्टो मे।'' देख लेना तू इस धंधे मे एक दिन अच्छों-अच्छों को मात दे देगा।"

कल्लू चुप रहा। उसे तो इस समय अपनी मा की चिंता थी। वह कह रहा था, ताई, अब तो मा अच्छी हो जायेगी न !"

"हा मेरे लाल, अब तेरी मा अवश्य अच्छी हो जायेगी। सब प्रभु की लीला हैं। वह देता है तो छप्पर फाड़ कर देता हैं।"

"ताई, यह नोट आप ही रखें।"

"नहीं, तू रख।"

"नहीं ताई, मैं नही रखूगा।" कुछ सोच कर वह बोला, "रखूगा तो कहा ?" इसके साथ ही उसने निकर की दोनो जेबें उलट कर उसे दिखा दीं।

"मैं तेरी जेब सी दूगी।"

"नही ताई, मां पहले ही कई बार सी चुकी है और हार कर उसने भी इनका पिण्ड छोड दिया। अब ये जेबें ठीक नहीं हो सकती हैं, ताई। कपडा बहुत पुराना पड़ चुका और बेतरह से घिस चुका है।" "तो तेरी मा को दे दूगी। वह

को मत देना। उसे बताना भी नहीं।" कल्लू ऊपर से नीचे तक
भय था कि इससे मां का सर्व आहत'''हो जायेगा वह मां की ज़िद्
ाभिमान के प्रति जागरूकता को अच्छी तरह से जानता था। हो
 समय बाद, जब तक मां स्वस्थ हो जाये, और वह कुछ गुस्सा
छुपाते हुए उसे अनुमति दे दे। हालांकि उसे इसमें संदेह था।
ीं तेरी मां को दंगे नहीं दूगी।"
र कुछ कहूंगी भी नहीं।"
हीं कहूगी।"
साथ चलो, ताई।"

ा।"
क्या हुआ है ?" कटोरी ने चावल बीनते हुए कहा और कनखियों
 देखा।
ड़ी है।"
ोना अच्छा है। "मैं उसे डाक्टर को दिखा लाई हू, चिंता करने
ो है।"
ॉक्टर ने कहा है।"
ो वैद्य ने।"
ा।"
र याद करते हुए कटोरी ने कहा, "फुफ्फुस प्रदाह (न्यूमोनिया)।"
ता है ?"
जानती ' तू जान कर क्या करेगा।' 'वैद्य ने कहा था कि ठीक
करने की कोई बात नही है।" उसने दोहरा दिया।
प मेरे साथ चलें, ताई। कल्लू ने विनम्र-आग्रह किया। वह मां
ंस लेते हुए देख कर घबरा उठा था।"
' कुछ सोच कर उसने कहा तू पहुच, मैं आती हू। जरा चावल

ा। उसे लौटे हुए समय हो रहा था, परन्तु कटोरी नहीं आई।
ा ने आंख नहीं खोली थी। हां, वह अब पहले की तरह जोर-
 रही थी। उसका चेहरा शान्त और भाव शून्य था। दिन मे तो
क नही सोयी थी। कई बार पहले भी उसे बुखार आया था
ो खाट नहीं पकड़ी थी। वह मा को निश्शब्द और संज्ञा शून्य
 था। उसे अनायास ही डर लगने लगा।

संध्या डूब रही थी। हवा मे तेजी थी। उसने जैसे-तैसे करके घास-फूस से खडी की गई टूटी फूटी दीवार को मजबूती से बाध दिया और उसके सूराखों मे, जिनमे सर-सर सनसनाती हुई हवा वज्रप्रहार सी कर रही थी, फटे-पुराने लत्ते ठूस दिये थे। इससे हवा का आक्रामक रौद्र रूप बहुत कुछ निष्प्रभाव हो गया था।

रात हो उठी। अधेरी काली नागिन सी रात थी। वह पुल चूकि एकान्त मे पड़ता था अत उसके नीचे और दूर-दूर तक कही भी प्रकाश की किरण नजर नही आ रही थी। वह भयावह अधेरे को कैसे दूर करे! कटोरी अभी तक नही आई थी। जरूर उसे कोई खास काम हो गया होगा अन्यथा वह जरूर आती। उसे लगा जैसे उसकी मा ने सांस लेना बद कर दिया हो। वह बहुत ध्यान से, हालांकि उसे कुछ नजर नही आ रहा था, मां को देख रहा था। उसमे साहस नहीं था कि वह मा को पुकार कर जगा दे। कटोरी ताई ने बताया था कि सोना उसके स्वास्थ्य के लिये बहुत अच्छा है। इससे उसकी मा जल्दी ठीक होगी।

उसे याद आया कि उसने सुबह से कुछ नही खाया। उसको भयाशका के साथ भूख भी सताने लगी। यह कैसा विचित्र और प्राण लेवा बवण्डर उठा कि जिसने उसके अस्तित्व के खूटो को ही झकझोर डाला। वह दस का नोट भी कटोरी को दे आया था। उसने अपना सिर घुटनो मे दिया था और मन ही मन वह रो लेना चाहता था। कदाचित् रोने से उसका मन शान्त हो सके।

इसी समय कटोरी ने प्रवेश किया। वह कह रही थी, "क्यो रे, अपनी मा के पास अधेरा किये है।"

"क्या करू, ताई?"

"जा मेरे यहा से मोमबत्ती और माचिस ले आ।"

वह भागकर गया और आनन-फानन मे लौट आया। कटोरी ने मोमबत्ती जलाकर डिबरी तलाश की और कहा, "तू पहले यह भात खा ले। तेरी मा के लिए दूध लाई हू।—तू भात खाकर मेरे साथ चलता तो मैं इस डिबरी मे घासलेट डाल दूगी, ताकि रात मे रोशनी रह सके।—तू डरना नहीं। मैं पास मे ही हू। डर लगे तो मुझे बुला लेना।—समझा।"

बल्लू ने सिर हिला दिया।

जाते समय वह कहती गई कि यदि उसकी मा जागे नही तो जगाना नहीं। दूध पिलाने के लिये भी नही।

तो क्या मा भूखी रहेगी, वह यह प्रश्न करना ही चाहता था परन्तु वह यह प्रश्न नहीं कर सका। कटोरी जा चुकी थी। उसे याद आया कि उसे डिबरी मे घासलेट डलवाने कटोरी के साथ जाना था। वह भागकर कटोरी के घर से डिबरी भरवा कर ले आया। उसने मोमबत्ती बुझा दी। अब डिबरी की मद्धिम और पीली

वह रात गुजर गई। उसे पता नही कि वह कब सोया। जब उसकी आख खुली तब आकाश मे हल्की-हल्की रोशनी थी और मौसम एकदम शान्त था। मा के लिये रखा दूध बिल्ली पी रही थी। उसे यह देखकर बहुत गुस्सा आया परन्तु उसे गुस्से से कोई लाभ नहीं होता नजर नहीं आया। क्योंकि वह न तो मा को बिल्ली का झूठा दूध पिला सकता है और न वह स्वय पी सकता है अतः उसने उधर से आख फेर ली और बिल्ली को तल्लीनता से दूध पी जाने दिया।

भीख भी वह बराबर मागने जाता रहा। अब तक भीख मागने की कला मे उसने काफी विकास कर लिया था। वह कभी-कभी तो पन्द्रह मे बीस रुपये तक लाने लगा था। उसे अपने नये धधे मे सन्तोष हो चला था। वह धीरे-धीरे मानो अपनी खोयी हुई प्रसन्नता को लौटता हुआ अनुभव कर रहा था।

मा ने आखिर उससे पूछ ही लिया, "तू इतने पैसे कहा से लाता है?"

कल्लू चुप रहा।

उसको हल्का-सा सन्देह हुआ वह पुनः अपने प्रश्न को दोहरा उठी। कल्लू पुनः मौन रह गया। वह जवाब क्या दे और कैसे दे!···वह भीख मागता है, यह कैसे कह दे। उसने लाख चाहा कि वह इस प्रश्न को आया-गया कर दे परन्तु ऐसा नही हो सका। मा चीख रही थी, "बोलता क्यो नही है?—क्या तेरे मुह मे जुबान नही है!—क्या तू चोरी करने लगा है?"

"नहीं, मां।"

"तो क्या जेबकतरा हो गया है?"

"नहीं, मा।"

"तो क्या तेरी लाटरी खुल गई है?"

"नही, मा।"

"तो क्या तुझे पडा हुआ धन मिल गया है?"

"नहीं, मा।"

"तो क्या हुआ है?" उसने दीर्घ निश्वास छोड़कर पूछा।

"कुछ नही, मा।"

"कुछ क्या नही रे।"

कल्लू निश्शब्द हो गया।

"जवाब क्यों नहीं देता?"

"क्या जवाब दू, मां?" वह हारकर कहता।

"जो भी हो, दे। पर दे जरूर।"

"कुछ भी नहीं है।"

"क्या कुछ नहीं है—जवाब या कुछ और।"

"कुछ भी समझ, मां,—परन्तु मुझे गलत मत समझना।

सरकार के सामने अराजकता की समस्या है आवास के प्रबंध की समस्या है, शिक्षणालयों पर शोषण का । दें, इसकी समस्या है और···मतों की समस्या है। परन्तु हमने, जिनकी संख्या करोड़ों में है, सरकार को इन सभी समस्याओं से मुक्त कर रखा है। न हम आन्दोलन चलाने की धमकी देकर सरकार को परेशान करते हैं और न राजनीति में भंवर ही पैदा करते हैं। हम सारी दुनिया के अमन चैन की कामना करते हैं। ' धर्म के नाम पर दंगे हो रहे हैं,···आध्यात्मिक गुरुओं की नापाक करतूतें और चोटें सामने आ रही हैं। समाज सेवक अपनी सेवा कराने के ढोंग में लिप्त हैं। जब नदी ही अपना पानी पीने लगे और जब वृक्ष ही अपना फल खाने लगे तब मानव के दुःख का अहसास कर पाना मुश्किल है।··· मित्रों, अपने प्रति आश्रित बनो और दुनिया को दलदल में से निकालने के लिये कामना करो। ···यही सच्ची सेवा है, सच्चा धर्म है और सच्ची पूजा अर्चना है।··· जीवन की सार्थकता है।"

तो क्या ये सब बातें निरर्थक हैं। क्या कोयला बीन कर अधपेट रहने से मान-सम्मान का अनुभव होता था? मां को पुलिस पकड़ ले गई थी। उस पर चोरी का इलजाम लगाया गया था। तब मां कितनी गिड़गिड़ायी और रोयी थी। उसने अपना माथा पीट लिया था। जब वह दो दिन बाद छोड़ दी गई थी तब वह कैसे पागलों की तरह रात दिन रोती रही थी। वह न कुछ खाती थी और न कुछ बोलती थी। उसे कटोरी ने ही सम्भाला था। वह निर्दोष थी। दो दिन बाद भी उसे निर्दोष पाकर छोड़ दिया गया था, चोरी का पता चल गया था। चोर कहीं बाहर का नहीं था, चोर स्वयं उसका बड़ा लड़का था।

कल्लू का मन भारी हो उठा। वह मां के दुःख से आर्द्र हो उठा। अन्ततोगत्वा उसकी मां स्वाभिमानी है और नेक राह को पसन्द करने वाली। उसके अलावा उसका कौन है? वह उसी के लिये दुःख झेल रही है और आंधियों का सामना कर रही है। वह यह सोचता हुआ पत्थर से टकराया और गिरते-गिरते बचा।

"कौन ?" परछाईं बनी मां चौंकी।

"मां, मैं हूं तेरा भिखारी बेटा। क्या मुझे तू मुआफ नहीं करेगी?" "मेरे से गलती हो गई है, अब कभी नहीं होगी।" कल्लू ने उसकी ओर बढ़ते हुए अतीवार्द्र स्वर में पिघले मोम के मानिन्द कहा और उसके पास में आकर बैठ गया।

उसका मौन फर्श पर गिरकर बिखरे कांच के समान बिखर गया। दिशाओं में उसका कम्पन स्पष्ट अनुभव होने लगा। वह उसे अपनी गोद में लेकर रो पड़ी। सिसकियों का बांध रोके नहीं रुका। उसकी ममता पिघल उठी।

"मां, मां रो—रो ना, मां, रो मत।···मैं कितना बुरा हूं, मां···अपनी मां के मन को दुखाता हूं। · उसे पीड़ा पहुंचाता हूं।" कल्लू अपने आंसू नहीं रोक सक

था। आखिर वह अभी नन्हा बालक ही तो था ! उसकी अवस्था ही क्या थी ! वह दुनिया के बारे में जानता ही क्या था ! उसका क्रन्दन भरा स्वर उसके अन्तर्मन को विगलित कर उठा। वह कहने लगी, "मेरे बेटे, मैंने तुझे नहीं, अपने को मारा है। ···लेकिन मेरे बच्चे, काश ! धरती फट जाती और मैं उसमें समा सकती !—ओह ! तूने यह क्या किया रे ?"

"अब नहीं करूगा।—कभी नहीं करूंगा· कभी भी नहीं।" वह हकलाते हुए कह रहा था।

"क्यों ?" उसके आसू थम चुके थे।

"तू कहती है तो, मा।"

"तू नहीं कहता, रे ?"

"क्या, मा ?"

"कि भीख मागना जघन्य पाप है।"

"होगा।"

"क्या होगा ?"

"जघन्य पाप।"

"नहीं, रे, तू नहीं समझेगा।"

"क्या, मां ?"

"जो मैं कहूंगी।"

"क्यों, मां ?"

"तू अभी बहुत छोटा है।"

परन्तु समझाने-समझने की जरूरत ही कहां है, मा। मैं बिना समझे ही समझ गया कि भीख नहीं मागनी।···और कभी नही मागनी, चाहे भूखा ही मरना पड जाये।" कल्लू सहज होकर कह रहा था। उस समय चारो ओर अधकार बढ़ चला था।

"नहीं, रे। इस समझने से काम नही चलता।···तूने भीख मागना शुरु किया तो उसके अर्थ-संसार का भी तुझे ज्ञान हुआ। ···उसी का यह नतीजा था कि तू भीख मागने के संबंध मे असमझे ही तर्क पर तर्क देने लगा था।" मां ने धीमे-धीमे अपनी बात उल्था करनी शुरू की थी। इसी से तो उसके मन को गहरी ठेस पहुंची थी कि उसके जेहन में भीख मागने का विष फैल रहा था। उस विष ने अपना काम शुरू कर दिया था। इसके साथ ही उसने यह भी सोचा था कि ज्यादा से ज्यादा वह चपरासी बन जायेगा या किसी दूकान पर नौकर। और यदि बीच में ही वह मर गई तो उसका लाडला चोर-उचक्का, आवारा, गुण्डा, भिखारी आदि कुछ भी बन सकता है। तब उसे कौन रोकने-टोकने वाला होगा। यह विचार उसे बेतरह से झकझोरने लगा। क्या वास्तव में मनुष्य बनने से कुछ

मन गवारा है ? वह आगे पर सोचते हुए ठहर गई थी। क्या सोचा था, क्या हुआ ? अनगढ़ धागों के बीच में वह निरन्तर धंसती जाती रही। उसने क्या किया ? ...लेकिन इसका यह अर्थ तो नहीं है कि वह अपने लाड़ले को पाक रास्ते पर न डाले। अपनी ओर से तो वह आज तक पाक व बेगुनाह है। उसने अपने को कच्ची भावुकता के भंवर में पड़ने से बचाते हुए कहा, "भीख मांगने के खिलाफ भी तर्क हैं, मेरे बेटे।...यह निर्णय अब तुझे ही करना होगा कि तुझे क्या पसंद है। जानती हूं कि तू अपने निर्णय करने की अक्ल नहीं रखता है। फिर भी, मैं यह खतरा लेने के लिए तैयार हूं।"

"मां, तू व्यर्थ में परेशान हो रही है। मैंने निर्णय ले लिया कि मैं अब कभी भीख नहीं मांगूगा।" कल्लू ने कहा।

"बेटे, मांगना जीवन की सबसे बड़ी कमजोरी है। जीवन का अर्थ है दूसरों के लिए जीना।—मांगने से मन का विकास रुकता है और व्यक्ति पराश्रित हो जाता है। 'सवाल पैसे कमाने का नहीं। सवाल जिन्दगी का है कि उसे कैसे सम्मान से जी सकें।' 'दूसरे के आगे हाथ पसारने का अर्थ है सरेआम सम्मान की हत्या करना।' 'भीख मांगना व्यवसाय नहीं है, क्योंकि उससे उत्पादन नहीं होता है।" उसकी मां बराबर रुक-रुक कर अपनी बात कहती गई। उसका मन भारी हो चला था। वह अपने में थकी हुई और अव्यवस्थित-सी महसूस कर रही थी। सिर पर से उसकी धोती काफी फटी हुई थी और उसके नंगे पांव की ऐड़ी से जहां-तहां से खून निकल कर जम गया था। उसने बहुत ध्यान से कल्लू की ओर देखा और उसे ऐसा अनुभव हुआ जैसे वह कुछ नहीं समझ पाया हो।

"मां, तू मुझे कुछ मत समझा, मैं भीख कभी नहीं मांगूगा।"

उसकी मां ने जैसे कुछ सुना ही नहीं। वह अपने को अन्दर से समेटती हुई खखार कर आगे कहने लगी, "मन को शक्ति देने से मिलती है। दूसरों से कम से कम लेना पड़े और उन्हें अधिक से अधिक देना पड़े, इससे मन नियंत्रित हो प्रसन्नता का अनुभव करता है। हम सब जो कुछ रहे हैं, वह प्रसन्नता ही तो है। आज हमारे बीच में प्रसन्नता नहीं रही है, क्योंकि हम एक-दूसरे से उसकी प्रसन्नता छीन लेने की साजिश में मशगूल हैं। इस छीना-झपटी का ही यह नतीजा है कि नजदीक से नजदीक के रिश्ते ढहते जा रहे हैं और इन्सान इन्सान होने से इनकार करने से नहीं घबरा रहा है।' बेटे, तू अभी यह नहीं समझेगा। ...परन्तु मैं नहीं चाहती कि तू जब ये सब समझने के लायक हो तब तेरे पास सभलने का वक्त ही न रहे।...मैं चाहती हूं कि तू अच्छा इन्सान बने, पाक और नेक होकर रहे और सारा जीवन ईमानदारी और कड़ी मेहनत करके बिताये। ...यह मेरा अपना स्वप्न है। काश ! इसे मैं अपने आप से व्यक्त कर पाती।..."

मा-बाप जो कुछ खुद नहीं कर पाते हैं, उसे वह अपनी सन्तान में पूरा कराने की कोशिश करते हैं। "यों हमारे यहां स्वप्न दर स्वप्न का कभी न खत्म होने वाला सिलसिला चलता रहता है।"'तू कुछ सोचता है क्या ?" उसने अमोचे अन्तिम वाक्य उछाला।

"तभी तो कहता हूं, मां, मैं कभी'''।"

"वह तो मैं कई बार सुन चुकी हूं।"

"फिर -?" कल्लू ने प्रतिप्रश्न गैस भरे गुब्बारे-सा उड़ा दिया और देखने लगा कि वह कितनी ऊंचाई तक जाता है ! उसकी कितनी ताकत है !

"फिर क्या—तू सोचकर निर्णय करेगा तो मैं जानती हूं कि तू आजन्म उसे निभा सकेगा। अन्यथा'''।"

"तू व्यर्थ घबरा रही है, मां !"

"नहीं।—व्यर्थ में नहीं।" वह आगे कहते-कहते रुक गई। उसका जीवन नासमझी की ही तो सजा काट रहा है। वह अपने साथ कल्लू को भी ढकेल रही है। परन्तु और कोई रास्ता है भी नहीं।'''नहीं, वह इस वक्त अपनी कहानी लेकर नहीं बैठेगी। उसने इस निश्चय के साथ कहा, "बेटे, व्यक्ति, समाज और देश में आज ऐसे व्यक्तियों की जरूरत है, जो श्रम और निष्ठा से अधूरे व अपंग स्वप्नों में रंग भर सकें और उन्हें एक-दूसरे को मानवीय उष्मा का अनुभव कर सकें।—जानती हूं कि यह अनगढ़ रास्ता दु:ख, तकलीफों, कंटकों और भयानक मोड़ों से भरा हुआ है। रास्ते की बीहड़ता और सन्नाटे भरे एकान्तों को पार करते हुए आगे बढ़ना बहुत मुश्किल काम है। परन्तु इसके अलावा और कोई रास्ता नहीं है।"

"मैं तैयार हूं, मां।"

"तू नहीं जानता है कि तू क्या कह रहा है।"

"मा, तूने ध्रुव की कहानी सुनाई थी न ?"

"हां सुनाई थी।"

"तो क्या ध्रुव को पता था कि वह क्या कर रहा है ?"

उसकी मां चुप रह गई। कल्लू ने उसके प्रश्न का उत्तर उसके ही उदाहरण से दे डाला। वह हैरान थी कि उसने इस अवसर पर कैसा सटीक उत्तर दिया है। तो क्या उसका नन्हा कल्लू अभी से समझदार होने लगा है ? कल्लू ने आगे कहा, "पता किसी को नहीं होता, मां !—और जिनको होता शायद वे उस रास्ते के राही नहीं बन पाते। तू मेरा भरोसा कर मां।"

"वह तो है।"

"यही तो नहीं है।"

"मैं तो—मेरे लाल,'''।" कहते-कहते वह रुक गई। आगे वाक्य ही नहीं

[illegible] । बताता कौन ? [illegible]

मां··· मैं —" उसने अपनी मां की [illegible] में मुंह करके [illegible]
और अपनी सौगन्ध खाता हूं कि मैं कभी भीख नहीं मांगूंगा, [illegible]
[illegible] मजदूर बनूंगा और न कोई गलत काम करूंगा। [illegible]
उसके लिये प्राण ही क्यों न देने पड़ें।"

"तुझे सौगन्ध मेरी है।"

"हां, मां, मैंने सौगन्ध ली है।"

"तो तू···।"

"देख लेना, मां···।"

मां ने उसे अपनी छाती से लगा लिया और देर तक रोती
छोटा नन्हा-अबोध बालक और कैसी हिमालय-सी दुर्गम चढ़ाई। व
उसने मन-ही-मन प्रभु से प्रार्थना की, "प्रभु, मैं तेरे से कोई शिका
रहा हूं। तूने मेरे साथ जो होने दिया, वह ही चुका है और जो शेष है
मैंने अपना मन पक्का कर लिया है।···परन्तु तू अपने इस अबो
सहायता करना कि वह अपने प्रण को निभा सके।"

इसके बाद कल्लू चुप हो गया। मालूशा के मस्तिष्क में उसकी
की एक 'न्यूज रील' घूम गई। अब वह जान चुका था कि कल्लू ने उ
लेने से इनकार क्यों किया था ?

मालूशा चुपचाप कल्लू की ओर टुकर-टुकर देखता रहा। रात घि
हो चली थी। ठण्ड का जोर शीर्ष पर था। उसने कल्लू को कुछ नहीं
तो केवल बत्ती बुझा दी और अपने खानदानी बोरी वाले बिस्तर पर
वह निरन्तर कल्लू और उसकी मां के बारे में सोचे जा रहा था ! वह
में क्या सोच रहा था, यह उसे नहीं पता था। इस पर भी ताज्जुब यह
सोच रहा था, उसे नींद नहीं आ रही थी। अंधेरा कुलबुलाने लगा था
वह दिशाभ्रमित चकवात-सा घूमे जा रहा था—बराबर निरन्तर नि
अथके।

4

दिन, हर समय अपनी अनगढ़ कहानी स्वयं लिखता है। स्वयं ही व
है। फिर भी वह अपनी लिखी-पढ़ी कहानी को नहीं समझता है। न कोई
कहानी को समझने की कोशिश करता है। सब ज्यों के त्यों बने रहते
बहरे, अंधे, लूले-लंगड़े ! किसी के पास फुरसत नहीं है। सब अपनी ही कह
बेखबर हैं। यह अजीब बात है कि व्यक्ति अपनी चौखट पर होने वाली आ

आज तक नहीं सुन समझ पाया। हमेशा उसने सोचा कि वह आहट उसकी चौखट पर से नहीं आ रही है। यह भी विडम्बना है कि वह और दिन दोनों एक साथ उठते-बैठते, सोते-जागते एक-दूसरे से बराबर अपरिचित बने रहने में अपना बड़प्पन मानते हैं। वह भी इस दावे के साथ कि वे एक-दूसरे को अच्छी तरह जानते-समझते हैं। क्या यही बात आज मनुष्य-जाति के बारे में नहीं कही जा सकती है कि वह अपनी पहचान खो देने में अपनी महानता का अनुभव कर रही है। वह चाहती है कि लोग उसे निर्जीव वस्तुओं के माध्यम से जानें। प्रोफेसर नर्बदाशंकर स्वेच्छा से अवकाश प्राप्त करके अपने गांव लौट आए थे। सोच रहे थे बहरे व अंधे शहर से मुक्ति पाकर वे कुछ करेंगे। ऐसा करेंगे कि जिससे मानव जाति अपनी पहचान अपने आप से दे और वह निरन्तर वस्तुओं के विकास में अपने को पहचानने की जिद छोड़ दे। उन्होंने जहां वे प्रोफेसर थे इस दृष्टि से बहुत प्रयत्न किये थे परन्तु उनके प्रयत्नों का कोई खास असर नहीं हुआ था। फिर भी वे निराश नहीं हुए थे और अपनी शेष समय और शक्ति को बचाकर अपने गांव लौट आए थे। वे अपने गांव बहुत लम्बे समय के बाद लौटे थे। उन्हें पता नहीं था कि शहर की सीमाओं ने उनके गांव को छू लिया है। वहां भी शहरी बहरा व अंधापन अपने जबड़े खोले उसे निगलने की तैयारी कर चुका है।

गांव में उनका घर था। उनकी पत्नी हिन्दू-मुसलमान दंगों में गोली लगने से मारी गई थी। हिन्दू-मुसलमान रोज तो आपस में कई बार मिलते थे और एक दूसरे के खैरख्वाह थे। कभी सोचा भी नहीं था कि वे इतने पास और साथ रहते हुए एक-दूसरे के खून के प्यासे हो जायेंगे। यह सब कैसे हुआ, किसने करवाया, यह वह आज तक नहीं जान सके। किसी धर्म में दंगों और जान लेने की इजाजत नहीं है। ताज्जुब यह सब धर्म के नाम पर हुआ और उसे बचाने के लिये हुआ, जिससे दूसरे अपने बचाव करने की आशा लगाये हुए हैं। उस जुनून की चिनगारियों के पीछे कैसा जंगलीपन है कि उससे यह सोचते हुए हैरानी होती है कि वे धार्मिक हैं। वे तो धर्म के ही नहीं तमाम मानव जाति के शत्रु हैं। उस वक्त प्रोफेसर नर्बदाशंकर ने अपनी पत्नी का गम भुलाकर यह सबको समझाना चाहा कि इससे वे किस मकसद पर पहुंचेंगे।

वे अपनी जवान पत्नी के गम को लिये तब से बराबर यह प्रयास करते रहे। कि उनके साथ जो कुछ हुआ, वह दूसरों के साथ न घटे। दूसरे उससे सबक लें। लेकिन नहीं ऐसा नहीं हो सका। उसके बाद हर साल, कुछ खास मौकों पर मजहबी जुनून के उस पागलपन ने शहर को बेतरह से झुलसाया और मारा। हैवानी ताकतों की हरकतों से शहर हमेशा-हमेशा के लिए खौफ और पागलपन की गिरफ्त में आता चला गया।

प्रोफेसर नर्बदाशंकर ने निर्णय किया कि वे शहर में रहकर कुछ नहीं कर

"मैं नही जानता और न ही जानना चाहता हू कि वाजिब क्या है और गैर वाजिब क्या है ! मैं ऐसे किसी पचड़े मे नही पडना चाहता हू ।"' 'प्रोफेसर हो सके तो मुझे मुआफ करना । मेरे पावो मे चलने की और शक्ति नही है । मैं जहा हू, जैसा हू । बस हू मुझे इसी मे सन्तोष है और इससे ज्यादा मैं न सोच सकता हू और न कुछ करने की ताकत रखता हू ।" प्रो० हुसैन ने इसके साथ ही किताब बद कर दी थी । ऐनक उतारकर जेब मे रख ली थी । वह उठते हुए बोले, "मुझे चलना है ।"

"मैं भी चलता हू ।"

"नहीं, प्रोफेसर, नही । मुझे आज सख्त तन्हाई चाहिये । प्लीज डोंट माइण्ड इट ।"

प्रोफेसर हुसैन के जवान लडके को जो मेडीकल के फाइनल मे था, किसी ने मार दिया था । क्यों मार दिया था, यह उसे नहीं पता । अब वह क्या करे, उसे कुछ दिखलाई नहीं दे रहा था । वह उसकी इकलौती सन्तान थी । उस पर उसे फख्र था । वह कहा करता था कि उसने अपने लडके की परवरिश ऐसे माहौल मे की है कि वह धार्मिक जुनून में नही पड सकेगा और एक सच्चे तथा अच्छे इन्सान होने के फर्ज को वह सिद्ध कर सकेगा । प्रोफेसर, जिसके लिये तुम्हारे जेहन मे कसक है, पीडा है और दर्द है, उसकी दवा अल्लाताला ने चाहा तो वह कर दिखायेगा । आखिर वह तुम्हारा शागिर्द जो ठहरा ।

उसके लडके को बी० एस० सी० तक उसने पढाया था । बी० एस० सी० के पूरे होने तक उसका चुनाव मेडीकल मे हो गया था और इस तरह वह बी० एस० सी० पूरी नही कर सका ।

उससे प्रोफेसर हुसैन ने जो कुछ कहा था, वह ठीक ही था । उसने ऐसा पक्का दिल कैसे कर लिया था कि वह सुबह से दो कलासें ले चुका था और शक्ल और व्यवहार से कुछ भी जाहिर नही होने दिया । यह भी नहीं कि वह दु खी है । वह तो उसे सलाह मशवरा दे रहा था कि'''। ओह !

प्रोफेसर नर्वदाशकर को लगा कि उसने शायद गाव लौटकर गलती की है, क्योंकि उसके भाइयो व उनके बच्चो को उसका लौटना अच्छा नही लगा । जमीन-जायदाद से उसने बहुत पहले अपना नाता तोड लिया था । उसने कभी सोचा भी नही था कि उसे अपने गाव मे जीवन के शेष भाग को व्यतीत करने के लिए लौटना पड़ेगा । उसे अपने इस निर्णय पर स्वयं आश्चर्य था । अब सो अघटित घट चुका था ।

प्रो० नर्वदाशकर का बड़ा भाई गाव का सरपच था । उसका छोटा भाई वही पटवारी था । उन दोनो ने सडके सेनी-ब्याड़ी सभाल रखे थे और मुकदमेबाजी करते थे । उनका सारा परिवार गाव के दोहन मे लगा हुआ था । उसके परिवार की

गांव में तूती बोल रही थी। वह यह सोचकर यहां आया था कि जो प्रयोग वह शहर में नहीं कर सका, उन्हें वह अपने गांव में करेगा। काश! वह इतना ही कर पाया तो उसे अपनी तालीम और मानव होने का एहसास हो सकेगा।

बहुत जल्दी उसके बड़े भाई ने उसे ताकीद कर दी, "भैया, यह गाव है और इस गाव पर हमारी हुकूमत है। हमसे ज्यादा कोई नहीं जानता कि इस गाव की भलाई किसमें है और किसमें नहीं। इसलिये आप यहां अपने आदर्शों के पुलंदे को खोलकर कोई बखेड़ा खड़ा न करना।···आदर्शों की जमीन का तुम्हें एहसास अच्छी तरह हो जाना चाहिये क्योंकि उन्हीं के कारण तुम्हारी नौकरी गई और तुम्हें शहर छोड़ने के लिये विवश होना पड़ा।···तुम्हारी शहर की रामायण से हम बखूबी परिचित हैं।—उम्मीद है कि अब हमारी बात आपके जेहन में उतर चुकी होगी।"

उसने अनुभव किया था कि घर वाले उसके वहां लौटने से खुश नहीं हैं। यहां तक कि उसके लड़के भी उसको आदर-सम्मान देने से साफ मुंह मोड़ जाते हैं। उसने सोचा था कि वह अनौपचारिक शिक्षा-केन्द्र चलायेगा। वैसे भी इस वक्त जो केन्द्र वहां चला रहा है, उसे न तो केन्द्र चलाने में दिलचस्पी है और न वह केन्द्र में आकर रोज बैठता है। उसने अपने सरपंच भाई से इतना ही कहा था कि वह अनौपचारिक शिक्षा केन्द्र चलाना चाहता है। यहां भी वह केन्द्र उजाड़-सा पड़ा है। इस पर उसके भाई ने कहा था, "भैया, यह सम्भव नहीं है।"

"पर क्यों?"

"क्योंकि वह न केवल हमारी पार्टी का आदमी है बल्कि वह हमारी पार्टी का अच्छा कार्यकर्ता भी है।"

"वह एकदम जुदा बात है।"

"नहीं, वह जुदा बात नहीं है। वह हमारी राजनीतिक विवशता है। राजनीति में सब चलता है। मैं पुन याद दिला दूं कि आप इस गाव के बारे में नाहक परेशान न हों। यहां जो होना है या हो रहा है, वह अच्छा होता है बुरा आप इस झंझट में नहीं फंसें। क्या अच्छा है, क्या बुरा, इसका निर्णय हम करते हैं, और जो निर्णय करते हैं वही अच्छा है, ऐसा सोचने की आदत डालोगे, तभी गांव में निर्वाह हो सकेगा।" उसने राजनीति का दूसरा मंत्र फूंकते हुए अति विनम्रता से कहा, "माना कि तुम बहुत पढ़े-लिखे हो। विद्वान हो। पर यह तो जानते हो कि ला कुछ तालीमयाफ्ता मंत्री के नीचे अनेक आई० ए० एस० काम करते हैं। आई० ए० एस० से बड़ी तो कोई नौकरी नहीं होती है न।···जानते हो कि ऐसा क्यों हो रहा है, क्योंकि उनकी किताबी तालीम जीवन की समस्याओं को निपटाने में कोई ठोस मदद नहीं करती है। उनके लिये तो 'फील्ड' का गहरा अनुभव चाहिये, जिसका उनके पास नितांत अभाव है और यही वे मंत्रियों सांसदों आदि से मार

खा जाते हैं।—मुझे गलतमत समझना, भैया। मैं तुम्हारी पढाई-लिखाई की कद्र करता हू। वास्तव मे मुझे तुम्हारे प्रोफेसर होने पर नाज था। मैं इस बात का उल्लेख अपने भाषणो व अफसरो के बीच बराबर करता रहता था—भैया, उसकी मर्यादा पर आच नही आये, मैं तुमसे बड़े होने के नाते यह विनती करता हू।"

वह सकपका गया। उसकी बातो का गाव वालो पर अच्छा प्रभाव पड रहा था। वह इससे सन्तुष्ट था। अचानक अपने सरपच भाई की बाते सुनकर वह क्षुब्ध हो गया। राजनीति का बहाव ही नीचे की ओर है, पानी की तरह। उसी बहाव मे तो उसका भाई बहा जा रहा है। उसी से तो उसने इतनी जमीन बढा ली है और ठाटबाट कर लिये हैं। सवाल, उसकी रोजी रोटी और निरन्तर बढते वैभव का है। वह उसको छोडने की नही सोच सकता। उस के लडके तो उससे नाखुश हैं। यह बात गाव मे उनके उडाये उडी है कि उसे प्रोफेसरी से निकाला गया है, जबकि उसने स्वेच्छा से अवकाश प्राप्त किया है। प्रोफेसरी से निकाले जाने की बात से उसके प्रति लोगों मे नानाविध कल्पनाएं और शिगूफे उठे हैं और शक-शुबहा बढ़ा है। वह सब जानते-बूझते हुए चुप बना हुआ है। करे भी तो क्या करे? वाकई वह गाव उसके लिए उपयुक्त नहीं है। उसे अपने पागलपन के निर्णय पर हंसी आ रही थी कि उसने क्या सोच कर खासी नौकरी छोड दी। वह गाव की जिन्दगी मे अमृत घोलने चला था। उसे क्या पता था कि उसका यह इरादा उसकी जिन्दगी को चौराहे पर खडा करके गायब हो जायेगा। हकीकतन जिन्दगी वह नहीं है, जो सामने है और सरल और सहज दिखलाई देती है। जिन्दगी की असली तसवीर तो कुछ और है और जो दिखलाई देने वाली जिन्दगी से एकदम जुदा है। अनेक बार नौकरी छोडने के इरादे को लेकर उसने अपने दोस्तो से भी बात की थी पर उनकी बातो पर उसने कोई तवज्जुह नही दी। उसे हर बार उनकी बातो से यही शुबहा हुआ कि वे सफेद काली सभ्यता के कब्रगाह मे आराम से जीवन बसर करने का पुख्ता इरादा कर चुके हैं, उन्हें इसके अलावा कुछ नही करना है।

प्रो० वत्राया ने कहा था, "प्रो० नर्वदा, यह उम्र 'थ्रिल' नहीं चाहती। ···अपने को लेकर ज्यादा परेशान होने की जरूरत नही है। वक्त का अपना रुख होता है, अपना मिजाज। वक्त कब पलटा खा जायेगा, यह कोई नही जानता। ···मेरी राय मानो तो खामख्वाह की बातें करना छोड दो। ··मेरे तजुर्बे का फायदा न उठाना चाहो तो वह तुम्हारी मरजी।"

"शादी कर लो।" डा० डेविड ने कहा।

"मजाक मत करो।"

"मजाक नहीं" मैं गम्भीरता से कह रहा हू। तुम यो एक आदर्श स्थापित कर सकते हो—किसी विधवा या परित्यक्ता से शादी कर लो।" डा० डेविड ने शान्त मे कहा।

पीड़ा घर कर चुकी है कि मैं मानव-शक्ति ...
धसने से पहले रोक लूं। हो सकता है कि मैं कुछ भी नहीं कर
हूं, वह उपयुक्त नहीं हो। पर एक प्रयोग तो किया जा सकता
कुरसी पर झूलते हुए कहा और वह डा० डिसूजा की ओर

अकेले हो अत कुछ भी कर सकते हो परन्तु हम पर गृहस्थी
नर अन्दाज नहीं किया जा सकता है।"डा० डिसूजा ने किताब

याद आ रही थी। किसी ने भी तो उसके प्रोफेसरी छोड़ने के
नहीं किया था। परन्तु उसने किसी की नहीं सुनी और
ट आया— बिना पूर्व सूचना दिये और बिना अपने इरादों
र जाहिर किये। वह जब तब गाँव लौटता था तब उसका न
मे स्वागत होता अपितु सारा गाँव उसका स्वागत करता था।
भाषण होता था और अनेक स्कूल-महाविद्यालयों द्वारा
ए उसे आदर्श माना जाता था। सारे गाँव को उस पर नाज
बात बिलकुल नहीं है। सारी फिज़ा बदल चुकी है। सब
सी मे उसके प्रति खास आकर्षण नहीं है। लगता है कि यह
छेक माह मे अब उतरने लगा। उसे अपनी इस भूल पर

बकाया, डॉ० अनिता गुहा, प्रो० रजन आदि अनेक मित्रों
आये थे, जिसमे उन सबने हार्दिक शुभकामनाओं का
ा था कि वे बेसब्री से उसके प्रयोग की सफलता मे हिस्सा
रहे है। वे देखना चाहते हैं कि उसने अब तक क्या-क्या
इस बात के लिए दिलीतौर पर मुआफी मांगी थी कि तब
रोक रहे थे और उसकी परीक्षा ले रहे थे, क्योंकि जिन
ी बाते सोच रहा था, वे राहे समप्रसमर्पित निष्ठा की माग
समे इन दोनों ही गुणों को पाकर प्रसन्नता का अनुभव
का मे उस पर दो लेख भी थे। वे चाहते हैं कि वह कुछ
को लिखकर भेज दे, ताकि उन अनुभवों को पत्रिका मे भी

अपने प्रति सम्मानीय भावों की अभिव्यक्ति मे अजीब-सा
र उनके पास से हटते ही उन सबके लिए महान् हो गया
र था तब वह परिवार वालों व गांववालों दोनों के लिए

लिंगभंग महापुरुष था। यह क्या तमाशा है कि व्यक्ति की पहचान पास रहकर नहीं, दूर रहकर की जाती है। यह कैसा खोखला विकास है कि व्यक्ति व्यक्ति से दूर होने पर ही अपने प्रभा मण्डल का एहसास करा पाता है।

उसे अच्छी तरह याद है कि सरपंच भाई के बड़े सुपुत्र ने अपनी मां से कहा था, ताऊजी के विचार यहां लोगों में विद्रोह पैदा कर सकते हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि वे बहुत पढ़े-लिखे और समझदार इन्सान हैं। परन्तु हमारे लिये तो वे हमारी जड़ें खोदने वाले हैं। यदि कहीं धीरे-धीरे उनका जादू चल गया तो अपना पत्ता साफ है।'''तू पिताजी को समझा मा।'''वह इस मुसीबत को गांव से रफा दफा करें।"

"वह यही तो कर रहे हैं!"

"यही क्या खाक कर रहे हैं, वे तो उनके आगे-पीछे घूम रहे हैं और उनके हाथ जोड़ रहे हैं।'''पर यह मैं कहे देता हूं कि यदि वे कुछ माह और रह गये तो सारा गांव उनकी मुट्ठी में होगा।" उसने सक्रोध कहा, 'और हम लोग सड़क पर होंगे।"

"तू क्या अपने पिताजी को पागल समझता है। वे चाहे चार जमात पढ़े हैं परन्तु उन्होंने अपने साहस और उखाड़-पछाड़ के चक्रव्यूह में मजबूत स्थिति बनाई हुई है। वे कहते हैं कि आखिर वह उनका भाई है। वे उसे विनम्रता और समर्पण के छलावे से छलेंगे। जहां विष काम नहीं कर पाता, वहां प्रेम का छलावा वह काम कर जाता है।'''तू देख लेना कि उनके मंत्र पढ़े चावलों का क्या असर होता है!"

यथार्थत स्थिति ऐसी विषम और प्रतिकूल बनती जा रही थी कि उनको वहां रहना दूभर हो चला था। छोटा गांव है और उस पर भी उनके पास कोई खास काम नहीं है। फिर दिन कटे तो कैसे! रात-दिन वह यही सोचते कि उन्होंने यह क्या बीड़ा उठा लिया, उनकी सांप छछूंदर की गति हो चली थी—न निगलते बनता था और न छोड़ते। उनके कान में सांय-सांय करता हुआ सन्नाटा बराबर बहता रहता था हरदम और हर समय। वह इस वक्त चक्रव्यूह में फंसे अभिमन्यु की घनीभूत व तीखी याद से विचलित हो उठते थे।

प्रो० कालरा सपत्नीक उधर से गुजरते हुए एक-दो दिन उनके पास रुकने का इरादा जाहिर कर चुके थे, बशर्ते उन्हें सुभीता हो और वह उन दिनों वहां रहें। एक बार तो उनका दिल बैठ गया था। वह सोच रहे थे कि उनका कोई मित्र बिना इत्तला किये उनसे मिलने गांव चला आया तो''। आखिर वह किसी झूठ के सहारे कब तक जी सकेंगे और अपने थोथे स्वाभिमान की रक्षा कर सकेंगे। झूठ से तो उन्हें सख्त नफरत थी। उनमें डॉ० डेविड तो शक्की मिजाज का है। उसको सन्देह हुआ तो वह तुरन्त चला आयेगा।

भी सड़ सकता था। लेकिन वह पटा नहीं।

सोचने में अधिक समय नहीं लगा कि इतने में ही अतीत उलट गया। अब तक वह गांव की सीमा से बाहर निकलकर शहर की चौड़ी सड़कों और ट्यूब लाईट से जगमगाती रेशमी नगरी में प्रवेश कर चुका था। उसे चकाचौंध की अनुभूति ने एकबारगी जड़-सा कर दिया था। क्या वास्तव में वह अपने गांव कभी नहीं लौटेगा? क्या वास्तव में वह गुमनाम जिन्दगी जी लेने की नई पहल करेगा? क्या वह, जिनकी अंधेरी, बहरी और गूंगी दुनिया है, उनके लिए शुभ प्रभात की स्वर्णिम रश्मियां को नहीं लायेगा। उनको वह नव सुवासित रंगों में नहीं रंगेगा? यह सब उसकी कल्पना के यथार्थ हैं, जिन्हें वह साकार करना चाहता था।

समय की अदृश्य धारा पर शुभ प्रभात के अनगिनत गीत लिखने का उसका संकल्प क्या अधूरा रह जायेगा? वह अपने में बात करते हुए ठीक लाला की दुकान के सामने ठहर गया। उसकी दुकान पर सन्नाटा था। वह रुक गया। चाय का आदेश देकर अन्दर जा बैठा। उसे एकान्त पसन्द है, वह भीड़ में घबराता है। वह यहां जब भी शहर आया, लाला की दुकान पर आते-जाते अवश्य रुका। कभी एकान्त मिला तो उसने मालूखा या कल्लू से अथवा दोनों से बातें की। उसमें कल्लू के प्रति सहानुभूति जगी और स्नेह। उसकी नेकनीयती से वह सदा प्रभावित हुआ था। उसके सामने वह अपने को खड़ा करके आज जब तौलने लगा तब उसे लगा कि जैसे अभी लिए अपने निर्णय के कारण वह उसमें बहुत बौना हो गया है। ईश्वर के वामनावतार की याद आते ही उसे हंसी आ गई। मनुष्य ने कितनी चालाकी से जगतनियन्ता को अपनी कमजोरियों का प्रतीक बनाने में कोई कसर नहीं छोड़ी है। उसने अपनी भावनाओं को आरोपित कर ईश्वर को अपने बीच में ला खड़ा किया है। इसी कारण ईश्वर के अनेक रूप हैं और अनेक आचरण-व्यवहार।

"चाय।" मालूखा को बाहर जाते हुए देखकर कल्लू ने मद्धिम स्वर में स्वर में कहा, "···और कुछ।"

"नहीं।"

"समोसे गर्म हैं। हाल के निकले हुए हैं।"

इच्छा न होते हुए भी उसने कह दिया, "ले आ।"

"एक या दो।"

"एक।"

"चटनी और सोठ दोनों या···।"

"दोनों।"

कल्लू ने सपाटे से एक समोसा चटनी और सोंठ डालकर उसके सामने रखते

"क्या ?"

"कुछ नहीं।"

"क्यों ?"

"बात सीधी-सी है कि उसमें मेरा कोई सम्बन्ध नहीं है।" कल्लू ने सहज कह डाला।

"बस।"

कल्लू ने उसे घूरते हुए पल भर के लिए देखा और फिर भट्टी की ओर लौट पड़ा। वह सोच रहा था कि लाला भी अभी तक नहीं लौटा। लाला को गये चार-पांच घण्टे हो गये हैं। शहर में कई जगह दंगे होने की चर्चा वहां बैठे लोग कर चुके हैं। अभी-अभी जो शोर उठा था, वह भी कहीं दंगे का संकेत न हो। दंगे होने पर लाला सबसे पहले अपनी दुकान के ताला लगवाता था। उसने एक बार ऐसी भूल की थी तो उसका परिणाम यह हुआ था कि दुकान में जो कुछ था, उस पर भीड़ टूट पड़ी थी और आधे से अधिक फरनीचर तोड़ दिया था। लाला नुकसान का हिसाब लगाकर पगला गया था। तब मालूखा ने इन्हीं प्रोफेसर साहिब से सवाल किया था, "तब आप किसी जलसे में जाने वाले थे, परन्तु अचानक कर्फ्यू लग जाने से बीच में ही घिर गये थे और आपने इसी दुकान में शरण ली थी। उससे तीन-चार दिन पहले लाला की दुकान लुटी थी। शहर में कई जानें गई थीं और ऐसी अनेक वारदातें हुई थी, जिनसे लोगों के मन में दहशत पैदा हो गई थी और वे निर्णय कर चुके थे कि बंद का अर्थ बन्द है। केवल बाजार बंद ही नहीं, बल्कि बाजार में निकलना भी बंद। हड़ताल-बंद का अर्थ है कि मुकम्मल हड़ताल और और उसकी मुखालफत करने की सोचना भी पाप है। कल्लू के सामने मालूखा का प्रश्न तैर गया था। मालूखा ने पूछा था, "यह पागलपन क्यों, प्रोफेसर साहिब, कि दुकानें जलायें, लूटें, आदमियों को मारें-कूटें ?"

"बन्द का आह्वान किया गया था।"

"वह ठीक है परन्तु जो हुआ वह…।" मालूखा ने प्रति प्रश्न को पैना किया।"

"गलत है।"

"फिर भी होगा।"

"नहीं होना चाहिये।"

"कौन रोकेगा ?"

"कौन ?" वह हक्का-बक्का रह गया था। इस प्रश्न ने उन्हें गहराई में डुबकी लगाने को मजबूर कर दिया था। परन्तु उन्होंने तब कोई उत्तर नहीं दिया था और किसी मोटर साइकिल वाले के साथ उठकर चल दिये थे। अब मालूखा भी नहीं है। लाला भी नहीं है। उसने बाहर निकलकर दूर-दूर तक देखा। चारों ओर तीखा सन्नाटा था। सड़क पर कोई आता-जाता नजर नहीं आ रहा था कि वह

"आप बड़े लोग हैं, प्रोफेसर साहब ! आपको उल्टे तवे पर सेंकी गई रोटियां खाली प्याज से कैसे भायेंगी ?···कभी नहीं···।"

"नहीं, यह बात नहीं है।"

"आप भी, प्रोफेसर साहिब, गरीबों से कभी-कभी अच्छा मजाक कर लेते हो।" कल्लू का स्वर आर्द्र था। हालांकि यह आर्द्रता उसकी कृत्रिम थी और वह तब तक उनको रोके रखना चाहता था जब तक दुकान पर लाला या मालूया में से कोई लौट नहीं आता। परन्तु इस कृत्रिमता में भी दर्द की अनुभूति थी।

"अच्छा यह बात है।"

"हां।"

"तो प्रति रोटी पैसे तय कर लो।"

"रोटी के कैसे पैसे ?"

"यदि तुम रोटी खिलाना चाहो तो मेरी यह शर्त है।"

"ठीक है···।"

"तो बताओ···।"

"जो जी चाहे, दे देना।"

"तुम्हें मंजूर है।"

"हां।"

"तो लाने दो रोटी और प्याज।"

"नर्वदाशंकर बड़े स्वाद से रोटी खाता रहा। उसे आज अद्‌भुत तृप्ति मिली। वह पांच-छह रोटियां खा गया था। उसने पानी पीकर कल्लू से कहा, "तुम बहुत अच्छी रोटियां सेंक लेते हो।"

"पसन्द आई आपको ?"

"बहुत पसंद आई।"

कल्लू कुछ शरमा-सा गया था। उसने कभी नहीं सोचा था कि रोटी का क्या स्वाद होता है। न ताजी-बासी की चिन्ता की थी। उसने तो रोटियों से पेट भरना ही जाना था। आज पहली बार वह रोटियों की तारीफ सुन रहा था। उसने आश्चर्य से पूछा, "सच कह रहे हैं आप ?"

"सच, रोटियां बहुत अच्छी थीं।"

"इतनी मोटी-मोटी रोटियां और वह भी बिना चुपड़ी। आप तो पतली-पतली चुपड़ी रोटी खाने के आदी होंगे, प्रोफेसर साहिब।···कई तरह के साग-सब्जी और आचार, चटनी, पापड़ आदि के साथ।···वह सब यहां कहां था ?···फिर रोटियां कैसे···"

"हम झूठ नहीं बोलते। जो कहा है, सच कहा है।" प्रोफेसर नर्वदाशंकर ने कहा और मन ही दोहराया, "मुक्तानन्द जी, यह तुम्हारा मुण्डन संस्कार हो गया

"तुम्हारी माँ पढ़ी-लिखी हैं।"

"पता नहीं।"

"फिर भी, वह नमन के योग्य है।"

कल्लू चुप रहा। प्रोफ़ेसर नर्मदाशंकर को नया तरीका सूझा और वह प्यार से कहने लगा, "हम बड़े हैं। बड़ों का कहना मानना छोटों का फर्ज है।...लो, ले लो।"

"नहीं।"

"बड़ों की बात नहीं मानोगे।"

"बशर्ते बड़े उचित आदेश दें तो...।"

"इसमें अनुचित क्या है?"

"है।"

"क्या?"

"यही कि मैं मेहनत का पैसा लूंगा, ज्यादे या कम नहीं।"

"मेहनत तो तुमने की है।"

"हां।"

"फिर?"

"डेढ़ रुपये की मेहनत की है।"

"और मुनाफा।"

"डेढ़ रुपये में और सम्मिलित है।"

"बहुत जिद्दी हो।"

"इसलिये कि गलत बात मानने से इनकार कर रहा हूं।" कल्लू के मन में तेज आंधी चल रही थी। वह सोच रहा था कि क्या गरीब होना कोई अपराध है? अमीरजादे यह क्यों मान बैठे हैं कि गरीब का ईमान पैसा है। उसे दो पैसे डाल कर खरीदा जा सकता है। वह बाहर की ओर देखने लगा। उसे दूर-दूर तक कोई नजर नहीं आया।

"नहीं, इसलिए कि तुम गलत सोच रहे हो।"

"आप समझते हैं कि गरीब के ज़मीर नहीं होता या वह इन्सान नहीं होता।"

"नहीं, मैं ऐसा नहीं समझता हूं।"

"गरीब की भी इज्जत होती है। उसे इस प्रकार बेइज्जत करने का क्या आपको इसलिये अधिकार है कि आपकी जेब में दो पैसे हैं, जिन्हें आप गरीब के मुंह पर मार सकते हैं।" कल्लू ने अपने भीतर की कड़ुवाहट को ऐसे उल्था कर दिया जैसे सर्प केंचुली छोड़ कर बिना पीछे देखे आगे बढ़ जाता है।

"ओह! तुम्हें इससे दुःख पहुंचा। दरअसल मेरा इरादा तुम्हें दुःख पहुंचाने

था।' 'मुझे मुआफ कर देना।" इसके साथ ही वह डेढ़ रुपया मेज पर
र आगे बढ़ गया। वह जरा भी रुका नही और न उसने पलट कर ही दूकान
ओर देखा। कल्लू हक्का-बक्का रह गया। उसने स्वप्न मे भी नही सोचा था
उनके विवाद का अत अचानक और बिना पूर्व सकेत के इतनी आसानी से हो
गा। वह कभी किसी से जीत सकता है और वह भी एक प्रोफेसर से जो कि
ुत पढ़े-लिखे और ऊचे ओहदे वाला होता है।

कल्लू बहुत देर तक उधर ही देखता रहा, जिधर प्रोफेसर गया था। हालाकि
व तक वह उसकी आखो से ओझल हो चुका था, फिर भी उसके मस्तिष्क मे
बना प्रतिबिम्ब बराबर उसके चुपचाप, सिर नीचा किये जाने का एहसास करा
रहा था। वह ठीक से कुछ नही समझ पाया। उसे प्रोफेसर का व्यवहार ताज्जुब
भरा लगा था। कम-से-कम उसे मुआफी नही मागनी चाहिए थी। सामान्य नौकर
ही तो वह है। उम्र मे बच्चा, न पढा और न लिखा। छि छि ·· यह उसने क्या
किया। लाला तथा मालूखा को आते हुए न देख कर वह दूकान बद करने की
तैयारी मे जुट गया। न जाने क्यो वह पहले की तरह भयकित नही हो रहा था।
उसमे धीरे-धीरे आत्म विश्वास लौट रहा था। जो होगा, उसे वह रोक नही
सकता वह मुसीबत की प्रतीक्षा करेगा।

इसी समय जोर का धमाका हुआ। वह अन्दर से भाग कर बाहर आया।
आकाश मे धुआं था। क्या हुआ होगा! उधर कच्ची बस्ती है। कच्ची बस्ती के
पास रानी गज है—अमीरो की नगरी। उसे शोर साफ सुनाई दे रहा था। जरूर
कुछ हुआ है। आजकल शहर मे विस्फोट पटाखो की तरह फटने लगे थे। आजकल
यह कैसा अजीब-सा वातावरण होता जा रहा है? चतुर्दिक भय और हिंसा की
ही आशका बनी हुई है।

कुछ नही समझा जा सकता कि क्या हुआ है? क्यो हुआ है? समाचार पत्र
मे जो आयेगा, उसको भी इस दुर्घटना के चश्मदीद गवाह नकार देंगे। यदि कर्फ्यू
नही लगा तो सुबह वहा खासा जमघट जमेगा। खूब बहसें होगी। अनेक दावे
किये जायेंगे। भयकर शोर होगा। लगेगा कि मानो वे विस्फोटक स्थिति की
रिहर्सल कर रहे हैं। ओह! कैसा अजनबी बन गया है यह शहर। साथ-सा
उठने-बैठने व खाते-पीने लोग भी अलग-अलग हैं। ऐसे शहर मे धमाका नही हो
तो क्या होगा? सब चील, कौए, गिद्ध, सियार, भेड़िये आदि की भूमिका
जीवन्त कर रहे हैं। उसने अन्दर से सिकटनी चढ़ा ली और वह जैसे ही ब
बुझाने के लिए आगे बढ़ा वैसे ही बिजली ही गुम हो गई। अधेरा भागे हुए तर
की तरह वहां आकर छिप गया। वह फिर भी नहीं डरा और चुपचाप
बिस्तर पर आकर लेट गया,—अधेरे मे देखने की कोशिश करता हुआ।

5

सूरज छपाक से रंग-सागर में डूब गया। उससे रंग-बिरंगी छीटें उड़ी और आसमान पर इतस्ततः जा पड़ी। शनै: शनै: अदृश्य चित्रकार की तूलिका उन रंग-बिरंगी छीटों पर श्याम रंग पोतने लगी और देखते ही देखते सारा आकाश श्यामल हो गया—ठीक कल्लू के रंग की तरह।

हालांकि कल्लू यह दृश्य दो-तीन बार तब देख पाया था जब वह चाय देने कॉलिज में गया था और लौटते वक्त वह विदा होते सूर्य को खड़ा-खड़ा देखने लगा था। सूर्य के डूबने के साथ उसमें एक कौतुक जगा था कि सूर्य डूब कर कहां जाता है? कदाचित वह इससे आगे कुछ सोचना चाहता था प्रत्युत वह कुछ सोच नहीं पाता। वह अपने दिमाग पर बहुत जोर देता और अपने काले और मोटे निचले होंठ को दांतों से देर तक दबाये रखता और फिर हार कर उस निचले होंठ को जो दांतों से दबाये रखने के कारण रक्तिम पड़ जाता था, मुक्त कर देता। लेकिन वह इसके अलावा कुछ नहीं सोच पाता और न इससे उसे कुछ महसूस ही होता। सिर्फ उसमें अकुलाहट-कम्पन सिर से पांव तक दौड़ जाती और वह सिहरन से भरा अपने में छपाक से डूबते सूरज को तलाशता रह जाता। उसकी यह तलाश बराबर जारी है। सोने से पूर्व कुछ देर तक प्रायः वह इसी के बारे में सोचता हुआ सो जाता।

मुंह अंधेरे से लेकर आधी रात तक वह धौरिया (कोल्हू या गाड़ी में जोते जाने वाले बैल) की नाईं जुता रहता था। कल्लू इधर''' कल्लू उधर '' कल्लू नीचे '' कल्लू ऊपर''' सब तरफ वह दौड़ता रहता। कल्लू सुस्ती नहीं, फुरती से। और कल्लू विद्युत-तरंग-सा दौड़ता भागता। बस वह मालूखा को देखता और उसी तरह हाथ-पांव चलाने का प्रयास करता था। कहां कौन बैठा है और वहां क्या हो रहा है, यह वह अच्छी तरह जानता था। उसे आदमी की खासी परख थी। अधिकांश ग्राहक उसके मृदु और शालीन व्यवहार के कारण वहां आते थे। वह हरेक ग्राहक की आदत को समझता था और वह ग्राहक की अधिक से अधिक सेवा करने में लगा रहता था। उसके बात करने का तरीका अति मोहक था। वह फटे-पुराने वस्त्रों में निर्मल आत्मा का प्रतीक बना हुआ था।

मालूखा निश्छल और नेक इन्सान है। कल्लू की इच्छा है कि वह भी उसकी तरह सर्वप्रिय हो और उसमें पूर्णतया समर्पण की भावना जन्मे। लेकिन उसके दिलोदिमाग पर उसकी मां के सूर्यातपी व्यक्तित्व का बहुत गहरा प्रभाव था। उसके कारण उसमें स्वाभिमान की भावना घर कर चुकी थी और वह हर बात के अंधेरे-उजाले पक्ष को अपनी उम्र से कहीं ज्यादे सोच जाने की आदत से मजबूर था। उसकी मां कहा करती थी, "बेटे, इस दुनिया में वह आदमी जीता है, जो

है, वहीं रहते हुए अपने अस्तित्व को सुदृढ़ और सुस्वबोध बनाने में रत है।"

"यह अस्तित्व क्या होता है?" उसका भोलापन मुखर होता।

"क्या तू अपने को जानता है?" वह प्रश्न करती।

"अपने को कौन नहीं जानता!"

"तू जानता है कि तू 'जिसने अपने को पहचान कर बता सके कि तू वह है, दूसरा नहीं?"

"मैं कुछ नहीं समझा, मां!"

"तुझे यही समझना है, मेरे लाल।"

"कौन समझायेगा!···तू नहीं समझायेगी।"

"नहीं।"

"तो कौन? समझायेगा?"

"तू स्वयं समझेगा।"

"मैं?···मां, मैं स्वयं समझूंगा। पर कैसे?"

"परिस्थितियों से, माहौल से, व्यवहार से और आचार-विचार से यदि तू समझने का प्रयत्न करेगा तो वह समझ पैदा हो सकेगी।"

"उससे क्या होगा?"

"जादू।" उसकी मां ने गम्भीर स्वर में कहा।

"कैसा जादू?"

"जादू कैसा होता है?"

"तू देखेगा।"

"कब?"

"समय आने दे।"

"वह कब आयेगा?"

"वह तेरे पास आयेगा और कुछ समय तेरे पास बितायेगा। यदि तू उस समय सोता रहा तो फिर सारी उम्र तुझे उसकी प्रतीक्षा करनी पड़ेगी।" उसकी मां ने रहस्यमय ढंग से कहा।

"और यह भी हो सकता है···"

"कि वह फिर कभी नहीं लौटे!"

"क्यों?"

"समय सदैव आगे देखता है। पीछे नहीं। समय किसी की प्रतीक्षा नहीं करता है। तुझे भी प्रतीक्षा नहीं करनी चाहिये।"

"किसकी और कैसी प्रतीक्षा?"

"तू स्वयं सोच।"

"क्या?"

"प्रतीक्षा।"

"मा ऽ···।" वह मचल पडता। उसमे नन्हा सूरज आखें खोलने लगता। प्रश्न बनते। आकुलता बढती। परन्तु वह कुछ नही जानता। न वह कुछ समझ पाता। उसे लगता कि कोई चीज उसमे घुल रही है, वह बेचैन हो रहा है। लेकिन इस बेचैनी का कारण वह नही जानता।

"मेरे भोले लाल, तू चिन्ता मत कर। कर्त्तव्य का सब पालन करता जा। इसी से तुझे तृप्ति मिलेगी और तू सब कुछ जान सकेगा।" उसकी मा यह कह कर उठ गई।

वह तब से आज तक इसी समय की प्रतीक्षा कर रहा है। पता नही वह समय कब आयेगा? आयेगा भी या नही।···नहीं···नहीं···नहीं·· नहीं समय आकर अभी तक नही निकला है। ··नही निकला और यदि निकल गया हो तो उसे पता भी नही। ओह! मा तूने यह कौन-सी पहेली मेरे पीछे छोड़ दी है। अस्ताचल को जाते और गोल गेंद की तरह चक्कर खाकर डूबते सूर्य की तरह वह भी यह सब सोचते हुए चक्कर खाने लगता है और चाहता है कि इस अदृश्य एव मायावी भूत से उसे मुक्ति मिले। पर कैसे? और कौन दिलाये?···वह समय आने पर सब जान जायेगा! हू···वह क्या खाक जान जायेगा! कुछ भी नही, सिवा इसके कि वह जो कुछ जान सकता था, उसे भी भूल जाये!

"कल्लू···।" मालूखा ने पुकारा।

कल्लू एकदम हड़बड़ा गया। उसने तुरन्त पलट कर देखा और अपनी घबड़ाहट को छिपाने का यत्न करते हुए बोला, "क्या है, मालूखां?" उसके स्वर में नाराजगी थी, क्योंकि उसे अपने आपसे बात करते हुए बहुत आनन्द आता था। वह अनेक बातें खामख्वाह सोच जाया करता था। और थोड़ी देर के लिए अपने आपको वर्तमान दुनिया से अलग कर लिया करता था। वह यह जानने लगा था कि वह जीवन को इसी तरह दिवा स्वप्नो मे बिता देगा।

"तुझे यह क्या होता है, कल्लू, कि तू अकेला खड़ा-खड़ा अपने आप में बड़बडाने लगता है?" मालूखा 'जार' मे बिस्कुट जमाते हुए पूछ रहा था।

"नहीं तो···।"

"तेरे होठ चलते हैं!"

"मुझे नही मालूम।"

"तेरे हाव-भाव तेजी से बदलने लगते हैं—एकदम बरसात के मौसम से।"

"क्या पता?"

"यह अच्छा नहीं है, कल्लू।"

"तब?"

"तुझे कोई तकलीफ है क्या?"

कल्लू मुस्कराया और कहने लगा, "मुझे और तकलीफ !"
मुद्रा में ईषद् आश्चर्य और अनजानापन था। सचमुच उसे कोई दुःख
"कुछ तकलीफें ऐसी होती हैं कि व्यक्ति स्वयं नहीं जानता। आ
भी नहीं जान सकता।" मालूखा एक डाक्टर के अन्दाज में उसे स
हालांकि उसे भी कुछ ज्यादा पता नहीं है। वह तो बहुतों की बातें सुन
कह सकने लायक बन गया है। आखिर उम्र का भी तो तकाजा
बहुत तर्जुबा भी है।

"फिर क्या करना चाहिए ?"

"जरूर तेरे जीवन में कोई ऐसी घटना घटी है, जिसे तू भूलना
नहीं भूल पाता। लाख तरकीब लगाने पर भी परिणाम शून्य !
नहीं।" मालूखा अपने एक वकील ग्राहक की भूमिका में साहस से उत

कल्लू पुनः मुस्कराया और कहने लगा, "मेरे जीवन में ऐसा कु
जिसे मैं याद करूं।' मालूखा भाई, तू सोच तो जरा कि हम जैसो
जिन्दगी में क्या घट सकता है ? अधिक से अधिक घट सका होगा तो
रोटी नहीं मिली होगी और पानी पीकर सो जाना पड़ा होगा। ऐसा
इससे मिलता जुलता कुछ होगा। हां, याद आया, मालूखा'''याद आय
वक्त उसका चेहरा भाव विभोर होता जा रहा था और वह कुछ-कु
गौरवान्वित अनुभव करता हुआ कहता जा रहा था, "कौरव-पाण्डवों
द्रोण'''।"

"कौन कौरव-पाण्डव ?"

"महाभारत जिनके कारण हुआ। वे कौरव पाण्डव !"

"फिर'''?" मालूखा को उसकी इन बातों को सुन-सुन कर ब
आता था और वह अपने आपको, कम से कम, उतने समय के लिए तो
बौना अनुभव करने लगता था। उसे लगता कि कल्लू की मां अवश्य
लिखी और कुलीन परिवार की महिला होगी।

"द्रोण भी बहुत गरीब थे।" उसकी मां ने कहा।

"हमारी तरह।" कल्लू ने अनुमान लगाया।

"शायद इससे भी ज्यादा !" उसकी मां ने दीर्घ सांस लेकर कहा।

"ज्यादे।" मालूखा ने खुश होकर दोहराया।

"तब तो इस देश में दूध की नदियां बहती थी !" उसने शंका प्र
कहा।

"तो क्या लोग नदियों से दूध लाते थे ?"

कल्लू यह नहीं जान सका कि मालूखा ने यह मजाक में कहा है या ज

इसी तरह का प्रश्न करने पर उसे अपने आपको सभालते हुए सुना था, "इसका मतलब हुआ, मालूखा, कि उस समय देश मे दूध का कतई तोड़ा नही था और हर घर मे पशु थे,—खूब दूध था।"

"तो ?"

"तो क्या ! फिर भी उस वक्त भी द्रोण के पुत्र अश्वत्थामा के लिये दूध नहीं था।"

"क्यो ?" मालूखा ने कुछ सोच कर अपने प्रश्न को पूरा किया, "क्या वे बहुत गरीब थे।" साश्चर्य उसने यह और जोड दिया, "क्या वे इतने गरीब थे ?···और उस समय···।"

"हा, वे इतने गरीब थे कि अपनी इकलौती सन्तान को दूध नही पिला सकते थे।

इस पर मालूखा ने जोर का ठहाका लगाया। चकित होकर उसने उसकी ओर देखा और जानना चाहा कि वह क्यो अचानक बम की तरह फूट पडा है। वह उससे कोई प्रश्न करता कि इससे पहले वह सफाई पेश करने लगा, "तू सोचता होगा कि मैं अचानक क्यो हसा ? तो तू उसके कारण सुन। पहला कारण ये कि उसके माता-पिता थे।··थे न।"

"बराबर।" कल्लू ने मालूखा की कथन मुद्रा को जज्ब करते हुए कहा।

"फिर भी वे अपनी इकलौती सन्तान को दूध नही जुटा सके।··क्यो, क्या उनके पशुओ की अकाल मृत्यु हो गई थी ? या··।" मालूखा अपनी बात को घुमा चुका था।

"नहीं।" कल्लू ने तनिक जोर देकर कहा, "वे गरीब थे।"

"इतने गरीब !"

"जब इस देश मे दूध की नदियां बहती थी तब भी गरीबो के भाग्य मे दूध नहीं था।" कल्लू के स्वर मे उसकी मा जैसी करुणा विगलित हो उठी थी। "···यह सच है।'

"इसका मतलब है कि आज जो हमारे बडे-बड़े नेता कहते घूमते हैं कि वे *गरीबी मिटा देंगे, वे नहीं मिटा पायेंगे।···तो क्या वे झूठ बोलते हैं !"* मालूखा अपने प्रश्न पर मुग्ध हो उठा।

."शायद।···तू सोच न, मालूखा, वह···वह युग था जब इस धरती पर स्वय भगवान् अर्थात कृष्ण ने जन्म लिया था।"

"यानी भगवान् के होते हुए द्रोण अपनी इकलौती सन्तान को दूध का बन्दोबस्त नही कर सके।··जानता है, रे···इसका मतलब क्या हुआ ?" मालूखा ने बात के छिलके उतारते हुए कहा।

"क्या ?"

"यही कि किसन भगवान्···तेरा मतलब इस दुनिया को खड़ी करने वाले किसन भगवान् से ही है न।"

"किसन नहीं,—कृष्ण···।"

"हां, हां किसन ही सही·· तू आगे सुन रे ··बहुत पते की बात हाथ लगी है कि·· मालूखा मुस्करा उठा और अपने चारों ओर देख कर बोला, "यानी गरीबी न मिटने वाली स्थिति है।···कभी न मिटने वाली है।"

"कैसे ?"

"।जब इस जग के जन्मदाता और पालनहार के खुद जन्म लेने पर गरीबी नहीं मिटी तब उनकी अनुपस्थिति में तो उसके मिटने का सवाल ही पैदा नहीं होता···सब के सब झूठ बोलते हैं। तभी तो सोचूं कि गरीबी मिटाने के नारे जितनी जोर शोर से उछाले जाते हैं, गरीबी उतनी ही तेजी से बढ़ती जाती है।···है ना" मालूखा को लगा कि उसके हाथ कोई बड़ी बात आ लगी है। उसका दिमाग कदापि ठूठ नहीं है। उसमें केवल घास-फूस ही नहीं है। इसके अलावा भी बहुत कुछ है।

"तू ठीक सोचता है।"

"मैं आज ही कच्ची बस्ती वालों को यह रहस्य बता आऊंगा कि वे उनके चक्कर में नहीं आयें जो उनकी गरीबी मिटाने की बात करते हैं।" मालूखा ने उत्सुकता व्यक्त करते हुए कहा, "कहूंगा कि वे झूठ बोलते हैं। और कैसे झूठ बोलते हैं, यह सिद्ध करूंगा।"

"इतनी जल्दी नहीं।"

"क्यों नहीं!"

"कथा के आगे का भाग तो सुन!"

"सुना!" मालूखां ने अनजाने मन में कहा। दरअसल उसे अब कहानी से कोई लेना-देना नहीं था क्योंकि उसके हाथ तो कहानी का सार पहले ही आ चुका था। उसका मन चाह रहा था कि वह उड़ कर कच्ची बस्ती वालों के बीच में पहुंच जाये और अपनी बात उन्हें समझाये। वह हिन्दुओं की बस्ती है और यह कथा भी हिन्दुओं की है।···उनके भगवान् की है। फिर तो उन्हें विश्वास भी सवा सोलह आने होगा। जरूर होगा। परन्तु···उसके मन में एक प्रश्न कौंध उठा। वह कहने लगा, "कल्लू, जरा ठहर।···एक बात और है।···सिर्फ एक···।"

"क्या ?"

"लगता है कि आज का दिन बहुत अच्छा है।"

"होगा।" उसने लापरवाही से कहा।

"होगा नहीं, है।" कल्लू चुप रहा। मालूखां ने थूक गटकते हुए कहा, "कल्लू,

तूने अभी बताया था कि किसन भगवान् ही इस जगत् को जन्म देने वाले व पालने वाले हैं।"

"हां कहा था—यह सच है।"

"फिर हमारे ईश्वर ने क्या किया ?···उसने भी तो इस दुनिया को बनाया है।—तो क्या इस दुनिया को बनाने वाले दो ईश्वर हैं।"

"दो!" साश्चर्य कल्लू ने दोहराया और कहा, "ईश्वर दो कैसे हो सकते हैं?"

"ईश्वर तो औरों के भी हैं, वे भी यह कहते होंगे तो···।" मालूखा गम्भीर हो गया था।

"तो···। यह तो कभी सोचा नहीं, मालूखा।"

"मैंने भी नहीं।"

"जरा ठहर···ध्यान से सुन···।" उसने रेडियो को कुछ तेज कर दिया। रेडियो पर दोहराया जा रहा था जनता अफवाहों पर ध्यान नहीं दे। अफवाह फैलाने वालों से सावधान रहें। आजकल इस शहर में कतिपय अराष्ट्रीय तत्त्वों ने प्रवेश पा लिया है और वे तरह-तरह की अफवाहें फैला रहे हैं। ···आपको ऐसे किसी व्यक्ति पर शक हो तो तुरन्त अपने पास की पुलिस चौकी या दो-चार दो-पांच नम्बर पर इत्तला करें। विशेष सूचना खतम।" इसके बाद मालूखा ने कल्लू से पूछा, "समझा कुछ···।"

"क्या?"

"नहीं समझा। मैं जानता था।···बात ही कुछ ऐसी है।" मालूखा ने बहुत धीमे से कहा।

"क्या बात है?"

"यही कि कहीं यह भी कुछ शरारती तत्त्वों की फैलाई गई अफवाह है कि ईश्वर दो हैं···या तीन-चार हैं।"

कल्लू कुछ तै नहीं कर सका। उसने अपनी कहानी पूरी करने की दृष्टि से कह दिया, "शायद, तूने ठीक सोचा है। हो सकता है···।"

"हो नहीं सकता कल्लू, है। तू सोच, जब देखो तब हिन्दू-मुसलमान आमने-सामने आ जाते हैं और सारे शहर को दहशत से जकड़ डालते हैं।···मैं और तू क्यों नहीं लड़े।···तू हिन्दू है और मैं मुसलमान। दिन-रात साथ रहते हैं, कभी स्वप्न में भी नहीं सोचते कि मैं मुसलमान हूं या तू हिन्दू।" तू कल्लू है और मैं [illegible]

दिन···और···।"

"यही कि किसन भगवान्'''तेरा मतलब इस दुनिया को यह
किसन भगवान् से ही है न।"

"किसन नही,—कृष्ण'''।"

"हा, हा'''किसन ही सही ''तू आगे सुन रे'''बहुत पते की ब
है कि ''मालूखा मुस्करा उठा और अपने चारो ओर देख कर
गरीबी न मिटने वाली स्थिति है।'''कभी न मिटने वाली है।"

"कैसे ?"

"।जब इस जग के जन्मदाता और पालनहार के खुद जन्म ले
नही मिटी तब उनकी अनुपस्थिति मे तो उसके मिटने का सवाल
होता'''सब के सब झूठ बोलते हैं। तभी तो सोचू कि गरीबी
जितनी जोर शोर से उछाले जाते हैं, गरीबी उतनी ही तेजी से ब
'''है न।" मालूखा को लगा कि उसके हाथ कोई बडी बात आ ल
दिमाग कदापि ठूठ नही है। उसमे केवल घास-फूस ही नहीं है। इस
बहुत कुछ है।

"तू ठीक सोचता है।"

"मैं आज ही कच्ची बस्ती वालो को यह रहस्य बता आऊंगा
चक्कर मे नही आयें जो उनकी गरीबी मिटाने की बात करते हैं
उत्सुकता व्यक्त करते हुए कहा, "कहूगा कि वे झूठ बोलते हैं।
बोलते हैं, यह सिद्ध करूगा।"

"इतनी जल्दी नहीं !"

"क्यो नही !"

"कथा के आगे का भाग तो सुन !"

"सुना !" मालूखा ने अनजाने मन से कहा। दरअसल उसे
कोई लेना-देना नही था क्योकि उसके हाथ तो कहानी का सार पहले
था। उसका मन चाह रहा था कि वह उड़ कर कच्ची बस्ती वा
पहुच जाये और अपनी बात उन्हें समझाये। वह हिन्दुओ की बस्
कथा भी हिन्दुओ की है।'''उनके भगवान् की है। फिर तो उन्है
सवा सोलह आने होगा। जरूर होगा। परन्तु'''उसके मन में ए
उठा। वह कहने लगा, "कल्लू, जरा ठहर।'''एक बात और
एक'''।"

"क्या ?"

"लगता है कि आज का दिन बहुत

"होगा।" उसने

"होगा नही, है।" कल्लू चुप

था।" कल्लू ने थोड़ा रुककर मालूआ से पूछा, "जानता है, उसने क्या कहा ?"

"पड़ोसी के घर से आया था।" मालूआ ने झुंझलाकर उठने की चेष्टा करते हुए कहा।

"नहीं।···कृपी ने बताया था कि उसने पानी में आटा घोलकर उसे पिलाया था।" कल्लू के स्वर में पीलापन उभर आया था। वह दूसरी तरफ देख रहा था।

"क्या अश्वथामा दूध और आटे के पानी के अन्तर को नहीं समझता था ?" मालूआ ने अश्वथामा का गलत उच्चारण करते हुए हैरानी से पूछा।

"नहीं।···उसने पहली बार दूध पिया था।···जानते हो, वह राजा द्रुपद का सहपाठी था।"

"इतना गरीब ?"

बाद में वह द्रोणाचार्य के नाम से विख्यात हुआ।···उसके सारे दुःख दूर हो गये।···परन्तु ऐसी घटनाओं का कहां तक उल्लेख करें। पता नहीं कितने दिन मां ने व्रत का बहाना करके बिना कुछ खाये-पिये काटे, कोई नहीं जानता।···एक बार तो वर्षा की झड़ी ऐसी शुरू हुई कि उसने बंद होने का नाम ही नहीं लिया।···कैसा खाना ···कैसा सोना···चारों ओर पानी ही पानी था। पुल की जगह छोड़ कर भीगते हुए एक बंद दुकान के सामने मैं और मां बैठ गये।···कई दिन की नींद से आंखें भारी थीं। पानी बराबर बरस रहा था। पता नहीं कब नींद ने घर दबोचा! हम गीले कपड़ों में ही सो गये। आंख खुली तो सामने पुलिस थी।" कल्लू का चेहरा भयाक्रांत परछाइयों से घिर गया। मालूआ की आंखों में बादल घिर आये। वह पूछ बैठा, "क्यों ?"

कल्लू चुप बैठा रहा। उसके होंठ फड़कते परिंदे की तरह उड़ान न भर पाने की कोशिश में कांप रहे थे। उसके नथुने फूल रहे थे। उसकी आंख में क्रोधाग्नि धधक रही थी। वह अपने सूखे होंठों पर जीभ फेरकर कहने लगा, "दुर्भाग्य कभी कहकर नहीं आता है, मालूआ!···भूखे-प्यासों को थाने ले गये।" मां थानेदार की एक घुड़की से खड़ी की खड़ी गिर पड़ी। उसके सिर में चोट आ गई। खून बहने लगा।···"मैं चीख पड़ा।···कल्लू सचमुच चीख पड़ा। उसकी चीख से मालूआ डर गया। उसके हाथ से चम्मच गिर गया। कल्लू कह रहा था, "···क्षमा करना मालूआ, मैं आपे में नहीं रहा था।···मां को अस्पताल में दाखिल करा दिया गया। मैं फूट-फूटकर रो पड़ा। रोता रहा। तब एक बूढ़ी नर्स मेरे पास आई और उसने मुझे दिलासा दिलाया। उसने खाना खिलाया। अपने पास रखा। मां ठीक हो गई। फिर पुलिस उधर नहीं आयी।···पता नहीं हमें क्यों पकड़ा और क्यों छोड़ दिया? वे दिन मैं कभी नहीं भूलता हूं। आज भी मैं कांप उठता हूं।···"

कल्लू की आंखें भर आई थीं। मालूआ पूछ रहा था, "तू अपने आपसे यही बात

स्टैण्ड।" उसने अपने खड़े कॉलर को थोड़ा और ऊंचा करते हुए कहा।

लाल जेकिट वाले नवयुवक ने उसकी ओर से ध्यान हटाते हुए अपने साथियों से कहा, "आपको ऐसे रेस्ट्रा में नहीं आना था।···देख रहे हो यहां कैसे-कैसे 'मिली' लोग आते हैं, जिन्हें बात करने की भी तमीज नहीं होती है।···उठो यार।"

"अपने बाप को गाली देते हुए तुझे जरा भी लज्जा का अनुभव नहीं होता है।···तू कहीं भी जा बसा हो लेकिन तेरी मातृभूमि तो यही है।" वह नवयुवक अपने खुले कालर को ठीक करता हुआ अपनी जगह से उठकर उनकी टेबुल के सामने आ खड़ा हुआ। उसकी ओर घूरते हुए वह आगे कह रहा था, "शायद बहुत ज्यादा पढ़-लिख गये हो और उन पढाई की चकाचौंध ने इन्सान को पहचानने की अक्ल को भी रिटायर कर दिया है।"

तीनों ने एक साथ उस नवयुवक की ओर ध्यान से देखा जिसकी कमीज का कॉलर खड़ा हुआ था और जिसकी देह सुगठित व कसरती थी। वह ऐसी ठण्ड में भी एक कमीज में था। लाल जेकिट वाले नवयुवक को यह अपनी तौहीन लगी और उसे गुस्सा आ गया कि एक अपरिचित व सामान्य सा बौना इन्सान उस जैसे कुलीन और अमीरजादे में अक्ल सिखलाने की बात कर रहा है। वह तैश में आ कर बोला, "ए मिस्टर! आपका दिमाग तो ठीक है।···यह कौन-सी तमीज है कि दो सज्जनों की बात में बिन बुलाये मेहमान की तरह बीच में कूद पड़ो और जो जी में आये, बकने लगो।" उसका हाथ अन्दर की जेब में चला गया था।

लाला ने अपना माथा ठोंक लिया। मन-ही-मन वह बुदबुदाया, "हे प्रभु! इस मुसीबत से मेरी दुकान को बचा। ये मुस्टण्डे लड़ बैठेंगे और दुकान स्वाहा हो जायेगी—कौन भरेगा दुकान का नुकसान? पता नहीं, ये आजकल के लड़कों को क्या हुआ है!···ये सब इस मुए सिनेमा की कारस्तानी है।···भगवान जाने कि आजकल स्कूल कालिज में क्या पढ़ाया जा रहा है।···ये लड़के किसी को कुछ समझते ही नहीं।···सबके बाप बने घूमते हैं।···हे प्रभु!"

"ए मिस्टर, मुंह सभालकर बात करो।···जरा अक्ल से काम लो। जरा ठंडे दिल से सोचो, क्या कोई अपनी मां को बेइज्जत होता देखकर चुप रह सकता है?···तूने मेरी ही नहीं, अपनी मां को भी गाली दी है।" उसने कॉलर को ठीक करते हुए तनिक विनम्रता से कहा।

"तूने क्या सबका ठेका लिया है?" उनमें से जो अभी तक चुप था, वह बोला।

कल्लू हतप्रभ-सा देख रहा था। मालूखा के चेहरे पर उल्लास था। उसे बीच बचाव कराने में बहुत आनन्द आता था। वह सोच रहा था कि मारा-मारी जरूर शुरू होगी। वे तीन हैं तो क्या वह अकेला उन तीनों की चटनी बना देगा।

अचानक उसकी दृष्टि लाला से जा मिली। लाला उसे ही घूर रहा था। उसकी ओर घूरने का कारण यह था कि वह यह कहना चाहता था कि वह बीच में पड़कर अनहोनी से दुकान को बचाने का प्रयास करे। मालूखा लाला की इस स्थिति का भरपूर लाभ उठाना चाहता था। एक बार उसने दो लड़कों को लड़ने से बचाया तो उसकी कमीज जगह-जगह से फट गई। उसका नतीजा यह निकला कि वह कमीज पहनने लायक नहीं रही। उसने लाला से नई कमीज की फरमाइश की। लाला आँख निकालकर बोला, "क्यों?"

"क्योंकि उन गुण्डों को लड़ने से रोका था।"

"न रोकता।"

"तो लाला, वे तेरी दुकान का कचूमर निकाल जाते। नुकसान हो जाता।"

"मुझे क्या था?"

"ठीक है।"

कई बार वह चुप रहा। दो दल लड़ पड़े। वह तमाशबीन बना खड़ा रहा। दुकान का काफी नुकसान हुआ। लाला ने अपना सिर पीट लिया। परन्तु अब करे तो वह क्या करे! पानी में रहना और मगरमच्छ से बैर करना। वे ही लड़के तो उसकी आमदनी का साधन थे। लाला तब मालूखा पर बरसा था, "क्यों रे, तू तमाशा देखता रहा, कुछ किया नहीं।"

"क्या करता?···वे लड़ रहे थे।"

"दुकान में।"

"हाँ।"

"इसका मतलब समझता है···।"

वह चुप रहा, सिर नीचा किये।

"दुकान का कितना नुकसान हुआ। यदि तू···।"

"बीच में पड़ता, यही न।" मालूखा ने बमुश्किल कहा।

"हाँ।"

"तो वे मेरे हाथ-पैर तोड़ सकते थे। कपड़े तो जरूर फटते।··· मैं गरीब कहाँ से इलाज कराता ···और कहाँ से नये कपड़े लाता।"

"ओह!" लाला ने अपना माथा पकड़ लिया। उसे अपनी गलती महसूस हुई। लाला ने उससे समझौता कर लिया। तब से वह बराबर झगड़ों के बीच में पड़कर उन्हें टलवा दिया करता था और मानो झगड़ा टलने वाला नजर नहीं आता था तो वह उन दोनों या दोनों दलों को, जैसे-तैसे करके बाहर ले आता था। लेकिन वह कई बार सोच चुका था कि उसकी इस कमीज का कपड़ा गल चुका है और वह जगह-जगह से सिल चुकी है। जरा से झटके से वह चिर भी सकती

है। इसी डर से वह उस कमीज़ को धो नहीं रहा था। उसकी कमीज कच्च-चिकट हो रही थी। थेगलिया जवाब दे रही थी। वह अल्लाह से मन-ही-मन दुआएं कर रहा था, "आज जरूर हाथा-पाई हो।...चाहे थोड़ी-सी ही हो। पर हो अवश्य।" फिर वह तुरन्त उनकी लड़ाई में कूद पड़ेगा और इस प्रकार अपने लिए वह एक नई कमीज का बन्दोबस्त कर सकेगा। यदि वह झगड़े को लड़ाई में बदलने से पहले कूद गया तो हो सकता है कि लड़ाई होते-होते बच जाये और उसकी नई कमीज न आ सके।

"ठेका कोई किसी का नहीं ले सकता है, मिस्टर।" परन्तु देश तो सबका है। उसका मान-सम्मान सबका है।" कुछ तो सोचो, यह वेद-उपनिषद् वाला देश है। जिससे दुनिया को प्रकाश मिला।" "अमीरी तो अस्थिर है। उसका क्या घमण्ड करना?" मेरे दोस्त, मुझे गलत मत समझना।...यह प्रश्न मेरा-तुम्हारा नहीं, देश का है और देश सबसे महान् है। उसकी महानता पर कोई अंगुली उठाये यह मुझसे बर्दाश्त नहीं होता।" उसके कहने का ढंग बेहद खूबसूरत और असरदार था। उसके हाव-भाव में शालीन तेजोष्मा थी। उसकी बड़ी-बड़ी आंखों में दिव्यता थी।

"चल यार।" उसमें से एक ने कहा।

"डोंट गैट डिस्टर्बड, माई फ्रेण्ड।" "चलो।"

लाल जेकिट वाला वह नवयुवक कुछ सोचकर लाला को पैसे देता हुआ बाहर चला गया। वह कुछ बोला ही नहीं। न उसने पीछे मुड़कर देखा। वह कार में बैठकर ओझल हो गया। केवल हल्की-सी धूल प्रकाश में चक्कर काटती रह गई।

कल्लू चकित-सा बना रहा।

मालूखा का मन अनमना हो गया।

लाला ने चैन की सांस ली। उसने देवी-देवताओं को नमन किया, क्योंकि वह यह मान रहा था कि इस वक्त देवी-देवताओं की मनौती के कारण यह बला टली है। अन्यथा तो दोनों ने बाहें ऊपर खींच ली थी और मालूखां चुपचाप खड़ा देख रहा था। उसे कुछ नहीं सूझ रहा था कि वह उस वक्त क्या करे। खैर जो भी हुआ, वह अच्छा ही हुआ। बला टल गई। उसने कल्लू को पुकारते हुए कहा, "दुकान बंद करना शुरू कर दे।"

अब उस नवयुवक को भी उठने का संकेत मिल चुका था जो अभी उन तीन सभ्य नवयुवकों से लड़ने की कोशिश कर रहा था। लाला ने खासतौर से यह अधजले बोयलेसा वाक्य उसी के लिये उछाला था। उस नवयुवक के अतिरिक्त वहां जो बैठे थे, वे उठ चुके थे। उस नवयुवक ने, जिसकी ठुड्डी अण्डाकार थी और चेहरा गोल-मटोल-सा था, लाला की ओर साभिप्राय देखा और फिर धीरे से

उठा। अचानक उसकी चपटी नाक तन-सी गई। परन्तु बाहर पड़े फलीवर का अन्दर लाकर जमा रहा था। लाला उन तीन नवयुवकों के बीस के नोट की ओर देखकर खुश होने लगा था, क्योंकि वह उन्हें शेष पैसे लौटाने भूल गया था या वे उससे पैसा लेना भूल गये थे। उसे ठीक से कुछ याद नहीं कि ऐसा कैसे हुआ। परन्तु हिसाब जोड़कर वह इस नतीजे पर पहुंचा था कि उसे हाल के तनाव और जोखिम से गुजरने का शुद्ध लाभ साढ़े बारह रुपये हुआ था। उसने भगवान् की ओर दीन भाव से देखा और पुनः नमन किया।

मालूवा आज सुबह से नल न आने के कारण खेंचू (हैण्डपम्प) से मटका भरने चला गया था। लाला इस बात से बहुत खुश था कि उसके दोनों नौकर अपने आप दुकान की जरूरत को ध्यान में रखकर सारा काम निपटा लेते हैं। वह यह सोचते हुए गल्ले के रुपये अन्टी में चढ़ा चुका था। उसे इस बात की भी खुशी थी कि आज आम दिनों से ज्यादा आमदनी हुई है। अब वह नवयुवक उसके पास आया और तनिक कड़कते स्वर में पूछा, "हिसाब बोल, लाला, कितने पैसे हुए?"

इसके नादिरशाही वाक्य ने लाला की सरस खुशी को झटका दिया। लाला ने मक्कारी भरा नाटक करते हुए कहा, सिर्फ दो रुपये आठ आने।"

"लो।" उसने लाला की ओर सौ रुपये का नोट बढ़ा दिया। उसकी आंखें बाहर की ओर देख रही थीं।

लाला ने चाशनी घोलते स्वर में बड़ी विनम्रता से कहा, "बाबूजी, खुले नहीं हैं क्या?"

"नहीं।" उसने लाला को मानो चट्टान से उठाकर नीचे फेंक दिया हो और लाला की हड्डी पसली टूट गई हो, लाला को ऐसी अनुभूति करा दी। फिर भी, लाला ने साहस नहीं छोड़ा और अकारण आत्मीयता व प्यार की वर्षा करते हुए वह बोला, "बाबूजी, आप बुरा मत मानना, मैं आपके पिता की उम्र का हूं।''' आप जरा अपने गुस्से पर अंकुश रखा करो।" इसके साथ ही न चाहते हुए लाला ने अन्टी खोली और उसका सौ का नोट सौ के नोटों के साथ मिलाया। फिरउसने तीन बीस-बीस के, तीन दस-दस के पांच और एक दो का नोट निकालकर जैसे ही नोटों को अण्टी में धकाने की कोशिश की कि वह नवयुवक धीमे परन्तु सख्ती से बोला; लाला, रुपये यहां रख दो।"

लाला उसकी कड़कती आवाज से सकपका गया। उसने रामपुरी चाकू को देखा। वह असहाय-सा इधर-उधर देखने लगा। वहां कोई नहीं था। वह पुनः कड़का, "सुना नहीं, ये गड्डी इधर करो।''' नहीं तो'''।" उसने रामपुरी चाकू उसकी ओर बढ़ा दिया। लाला कांप गया।

कल्लू ने यह सब देख लिया था। वह उसको अनदेखा करते हुए बाहर से स्टूल उठाकर अन्दर रखने के लिये बढ़ा। कनखियों से उसने देखा कि लाला का

चेहरा इस कड़ाके की ठण्ड में पसीने से तरबतर हो उठा था। उसकी आंखों में भय जम गया था। उसके होंठ कांप रहे थे और वह गिड़गिड़ा रहा था। वह नवयुवक कड़क कर कह रहा था "क्या सोचता है, बन्दर की औलाद। जल्दी गड्डी इधर हवाले कर।"

कल्लू ने छड़ी को मजबूती से पकड़ा और बाज की तरह उसके हाथ पर छड़ी दे मारी। वह चीख पड़ा। उसकी तेज आवाज उस सन्नाटे में गूंज उठी। उसके हाथ से चाकू छूटकर नीचे जा गिरा। वह चाकू उठाकर कल्लू की ओर झपटता कि मालूखा ने स्थिति का जायजा लेते हुए उस पर पानी से भरा मटका फोड़ दिया। उसने लाख संभलने की कोशिश की परन्तु वह संभल नहीं सका और अचानक इस हमले से वह गिर गया। इसी वक्त लाला ने दो किलो ग्राम का बाट उसके सिर पर दे मारा वह नवयुवक बेतरह से चीख पड़ा। उसके सिर से खून बहने लगा। लाला दुकान से उठकर सामने कालिज की ओर भागा। चपरासी को सारी फोन किया। पुलिस आ गई।

कल्लू देख रहा था कि वह नवयुवक बेतरह से तड़प रहा था। उसके सिर से खून बह रहा था। मालूखा कुछ समझ नहीं पा रहा था।

पुलिस ने उसे उठाया और गाड़ी में डाला। वह लाला को साथ लेकर चली गई। कल्लू टकटकी लगाकर उस सब नजारे को देखता रह गया। फर्श पर खून जम गया था। पुन: सब कुछ जैसे का तैसा हो गया। ठण्डी व तीखी हवा चलने लगी। चारों ओर सन्नाटे की सांय-सांय बहने लगी। मालूखा ने मटके के टुकड़े समेटकर बाहर फेंक दिये। और खून पर राख डालकर फर्श भी साफ कर दिया। दुकान का दरवाजा बंद करके वे दोनों परस्पर मौन साधे लाला के लौटने की स्थिति बताकर प्रतीक्षा करते-करते सो गये।

6

मालूखा सोया पड़ा था। कल्लू बराबर सुन रहा था कि कोई दरवाजा पीट रहा है। उसने देखा कि रात को वे लाइट बंद करना भूल गये थे। उसने उठकर स्विच ऑफ किया। बाहर झांका। बाहर चांदना था। उसने दिमाग पर जोर दिया। रात चांदनी वाली तो थी नहीं। रात तो अंधेरी थी। उसे ठीक से कुछ याद नहीं आ रहा था। उसका सारा अवबोध गड़बड़ा रहा था। शायद डर अभी तक उसके दिलोदिमाग पर सवार था। कहीं उस नवयुवक के साथी तो नहीं आ गये हैं। लाला होता तो नाम लेकर पुकारता। फिर कौन है?···कोई भी हो वह दरवाजा नहीं खोलेगा, उसने निर्णय ले लिया।

दरवाजे पर फिर दस्तक पड़ी। इस बार दस्तक के साथ किसी ने बाहर की

कुछ भी बताती। आवाज़ पहले से तेज थी। उसने कान लगाकर सुना कि बाहर कई लोग बहुत-रहस्यी कर रहे हैं। उसने मालूसा को बताया कि मालूसा बोल गड़ा बधाओ```बधाओ बधाओ।" उसने अपने मामों कल्लू को देख लाता। कल्लू पूछ रहा था 'क्या बात है, मालूसा ?" मालूसा ने चारों ओर देखा और मुस्कराया।

दरवाज़े पर पुनः तेज दस्तकें पड़ीं। मालूसा ने कल्लू की ओर देखा, और पूछा, 'कौन है ?"

"पता नहीं।—बहुत देर से दरवाज़ा पीट रहे हैं। कुछ बोलते नहीं।" कल्लू ने सोचते हुए कहा।

मालूसा अंगड़ाई लेकर उठ बैठा। उसने बाहर होने वाली आहटों पर ध्यान दिया। खिड़की से झांका। वह चौंक पड़ा। दिन उग आया था। सड़क पर धूप पड़ी थी। वह मुस्कराया और कल्लू की ओर देखकर बोला, "दिन निकल चुका है। —आज हम लोग इतनी देर तक सोते रहे। शायद दूध वाला लौट गया होगा।"

"तब क्या होगा ?" कल्लू घबराया। उसका सिर चकराने लगा। दूध नहीं होगा ! बिना दूध के चाय कैसे बनेगी। तब तो लाला उन्हें खा जायेगा।

"चिन्ता मत कर जो होगा, देखा जायेगा।" मालूसा ने उसे ढाढ़स बंधाते हुए कहा।

दरवाज़े पर दस्तकें तेज होने लगीं। मालूसा आगे बढ़ा और आहिस्ता से उसने दरवाज़ा खोल दिया। बाहर भीड़ थी। मालूसा चौंक पड़ा। कल्लू दरवाज़े की ओट में था।

हैड्क्लर्की से अवकाश प्राप्त मुरलीधर भीड़ में सबसे आगे थे। भीड़ मालूसा को देखकर शान्त थी। मुरलीधर जो चारखाने की कमीज पर पुरानी शाल डाले हुए थे, पूछ रहे थे, "यह कितने बजे की घटना है।"

मालूसा सकपका रहा था। वह क्या बताये ?``` समय का तो उसे अन्दाज भी नहीं था। घटना के बाद उसमें भी अजीब-सी भय-कम्पन दौड़ उठी थी। उसके होश के तोते उड़ गये थे। फिर भी, इस वक्त उसने हिम्मत करके शान्त भीड़ को देखकर कहा, "कौन-सी घटना ?"

इस बार भीड़ चमकी। उसने एक-दूसरे की ओर साश्चर्य देखा ! मुरलीधर ने अखबार में छपी उस घटना की ओर इशारा करते हुए कहा, "इस चित्र को पहचानते हो।"

चित्र रात वाले नवयुवक का था। उसके सिर पर पट्टी बंधी हुई थी। मालूसा ने स्थिति को समझते हुए कहा, हां, यही नवयुवक रात को आया था। इसने ही बड़ा-सा चाकू दिखाकर गल्ला लूटना चाहा था।"

भीड़ चकित-सी थी। मुरलीधर ने अगला प्रश्न किया, "इस पर कैसे काबू

पाया।

पूरी बात तो मालूखा को अभी तक नहीं मालूम थी। वह क्या बताता! चलते समय लाला उन दोनों को समझा गया था कि वे मुंह नहीं खोलें। पता नहीं पुलिस क्या चक्कर चलाये! वह जब तक नहीं लौटे, वे चुप्पी साधे रहें। उसने सारी स्थिति का जायजा लेकर केवल इतना ही कहा, "इस समय हमें क्षमा करें। यों भी काफी विलम्ब हो चुका है, पहले दूकान खोल लें।" भीड़ में उत्सुकता थी। वह टस से मस नहीं हुई वह तो चश्मदीन गवाह से सब कुछ सुनना चाहती थी। इस बीच दूध वाला आ गया। वह बोला, "हमें यह खबर मिल चुकी थी। सोचा, लौटते वक्त दूकान का एक चक्कर और लगा ले। शायद दूकान खुल गई हो।" मालूखा ने दूध लिया और कल्लू को आवाज लगाकर दूकान जमाने को कहा।

कल्लू ने फर्नीचर जमाना शुरू कर दिया। मालूखा ने अगरबत्ती जलाकर उसका धुआं लाला की तरह दूकान में चारों ओर घुमा दिया। पानी के छींटे भी उसने मार दिये।

अब तक भीड़ काफी छंट चुकी थी। कल्लू ने पहली चाय बनायी। उसमें से थोड़ी चाय भट्टी के हवाले की और ऊपर से दस-पन्द्रह दाने चीनी के मार दिये। सामने टंगे भगवान् के चित्र की ओर देखा और ठीक लाला की मुद्रा में उन्हें नमन किया। इसके बाद ग्राहकों की फरमाइश शुरू हो गई। धड़ाधड़ चाय बनने लगी। आज कल से भी ज्यादा ग्राहक थे। वे दोनों तेजी से ग्राहकों की मांग पूरी कर रहे थे। दूकान में आने वाले अधिकतर ग्राहक पहले भली प्रकार से दूकान का मुआयना करते थे और कुछ सूंघने का प्रयत्न करते थे। उनकी निगाह बिजली की गति से दौड़ते-भागते कल्लू और मालूखा पर टिकना चाहती थी परन्तु भीड़ इतनी थी कि उनकी निगाह उन्हें पकड़ नहीं पाती थी। वे मन को मसोस कर रह जाते थे। मालूखा और कल्लू की बराबर यह कोशिश बनी रही कि किसी परिचित ग्राहक के पास ज्यादा न ठहरे, अन्यथा उनमें अनेक प्रश्न होने लगेंगे।

दोपहर तक ग्राहकों का तांता लगा रहा। एक जाता और एक आता। प्रायः चर्चा का प्रमुख बिन्दु दूकान में घटी रात वाली घटना थी। कल्लू की निगाह बार-बार अखबार में छपी उस नवयुवक के फोटो के नीचे दिये समाचार पर ठहर जाती और वह इतनी व्यस्तता में भी सोच जाता कि यदि वह अखबार पढ़ पाता तो जान पाता कि उसमें क्या छपा है। वह लड़का कौन था? वह क्यों लाला को लूटना चाहता था? देखने से तो लगता नहीं था कि वह कोई चोर-उचक्का, लुटेरा होगा। मातृभूमि के सम्मान पर मर मिटने के लिए तैयार हो रहा था! अचानक उसे क्या हुआ कि वह लाला को चाकू दिखाने लगा! आखिर कोई कारण तो होगा ही?—या वह गुण्डा-बदमाश था! शक्ल तो रुआबदार थी। पता नहीं

अखबार मे उसके बारे में क्या छपा है ?

"लाला अभी तक नही आया ।" मालूखा ने कल्लू से कहा ।

"हा, मालूखा, लाला नही आया ।"

"क्या करे ?"

"तू घर से पता कर आ ।" कल्लू ने सलाह दी ।

"और कोई रास्ता नही है क्या ?"

"और क्या हो सकता है सिवाय इसके कि हम मे से कोई उसके घर जाये और पता करे ?" कल्लू ने कुछ सोचकर आगे कहा, "डर लगता है कि कही···।"

"कहीं क्या ?"

"पुलिस पकड ले गई थी न उसे ।" कल्लू ने शका प्रकट की ।

"बयान के लिये ।"

"कुछ पता नही । केवल बयान के लिये ले गई होती तो वह अब तक कभी का लौट आता । उसे तो रात ही लौट आना चाहिये था । मुझे तो डर लग रहा है ।" कल्लू ने मेज साफ करते हुए कहा ।

"हो सकता है ।"

"लाला ने बाट मारा था ।"

"हा । और मैंने उस पर मटका गिरा दिया था ।" मालूखा ने कहा ।

"और मैंने छडी मारी थी । कल्लू ने कहा ।

"लाला ने अपने बयान मे यह सब कह दिया होगा तो··?" मालूखा ने सशय से अभिभूत होकर कहा ।

"नही ।"

"क्यो नही ?"

"यदि ऐसा कह दिया होता तो अब तक पुलिस हमे भी गिरफ्तार कर लेती ।"

"तब ?" मालूखा ने कहा, "लाला को अब तक आ जाना चाहिये था ।"

"कहीं उसे ···।"

"नही···उसे पुलिस क्यो गिरफ्तार करने लगी ?"

"कही वह नवयुवक···।" कल्लू के होंठ काप गये ।

"क्या मतलब है ?···" कल्लू के अधूरे वाक्य का आशय समझते हुए मालूखा ने कहा ।

"नहीं···ऐसा नही होगा ।"

'और यदि हो गया तो···?"

"क्या ?"

।क वह नवयुवक···।"

"अखबार मे क्या लिखा है ?"

"मैं नही जानता।"

"मैं भी नहीं।" कल्लू को अपनी विवशता पर खीझ पैदा हुई। काश ! वह थोड़ा-बहुत ही पढ़ा-लिखा होता। उसने पुनः अपनी पूर्व सलाह दोहरायी, "मालूखा तू लाला के घर चला जा।'''सब मालूम पड़ जायेगा।"

"ठीक है।" मालूखा ने कहा और दूकान से बाहर निकल गया कल्लू ने देखा कि प्रोफेसर साहब खड़े-खड़े उनकी बातें सुन रहे थे। दूकान पर दो-चार ग्राहक, बाहर बैठे हुए थे। शायद वे किसी के आने की प्रतीक्षा मे थे। कल्लू उन्हें नहीं पहचानता था। उसने प्रोफेसर साहब का स्वागत किया।

प्रोफेसर नर्वदाशकर दूकान के अन्दर आकर बैठ गए। कल्लू ने अखबार लाकर उनके सामने रख दिया। कुछ देर बाद वह उनके लिये चाय लेकर लौटा।

इसी बीच मालूखां लौट आया। कल्लू उसकी ओर मुड़ गया। उसने पूछा, "क्यों-क्या हुआ ?"

मालूखा ने उदास होकर बांहे ऊपर करते हुआ कहा, "कल्लू ये कमीज तो बिलकुल गई।" वास्तव मे मालूखा की कमीज बाहो मे जा चुकी थी। पीछे से काफी फटी हुई थी। कल्लू ने सहमे हुए स्वर में कहा, "हां, मालूखा। वाकई कमीज पहनने लायक नही रही है। लेकिन अब'' !"

दोनो के सामने अचानक पहाड़ आ खड़ा हुआ। कल्लू के पास उसकी समस्या का कोई हल नहीं था। दोनो के पास एक-एक कमीज थी। उसके अलावा उनके पास दूसरी कमीज नही थी। रात को मालूखां सोच रहा था कि उन लोगो मे लड़ाई हो जाए तो वह बीच बचाव कराने उनकी लड़ाई मे कूद पड़ेगा और उसकी कमीज जो खस्ता हालत मे थी, तुरन्त फट जाएगी। उसे क्या पता था कि कुदरत कुछ और ही करिश्मा दिखलायेगी। उसे कल्लू की मा की बात याद आ रही थी जो उसे कल्लू ने बतायी थी कि मनुष्य को शत्रु का भी बुरा नही सोचना चाहिए मनुष्य बुरा कभी दूसरे का नही अपना करता है।

अपना ही है उसने कितना सत्य कहा था ! मालूखा ने कहा, "तू जा सकेगा।"

"मैं'' जा तो सकता हू परन्तु'''तू तो जानता है न,'''मालूखा।" कल्लू ने हकलाते हुए थोडा रुक कर कहा। उसके दिमाग मे लाला की पत्नी घूम गई उसको बालक समझ कर वह उसे घर के अनेक कामो मे लगा लेती थी। यद्यपि इस बात को लेकर लाला तथा उसकी पत्नी के बीच मे तू-तू मैं-मैं भी हो चुकी परन्तु वह अपनी आदत से बाज नही आती थी और इसी कारण लाला उसे घर बहुत कम भेजता था। मालूखां जानता था। उसने पुनः कुछ सोच कर कहा, "अच्छा तो मैं जाता हू।'''तू'''ध्यान रखना मैं शीघ्र लौटूगा।"

कल्लू बाहर से कप-प्लेट समेट कर अदर ले आया। उसने प्रोफेसर की ओर

देखा। प्रोफेसर अखबार पढ़ने में डूबा हुआ था। कल्लू प्रोफेसर की टेबुल के पास आकर खड़ा हो गया। प्रोफेसर नर्वदा शंकर ने बिना उसकी ओर देखे पूछा, "क्या बात है, कल्लू ?"

"प्रोफेसर साहब क्या आप कोई खास चीज पढ़ रहे हैं ?" कल्लू ने बात शुरू करने के लिए रास्ता बनाया।

'क्यों ?" उन्होंने अखबार में ही आंख गड़ाये हुए ही सहज कहा।

"यों ही…।" कहकर वह चलने वाला ही था कि प्रोफेसर नर्वदा शंकर ने उसे रोकते हुए कहा "मैं जानता हूं कि तुम क्या चाहते हो ?" प्रोफेसर ने चश्मा उतार कर मेज पर रखते हुए कहा और कुछ सोच कर कल्लू की जिज्ञासा का स्वत ही उत्तर दे डाला, "तुम लाला के बारे में जानना चाहते हो और जानना चाहते हो रात घटी घटना के बारे में।"

"जी हां, प्रोफेसर साब।"

"क्या तुम अखबार नहीं पढ़ सकते हो ?" प्रोफेसर ने यह जानते हुए भी कि वह अशिक्षित है, यह प्रश्न किया क्योंकि उसकी यह निश्चित धारणा बन चुकी थी कि हर पढ़े-लिखे नागरिक का यह फर्ज है कि वह अपने आस-पास के अनपढ़ व्यक्ति को पढ़ाना शुरू कर दे। बिना समूचा देश शिक्षित हुए न देश अपने लक्ष्य को पा सकता है और न व्यक्ति स्वतन्त्रता का पूरा-पूरा लाभ उठा सकता है। रूस ने महायुद्ध के साथ अशिक्षा की दासता से मुल्क को आजाद कराने का भी युद्ध जारी रखा था। वह ऐसे अवसर की तलाश में रहता था जबकि वह अशिक्षित व्यक्ति को शिक्षित बनने के लिए प्रेरित कर सके। कल्लू सिर हिलाकर स्पष्ट कर चुका था कि वह पढ़ा-लिखा नहीं है। प्रोफेसर कह रहा था, "तुम क्या हो और क्यों हो ? तुम्हारे आस-पास क्या है और कैसा है ? क्या होना चाहिए और कैसे होने चाहिए, यह सब जानना चाहते हो तो पढ़ना शुरू कर दो, आज से, अभी से और लगन के साथ।"

कल्लू का इस वक्त ध्यान लाला में था। वह प्रोफेसर का लेक्चर नहीं अखबार में छपी खबर को जानना चाहता था।

प्रोफेसर कह रहे थे, "हर आदमी को अपने और अपने आस पास को जानना चाहिए। जानते हो वह यह सब कैसे जान सकता है ?"

कल्लू ने सिर हिला कर कहा, नहीं, मैं नहीं जानता।

"तो जानो। मानव देह धारण करने का यही तो लाभ है।…और उस जानने के लिए…।"

"मैं पढ़ूं।"

"हां, तुम पढ़ो। जब जितना वक्त मिले। पढ़ो।" यह कह कर वह चुप हो गया।

कल्लू का ध्यान अभी तक अखबार की ओर था। वह सोच रहा था कि काश वह अखबार पढ़ पाता! पर कैसे? पढ़ना तो लोहे के चने चबाना है। वह अब कर ही क्या रहा है? क्या पढ़ाई इससे भी अधिक मुश्किल बात होगी? नहीं कदापि नहीं। तो उसे पढ़ना चाहिए। वह जरूर पढ़ेगा। जैसे भी हो, पढ़ेगा जरूर।

तभी हवा का एक तेज झोंका आया। आकाश में बादल घिर आये थे। प्रोफेसर ने मफलर को जो अभी तक गले में लटका हुआ था, सिर कानों पर लपेटा और बंद गले के कोट के बटन बंद किए। उनकी निगाह अपने से हट कर कल्लू पर गई। कल्लू एक कमीज व निकर में था और दोनों ही बेगली लगे थे। अचरज कि कल्लू को उस तेज हवा के हिमानी झोंको की बिलकुल परवाह नहीं है। वह जरा भी हिलाडुला नहीं, यथावत् खड़ा रहा। क्या उसे ठण्ड का अनुभव नहीं होता है, वह अपने से सवाल कर रहा था। उसने इस विषम स्थिति से घबरा कर कहा, कल्लू पढ़ना-लिखना एक इल्म है। इस माध्यम से तुम जो कुछ जानते हो, उससे बहुत ज्यादा जान सकोगे और इसके साथ जो कुछ तुम जानते हो या जानना चाहते हो उसको समझने का एक नजरिया पा सकोगे। "मैं नहीं कहता हूं कि इससे तुम्हें बहुत सारा धन मिल सकेगा या तुम बड़े आदमी बन जाओगे। हां, मैं इतना दावे के साथ कहता हूं कि तुम अपने व अपने आस पास को समझने की एक दृष्टि पा सकोगे। ऐसी दृष्टि जो तुम्हें अपने होने का अर्थ समझा सकेगी और जो नहीं हो, वह कैसे हो, इसके लिए तुम्हें रास्ता दिखा सकेगी। रहा यह कि तुम उस पर चलते हो या नहीं, दर असल वह एक जुदा बात है। आगे तुम्हारी इच्छा है।" नर्वदाशंकर जरूरत से ज्यादा बोल गये एक खासा भाषण दे डाला उन्होंने। वह नहीं चाहते थे कि फिर से प्रोफेसरी के झमेले में पड़ें और उस आदत के अनुसार लम्बी-लम्बी जिरह में फस जायें। उनके हाथ में अखबार था जिसे वह हल्के-हल्के मरोड़ने का प्रयत्न कर रहे थे।

अब तक वह अपने को शहर के एक उपेक्षित तथा गंदे इलाके में जम चुका था। उसका नाम था—भंगी पाड़ा। हालांकि आज कल इसका नाम बदल कर प्रभात नगर कर दिया था लेकिन लोग आज भी उस इलाके को भंगी पाड़ा के नाम से पुकारते हैं। पता नहीं इसका यह नाम कैसे पड़ा! भंगी पाड़े का यह अर्थ कतई नहीं है कि वहां भंगी बसते हैं।

अब तो कई जाति और धर्म के लोग वहां रहते हैं परन्तु वे हैं गरीब और उपेक्षित। यद्यपि नगरपालिका ने वहां विद्युत प्रकाश की व्यवस्था कर रखी है तथापि वहां अंधकार है—वे लोग अंध-विश्वास, रूढ़ियां और अशिक्षा की बेड़ियां पहने स्वतन्त्र होते हुए भी कैदियों का जीवन जी रहे हैं। उन्होंने अपने रहने का यही स्थान चुना। उनको अनुभव हुआ कि यहां उनकी जरूरत है। वह यहां बमुश्किल मकान ले पाये हैं किराये पर! लोगों की दृष्टि में वह आज भी संदिग्ध

व्यक्ति बने हुए हैं। उन्होंने अपने बारे में किसी को कुछ नही बताया। है परन्
उनके रहन-सहन, बात करने के तौर तरीके और पढने लिखने के शौक ने वहा
रहने वालों के मन में सशय घोल दिया है ।

वहा नगरपालिका का स्कूल है—प्राथमिक स्कूल। हाल ही मे नगरपालिक
ने वहा स्कूल का नये भवन मे स्थानान्तरण किया है। उन्होंने बहुत कोशिश
बाद वही रात्रि शाला चलाने की आज्ञा नगरपालिका से पाली वह अनुदेशक ब
गए। उन्हे कुछ रुपये भी मिलेंगे। यथार्थत: सौ-सवा रुपये मे कोई अनुदेशक नगर
पालिका को मिल नही रहा था। जो मिले भी वे विद्यालय चलाने वाले नह
सौ-सवा सौ रुपये ऐंठने वाले थे। इस प्रकार वहा अनेक अनुदेशक बदले गये
परन्तु उसे वहा कोई खास सफलता नही मिली। यद्यपि रात्रि शाला नौ से चौद
आयु वर्ग के लिए है तथापि उन्होने उसे सभी के लिए कर दिया—वहा साठ व
का वृद्ध भी आ सकता है। और मजेदार बात तो यह है कि वह कभी भी अ
सकता है। उसको यह भी नही सोचना कि वह अकेला है। यदि वह उस समय
आना चाहता है जबकि नगरपालिका का स्कूल रहा होता है तो वह उसे अपने
घर बुला लेते। मतलब यह है कि उन्होने घर भी विद्यालय बना डाला। फिर भ
बच्चे व लोग नही आते थे। बमुश्किल इकट्ठे होते तो एक-दो दिन बाद किनारा
कर जाते।

अचानक प्रोफेसर को कल्लू की याद आई। सोचा, उसे स्कूल मे लाया जा
सकता है। आज अखबार मे खबर भी गर्म थी और उधर गये भी एक माह से
अधिक हो रहा था।

कल्लू ने देखा कि आज प्रोफेसर खद्दर के कपड़े मे है। खद्दर भी मोटा।
दाढ़ी बढ़ा ली है। एकदम चोला ही बदल डाला है। सिर के बाल भी बड़े हुए
। पांव मे टायर वाली चप्पल पहने हुए हैं। उसने उत्सुकता से पूछा," प्रोफेसर
आप नेताजी बनने की कोशिश तो नही कर रहे हैं।"

इस पर वह जोर से ठहाका लगा बैठे। आज वह एक लम्बे अर्से बाद इतनी
जोर से हंसे थे। वह बोले ,'नही, कल्लू। मै नेताजी नही, मास्टर बनने का प्रयास
कर रहा हू।"

"मास्टर ?" कल्लू के भेजे मे यह बात ठीक से नहीं उतरी। वह मन ही मन
हिसाब लगाने लगा कि मास्टर से तो प्रोफेसर बहुत बड़ा होता है फिर वह
प्रोफेसर से मास्टर बनने का प्रयास क्यो कर रहे है? यह यह कैसी उल्टी गंगा बहा
रहा है? उसने भोलेपन से पूछा, "आप तो प्रोफेसर है।""मास्टर बड़ा होता है
प्रोफेसर ?"

"... समान होते हैं।"

।"

"तुम्हें पता है।"

सामने कालेज है।"

"तो ?"

"वहां प्रोफेसर हैं। वे ऊंची क्लास को पढ़ाते हैं और मास्टर छोटी क्लास को।" कल्लू ने अपने ज्ञान का पूरा-पूरा लाभ उठाया।

"पर पढ़ाते तो दोनों हैं।" प्रोफेसर नर्मदाशंकर ने सखार कहा, "पहले मैं बड़ी क्लासों को पढ़ाता था और अब छोटी क्लासों को पढ़ाने की कोशिश कर रहा हूं। तो मैं मास्टर ही हुआ न।"

क्या आप रिटायर हो गये हैं ?" कल्लू को पता कि था कि रिटायर हुए लोग छोटी-छोटी नौकरी ढूंढते, घूमते हैं। हेडक्लर्क मुरलीधर भी रिटायर होकर एक भट्टे पर मुंशी है। रिटायर होने पर तनख्वाह तो मिलती नहीं है और खर्च ज्यों के त्यों बने रहते हैं। उसे यह बात बहुत बुरी लगी कि व्यक्ति बूढ़ा होने लगता है और वह काम काज भी ज्यादा नहीं कर सकते तब उसे रिटायर कर दिया जाता है। प्राईवेट नौकरी में काफी मरना-खपना पड़ता है। सरकारी नौकरी में ठाट हैं। काम करो या मत करो, तनख्वाह महीने पर पूरी। ऊपर की आमदनी अलग। ... हड़ताल करने न जाने क्या-क्या सुविधाएं हैं। देरी से आए और भाग जाए, उन्हें कोई कहने-सुनने वाला नहीं है। वे अपनी मरजी के मालिक हैं। हमेशा यूनियन की धौंस ऊपर से देते रहते हैं। इसके-उसके खाने-पीने की चर्चा करते रहते हैं। उसकी समझ में कुछ नहीं आया। क्या वह यह सब पढ़ने-लिखने से जान सकेगा? इस प्रश्न ने उसमें नया उत्साह पैदा कर दिया।

"हां, मैं रिटायर हो गया हूं।"

"पेंशन मिलती है या फण्ड मिला है।"

"फण्ड मिला था, वह जाता रहा।" उसने उसकी सहानुभूति अर्जित करने के लिए कहा।

"तब गुजर-बसर बड़ी मुश्किल से चलती होगी।"

"वह तो है। तभी तो हम मास्टर बन रहे हैं और तुम्हें पढ़ाना चाहते हैं।"

उससे क्या फायदा होगा आपको ?"

"नौकरी पक्की हो जाएगी।"

"यह कैसी नौकरी है ?"

"जितने बच्चे पढ़ाओ, उतने ही पैसे।"

"ओह ! तो आपकी नौकरी का सवाल है।"

"नहीं, पेट का सवाल है।" उसने उसकी संवेदना का पूरा-पूरा लाभ उठाने के लिए कहा।

'मुझे कहां आना होगा ?"

घर की खस्ता हालत ने उसे रोक दिया। जहाँ-तहाँ उसने नौकरी भी की परन्तु वे नौकरियाँ उसे पसंद नहीं आईं। वह खोज करना चाहता था और इसलिए वह ऐसी जगह नौकरी करना चाहता था, जहाँ वह अपनी पढ़ाई का सदुपयोग कर सके। लेकिन वह सम्भव नहीं हो सका। '' वह ऐसी माचिस बनाना चाहता था जिसमें मसाला बहुत कम लगे और माचिस की तीली देर तक जल सके। उस पर उसने बहुत कुछ किया। उधार-सुधार भी लिया और चाहा कि उसे कहीं से आर्थिक सहायता मिल सके। उसने सरकार को भी विस्तार से लिखा। साथ में अपनी पूरी योजना भेजी परन्तु कहीं से कोई जवाब नहीं मिला। इसी बीच कलकत्ते से उसका साक्षात्कार आया। वहाँ उसके चयन का मतलब था कि मन पसंद नौकरी प्राप्त करना। उसने बहुत कोशिश की कि उसे कहीं से पाँच-छह सौ रुपया मिल जाए ताकि वह नौकरी के लिए साक्षात्कार दे सके। परन्तु उसे किसी ने एक पैसा नहीं दिया। वह परेशान होकर अपनी किताबें बेच आया उनसे उसे सौ रुपये मिले।"

कल्लू के सामने माचिस की जली तीली की तरह सौ का नोट घूम गया। वह लाला से कह रहा था, "खुले नहीं हैं"। लाला ने अपनी अण्टी खोली और सौ के खुले करने लगा।

"वह सौ रुपये उसने तुम्हारे लाला को दिये। उसने चाय पी और सुबह से वह भूखा-प्यासा पैसे जुटाने में लगे रहने के कारण कुछ खाया नहीं था। तब तक उसके मन में लाला से रुपये छीनने का विचार नहीं था। उसने आज तक कभी चोरी नहीं की थी। वह कालिज में अपनी ईमानदारी के लिए प्रसिद्ध था। वह प्रोफेसर का भी चहेता था।" प्रोफेसर ने कुछ रुक कर कल्लू की ओर देखा। कल्लू पूछ रहा था, "फिर भी किसी प्रोफेसर ने उसकी मदद नहीं की।"

"उसने बयान में लिखाया है कि प्रोफेसर उससे बेगारी लेना चाहते थे, जिसके वह सख्त खिलाफ था।"

"ओह !" कल्लू काँप गया। उसने उसके हाथ में पूरे जोर से छड़ मारी थी और वह उससे ज्यादा जोर से चीख पड़ा था। कल्लू ने अपने को सँभालते हुए कहा, "उसके पास चाकू था—बड़ा चाकू'''एकदम नया और धारदार !"

"हाँ था।"

"वह कहाँ से आया ?"

"वह उसे अपने पड़ौस के नामीगिरामी गुण्डे ने यह कह कर दिया था कि वह उसके घर पहुँचा दे। उसे वह मना भी नहीं कर सकता था। फिर वह उसके लिए सहायक ही सिद्ध हुआ था।"

"गुण्डा और सहायक !" कल्लू के मुहँ से अचानक बिना सोचे-समझे यह प्रश्न निकल गया था।

व मुड़ने से विरूप हो गया था—झुर्रीवाला। उसकी एक आख के बीच मे छेद हो गया था। लगता है कि अखबार किसी कील से टकरा गया था। वह इतना योग्य होकर, ऐसा बुरा काम करने पर आमादा हो गया। वहीं उसने लाला के चाकू मार दिया होता या लाला के बाट मारने से वह मर गया होता तो क्या होता! दोनो अपरिचित हैं—न लाला उसे जानता है और न वह लाला को। न उसकी पूर्व योजना ही थी। सब कुछ अजीब इत्तिफाक था। पर क्यों? कौन उसे इतने खतरनाक मोड़ पर ले आया? किसने उसे ऐसे दुष्कृत्य के लिए उकसाया? और क्यो वह यह जानते हुए कि हत्या का परिणाम मौत की सजा हो सकती है, तैयार हो गया? इसके लिए कौन जिम्मेदार है?…उसके सामने धरती घूमने लगी। उसे लगा कि वह नवयुवक अट्टहास कर उठा है और उसके अट्टहास से चहु ओर कम्पन हो उठा है। मानो वह पूछ रहा है—हे, दिशाओ! ओ धरती व आकाश! ओ हिमालय और समुद्र! ओ गगा और गोदावरी!…तुम बताओ?—सच-सच बताओ।…तुम्हें कसम है ब्रह्मा औ' ब्रह्मपुत्र की! तुम्हें कसम, शकर औ' कृष्ण की!…जो कहना, सच-सच कहना।—बताओ—इसके कृत्य के लिए कौन दोषी है—मैं या समाज अथवा सरकार!…बताओ कौन दोषी है?…कौन है दोषी? कौन है?…कल्लू घबरा उठा और उसने मेज पर से अखबार उठा कर उसके टुकड़े-टुकड़े कर डाले। इसके बाद वह उन टुकडो को मुट्ठी में दबा कर बाहर आया। बाहर हिमानी हवाएं बरछे सा प्रहार कर रही थी। उसने उन निरकुश हवाओ के हवाले धीरे-धीरे उन टुकडो को कर दिया। वे टुकड़े हवाओं की नोक पर नाचने लगे। उसे लगा शनै-शनैः वे टुकड़े प्रलयकर रूप धारण करने जा रहे हैं और शीघ्र वे ताण्डव कर उठेंगे। वह टकटकी बाध कर तब तक उन टुकड़ो को देखता रहा जब तक वे प्रलयकर ताण्डव करते-करते थक कर बेदम न हो गए। वह फिर मुस्करा उठा। मानो उसने कोई जबर्दस्त काम किया हो।

"चाय देना, भाई।" कोई नया ग्राहक उसे पुकार रहा था। वह शीघ्र ही अपने मे लौट आया। हालाकि उसका मन भारी हो गया था और उसका माथा दर्द कर उठा था। वह सिर नीचा किए चुपचाप चाय बनाने लगा। पानी खौल रहा था। कल्लू का मन भी उबल रहा था। दोनो मे समता थी और दोनों मे विषमता, जिसे वह नहीं जानता था।

7

"मैं तुझे और उधार नहीं दे सकता हू।…सात रुपये पहले के हैं और उनका ब्याज अलग।…तू पहले वह रकम चुका दे।"

"मैं तेरा पैसा-पैसा लौटा दूगी, सेठजी, विश्वास करो!"

"कंगालों का विश्वास !" सेठ जोरों से खिलखिला पड़ा। वह जैसे-तैसे हं
रोक कर बोला, "तू मुझे क्या बेवकूफ समझती है ?"

"कैसी बात करते हो, सेठ जी—आप और बेवकूफ ! आप तो सारे शहर
के अक्लमंद हैं।" उसने मिन्नत के स्वर में कहा। इसके साथ ही धोती का पल्लू
सिर पर ठीक से ले लिया।

"तू दिमाग मत चाट, चुपचाप अपना रास्ता नाप।"

"कल से मुझे ठेकेदार ने ईंट ढोने के लिए रख लिया है।... सिर्फ आज की
बात है।...सेठ, हम पर दया करो। हम लोग तेरा यह एहसान जिन्दगी भर नहीं
भूलेंगे।" वह गिड़गिड़ा उठी थी। उसके आंखों में आंसू उभर आए थे। उसने
अपनी फटी हुई धोती के हिस्से को पल्लू की आड़ में करते हुए यह प्रयत्न किया
कि सेठ उस पर पसीज जाए परन्तु ऐसा हुआ नहीं। सेठ कहने लगा, "एहसान,
वेहसान सब बकवास है। दया-मया का चक्कर यहां नहीं चलता। तुमसे कह
दिया कि तू अपना रास्ता नाप।"

तभी अन्दर से सेठानी आ गई। वह बोली, "क्यों जी, अपना नौकर छुट्टी
गया है। क्यों न इसके लड़के को तब तक के लिए रख लेते हो।"

सेठ ने उस लड़के की ओर घूर कर देखा और कहा, "इरादा बुरा नहीं है।
बोल, क्या कहती है ?...रुपया रोकड़ मिलेगा और ब्याज में तेरा लड़का हमारे
यहां तब तक काम करेगा जब तक हमारा नौकर लौट नहीं आता।"

वह सकपका गई। उसका नन्हा-सा पुत्र क्या नौकरी करेगा ! अभी उसकी
उम्र आठ-नौ वर्ष से ज्यादा नहीं होगी। वह अपने आंखों के तारे को कैसे अपने से
अलग कर सकती है। उसका कलेजा फटा जा रहा था। काश ! उसमें सीता माता
जैसी शक्ति होती तो वह धरती मां से अनुनय-विनय करती और कहती, 'मां, तू
मुझे सीता मां की तरह अपने में समेट ले।' पर तू मुझ अभागिन को जगह नहीं
देगी ! तू भी तो धनिक की औरत को मानती है ! कहां वह जगमाता सीता
और कहां मैं कोयले बीनने वाली मजदूरन ! मुझ पर तू रहम क्यों करे ? कभी
नहीं—कभी नहीं।"

"मैं काम करूंगा।"

"क्या नाम है तेरा ?" सेठानी ने पूछा।

"रम्मू।"

"तो जा भागवान्, यहां से रास्ता नाप।...बेकार समय खराब मत कर! ...एक तो नौकरी दें और ऊपर से निकम्मों की उल्टी-सीधी बातें सुनें!...क्या हमने भाग खाई है!..." सेठ बड़बड़ा उठा।

"तुम चुप भी करो, जी।...देखते नहीं वह नन्हा-मुन्ना है।...कौन ऐसी मां होगी जो अपने इतने छोटे से लाल को तुम जैसे के पास छोड़ देगी।" सेठानी के स्वर में आत्मीयता थी और स्नेहार्द्रता! वह जानती थी कि कल से उसे घर का सारा काम करना पड़ेगा! सेठ को तो काम करना नहीं है। उसे क्या नौकर मिले या नहीं मिले! मरना तो उसको है अतः उसने बड़ी होशियारी से बिगड़ती बात को संभालने की कोशिश की। सेठजी किंकर्तव्यविमूढ़ से रह गए। हालांकि उन्हें इतना तो विश्वास था कि सेठानी मक्खीचूस परिवार की है, वह जरूर कोई चाल चल रही है।

"बहिन, क्षमा करना,...मैं जरा कड़वा बोल गई।"

"स्त्री ही स्त्री के दुःख को समझती है। ये पुरुष क्या खाकर समझेंगे! बहिन, इसमें क्षमा तो हमें मांगनी चाहिए।" सेठानी के स्वर में मिश्री घुल रही थी। वह *साक्षात् गंगा का अवतार हो चली थी। उसमें दैवीगुण दमक उठे थे।* वह अन्दर जाती हुई कहती गई, "बहिन दो मिनट में आई, जाना नहीं।"

सेठ इस नाटक को ठीक-ठाक न समझने के कारण बैठक की ओर चल दिया। उसकी मां भावविभोर होकर देखती गई। इतने में सेठानी ढेर सारी रोटियां और सब्जी लेकर लौटी। वह दोनों को वहीं खाने के लिए विवश करने लगी। कल्लू की तो भूख रोटी देखते ही जागृत हो गई। उसकी मां को उन रोटियों में भगवान् नजर आये। उसने उनको भरपेट खाना खिलाया। शेष छह रोटियां भी वह उन्हें दे दीं। कल्लू पानी पीकर स्वस्थ हो गया। उसके चेहरे पर आभा लौट आई। उसकी मां कहने लगी, 'सेठानी जी, मैं आपका यह एहसान कभी नहीं भूल सकती।...कभी नहीं। आपको नहीं मालूम, कई दिनों से रोटी का एक टुकड़ा भी हम दोनों को नहीं मिला।...भगवान् आपका भला करे। आपको खूब दे।"

सेठानी धीमे से बोली, "बहिन, एक बात कहूं, आप बुरा तो नहीं मानेंगी।"

"आपका बुरा कतई नहीं, बहिन!" उसने साश्चर्य कहा।

"आपका बुरा क्यों नहीं...!" सेठानी ने अधूरा वाक्य हवा में तैरा दिया।

"गरीब किसी की बात का बुरा नहीं मानता, सेठानी जी!"

"क्यों नहीं मानता! हर इन्सान के वही खून है, वही आंख, नाक-कान आदि हैं। हर इन्सान का मान-सम्मान है, बहिन।" सेठानी ने अपने को देवी की भूमिका में लाते हुए कहा। उसे बहुत आनन्द आता था जब कोई उसे भरपूर सम्मान की दृष्टि से देखता था और श्रेष्ठ अलंकरणों से विभूषित करता था।

कल्लू की मां ने गद्‌गद होकर कहा, "आप साक्षात् देवी हैं, सेठानी जी!...

वास्तव में आप महान् हैं। इस दुनिया में आप जैसा शायद ही कोई हो!" कुछ सोच कर वह कहती, "आप अभी-अभी कुछ कह रही थी, सेठानी जी!'''आप तो आदेश दीजिए!"

सेठानी का हृदय आनन्द विभोर हो उठा। जहा सेठ रात-दिन दूसरों से लड़ता-झगड़ता था और दूसरे से प्रत्यक्ष में न सही तो अप्रत्यक्ष में दूसरों की गालियां खाता रहता था, वहां वह दूसरों का मन जीत कर बिना कुछ खास किये-दिये आसीस बटोरती रहती थी। उसे इसी में आनन्द आता था। हालांकि वह भी कजूस थी और पैसे-पैसे का हिसाब रखती थी परन्तु वह व्यावहारिक अधिक थी और दूसरे के आशीर्वाद बटोरने में वह दक्ष थी। वह अपने लालच या लक्ष्य को कभी सीधे प्रकट नहीं होने देती थी। उसने हर प्रकार से कल्लू की मां का मन बांध कर कहा, बहिन, तुम कल से ठेकेदार की मजूरी करने जाओगी।"

"हां, सेठानी जी।"

"और इस फूल को भी साथ ले जाओगी।"

"हां, सेठानी जी!" उसने सहज भाव से कहा!

"इसको भी ठण्ड-पानी में अपने साथ सताओगी।"

"क्या करें, सेठानी जी, और कोई चारा भी नहीं है।"

"इसका बाप?"

वह कुछ देर तक अंधेरे में रास्ता तलाशती हुई बोली, "पता नहीं।" इसके साथ ही उसका हृदय भर आया। कदाचित् वह फफक पड़ती परन्तु उसने जैसे-तैसे हृदय-बांध को रोक लिया। सेठानी ने भी उससे इस संबन्ध में अधिक जांच पड़ताल नहीं की। वह समझ गई कि अब इस सम्बन्ध में कुछ पूछा तो वह अपने हृदय को बहने से रोक नहीं पाएगी। उसने अपनी बात के लिए रास्ता बनाते हुए कहा, "तुझे मेरा भरोसा है क्या?" उसने अत्यन्त आत्मीयता से और नाटकीय मुद्रा में अपने कथन की अस्पष्ट अर्थप्रियता को व्यक्त किया था, जिसका उत्तर उसे नहीं उसके हृदय को देना था। वह उत्तर जानती थी। कल्लू की मां कह रही थी, "आप यह कह कर हमें और गरीबी को लज्जित न करें, सेठानी जी। आप तो आज्ञा दें।"

तू गरीबी को बीच में मत ला। गरीबी लज्जा का कारण कतई नहीं है।''' यों देखें तो हरेक गरीब है। गरीब केवल पैसे से ही नहीं होता। पैसा होते हुए भी आदमी को गरीब से भी बदतर जीवन जीना पड़ जाता है।'''यह बात दूसरी है कि उस व्यक्ति को उसकी अर्थ दीवारें बाहर आने से रोकती रहती हैं? वह बेचारा तो अपने मन को किसी पर प्रकट कर हल्का भी नहीं कर सकता, बहिन। उसे अमीरी काटने को आती है। वह बढ़िया पलंग पर सो नहीं पाता। [illegible] बढ़िया भोजन उ[illegible] लगता है।'''

वास्तव में आप महान् हैं। इस दुनिया में आप जैसा शायद ही कोई हो!" कुछ सोच कर वह कहती, "आप अभी-अभी कुछ कह रही थीं, सेठानी जी!"आप तो आदेश दीजिए!"

सेठानी का हृदय आनन्द विभोर हो उठा। जहां सेठ रात-दिन दूसरों से लड़ना-झगड़ता था और दूसरे से प्रत्यक्ष में न सही तो अप्रत्यक्ष में दूसरों की गालियां खाता रहता था, वहां वह दूसरों का मन जीत कर बिना कुछ खास किये-दिये आशीष बटोरती रहती थी। उसे इसी में आनन्द आता था। हालांकि वह भी कंजूस थी और पैसे-पैसे का हिसाब रखती थी परन्तु वह व्यावहारिक अधिक थी और दूसरे के आशीर्वाद बटोरने में वह दक्ष थी। वह अपने लालच या लक्ष्य को कभी सीधे प्रकट नहीं होने देती थी। उसने हर प्रकार से कल्लू की मां का मन बांध कर कहा, बहिन, तुम कल से ठेकेदार की मजूरी करने जाओगी।"

"हां सेठानी जी।"

जिसने उनको अलग-अलग अनुभव दिया था।

अचरज! वे चारो उस हाथी के पास से कई बार गुजर जाते हैं परन्तु उसे पहचान नही पाते।

"कोई पेड के तने को छूकर कहता है—वह यह था।"

तो दूसरे मना कर देता है क्योंकि उनमें से उसके अलावा किसी ने हाथी का पाव नहीं छुआ था। जिसने उसके पेट को छुआ था, वह चट्टान पर लाकर उन्हे खडा करके कहता कि वह यह है। उसकी बात से शेष साथी इनकार हो जाते। कहने का मतलब यह है कि वे हाथी के चारो ओर घूमते हुए भी उस हाथी को नही पहचान पाते।

कल्लू यहीं कहानी खतम कर देता और चुप हो जाता।

सेठानी पूछती, "वे चारो व्यक्ति आख की रोशनी लौट आने पर हाथी को क्यों नही पहचान पाते?···क्यो, बेटे, तुम इसका कारण बता सकते हो।"

कल्लू ने बहुत जोर लगाया परन्तु वह कोई उत्तर नही दे सका। अन्त मे उसने कहा, "नहीं।"

"तुम, बता सकती हो, कल्लू की मा, कि वे चारो उस हाथी को आखो की रोशनी आने पर क्यो नहीं पहचान सके।"

"नही सेठानी जी। मैंने कहानी सुनी थी। कल्लू कहानी सुनाने की बहुत जिद कर रहा था तो उसे सुना दी थी।"

"इसका अर्थ नहीं जाना।"

"नहीं, सेठानी जी।"

"तो सुनो,···बेटे तुम भी सुनो क्या तुमने भगवान् देखा है।"

"नहीं।"

"सुना है।"

उसकी मा बोली "हा।"

"आज तुम देख रही हो कि अनेक धर्म आपस में लड-मर रहे है। वे भगवान् की अलग-अलग कल्पना करते हैं और एक दूसरे के अनुभूत भगवान् को नही मानते। क्योंकि जब उन्होने उसे छूकर अनुभव किया था तब उनको दीखता नही था।···जब उन्हे दीखने लगा तब वे उस अनुभूत भगवान् को, जिसके अगो का उन्होंने अलग-अलग अनुभव किया था, वे पहचानने से आपस मे इनकार करते रहे क्योंकि उन्होंने उसके एक-एक हिस्से को छूकर पहचाना था, किसी ने उस सम्पूर्ण हाथी को नहीं छुआ था। आज भी इसी कारण हम आपस मे उलझ रहे हैं।

थोड़ी देर मे ही उसकी आखो की ज्योति लौट आई और उसकी शब्देन्द्रिय सक्रिय हो गई। उसने कुछ देर के लिए अधा-बहरा होकर जो कुछ अनुभव किया था, अब वह उसको देखना-सुनना चाहता परन्तु उसे कुछ भी दिखलाई व सुनायी नही दिया। वह अपने आपको झकझोरता और खेंचू से छोटी बाल्टी भर कर वह लौटने लगा। उसके पाव ठीक मे उठ नही रहे थे। उसकी देह मे जड़ता जैसी भारी चीज समाती जा रही थी।

रह-रह कर उसके सामने लाला का पिंजरा और उस पिंजरे मे बद तोता घूम गया। उसने चाहा कि वह बाल्टी जमीन पर रख कर फिर से हवा मे हाथ हिलाये और धीमे से पिंजरे मे बंद तोते से वह टाटा टा'''टा कहे। उसने बाल्टी रखी और अपने सीधे हाथ को उल्टे हाथ मे पकड़ कर हवा मे उछाल दिया और खुश हो लिया। इस बार उसका हाथ, चाहे धीमे से ही सही परन्तु हवा मे झूला अवश्य और वह धीमे से फुसफुसाया भी—टा'''टा' आ''। तभी उसके बायें गाल पर एक जोर का तमाचा पड़ा। दूसरा तमाचा उसके दायें गाल पर पड़ा। पाचो उगलिया उसके गाल पर उभर आई। सेठ उसे दुतकारते हुए कह रहा था, "हरामी के पिल्ले तू यह क्या कर रहा है।'' हरामजादे, तुझे इसलिए रोटियाँ चरा रहे हैं कि यहाँ आकर पहलवानी करे और पूजा की बाल्टी को गदी जमीन पर रख दे।'''"

कल्लू के स्वप्न बिखर गए। वह अपने को आहत पक्षी के समान लहूलुहान हुआ अनुभव करने लगा उसे अपनी मूर्खता पर क्रोध आ रहा था। उसकी समझ मे नही आया कि वह ऐसी विद्रूपमयी शरारत क्यो और किस प्रेरणा से कर उठा! उसका सिर चकरा रहा था। सेठ पुन चीखा, "अबे, खड़ा-खड़ा मेरे मुह की ओर क्या देख रहा है! जा मर, बाल्टी माज-धोकर पुन पानी लेकर आ।" "तेरी मालकिन को बताऊगा जो तुझे सिर पर चढ़ाये हुए है और नौकर के साथ इन्सानो की तरह व्यवहार देने पर कुलकें करती है। कुत्ते की पूछ बारह साल धरती मे गड़ी रही और जब निकाली तब टेढ़ी की टेढ़ी थी।"

"नहीं, सेठ जी, मालकिन से कुछ मत कहना। मैं फिर से ऐसी गलती नहीं करूगा।" कल्लू हाथ जोड़ कर रिरिया रहा था और हा-हा-खा रहा था।

सेठ ने देखा कि उसके गाल पर उसके तमाचे की लकीरें उभर आई हैं। उसका काला कलूटा चेहरा लाल पड गया है। वह कांप रहा है। वह सोचने लगा कि सेठानी पूछेगी कि उसके गाल पर यह क्या है? उसे किसने मारा है? वह बता देगा तो उससे तकरार शुरू हो जाएगी। वह पानी की शुद्धता अशुद्धता पर ध्यान न देकर उसके गाल पर उभर आई उगलियो के निशान पर जान खा जाएगी उसके व साथा के काम करने के तरीके मे यही तो अन्तर है कि वह काम लेने वाले के दिमाग पर काम का बोझ नही पड़ने देती और वह काम को चीख-चिल्ला कर

को जानकर चकित थी और कल्लू सेठानी के उस सार को न समझ सका !

दूसरे दिन से वह कल्लू को सेठानी के पास छोड़ कर मजदूरी के लिए जाने लगी। कल्लू सेठानी के पास रहने लगा था। उस दिन, रात को वहीं सोने के कारण वह सुबह-सुबह खेंचू से पानी लेने गया। कोहरे के कारण सूरज नहीं निकला था। वह पानी खींचता-खींचता रुक गया अचानक सामने देखने लगा।

माताएं अपने-अपने बच्चों के साथ वहां इकट्ठी हो रही थीं। लड़के पैंट, टाई में थे। नीला कोट पहने थे। पांवों में उनके बूट थे। छोटी-छोटी लड़कियां सिर पर स्कार्फ बांधे हुए थीं। वे स्कर्ट-ब्लाउज में थीं। उसके ऊपर वे नीले स्वेटर पहने हुए थीं। कुछेक की पीठ पर बस्ते लटके हुए थे और कुछ की माएं बस्ता लिए खड़ी थीं। कल्लू उनमें हमउम्र लड़कों को देख रहा था, जिनके लाल चेहरे सूरज के प्रकाश से दमक रहे थे। उनकी आंखों में चमक थी। वे उसे बहुत अच्छे लग रहे थे काश ! वह भी उनमें से एक होता। थोड़ी देर के लिए कल्पना में उसने अपने आपको उनके बीच में खड़ा पाया। उसकी मां सजी-संवरी उसके पास खड़ी हुई है।

सुन्दर-सी बस आकर वहां रुकी। वे एक-एक करके बस में बैठने लगे। बस चलने से पूर्व वह कह रहे थे—ममी···टाटा · टाटा, ममी· ·टाटा···। बस हल्की सी सरकी कि उनके छोटे-छोटे सुन्दर हाथ हवा में, बस की खिड़कियों में से, झूलने लगे निर्झर की अनगिनत फुहारों से। उनके ओंठ एक साथ गुनगुना उठे···ममा ···ममी ··ममा···टाटा टाटा ता ता···! उसे लगा, मानो आसमान गा उठा है नाचते हुए !···अथवा कहीं दूर से आते हुए पक्षी एक साथ गा उठे हैं ! वह भी उन गीतों को दोहराने की सोचकर रह गया। उनकी माएं लौट चुकी थीं।

अब वातावरण जन-शून्य था। उसमें कल्पना की कोंपलें फूटने लगीं और वह थोड़ी देर के लिए भावाभिभूत होकर रह गया। उसका मन हो रहा था कि वह हवा में अपने काले-कलूटे हाथ उछाले और मुस्करा कर धीमे से टाटा कहे। उसकी शब्द लहरियों से आकाश गूंज उठे।

वह अपने आपको रोक नहीं पा रहा था। उसने चारों ओर देखा। वहां कोई नहीं था। उसने अपने में साहस जुटाया और पुरजोर से टाटा···ममी···कहने की कोशिश की। परन्तु वह कह नहीं पाया। उसने पूरी शक्ति लगा कर हवा में उन बालकों की तरह हाथ हिलाना चाहा परन्तु उसका हाथ जाम हो गया। वह जरा से भी हिलडुल नहीं सके। पता नहीं उसमें से ताकत कहां चली गई। उसने अपने हाथ को छूकर देखा। उसे लगा कि वह हाथी की सूंड पर हाथ फेर रहा है उन अंधों में एक व्यक्ति की तरह। यकायक में वह अंधा बहरा भी हो गया था। उसे अपनी जड़ता पर अचरज हो रहा था।

कल्लू ने साश्चर्य उस तोते की गतिविधियों को ध्यान से देखा। उसने इससे पूर्व उसे इतना उद्दण्ड और उपद्रवी कभी नहीं देखा था। वह समझा कि कदाचित तोता भूखा है। उसने तीन चार मिर्चें पिंजरे में डाल दीं। लेकिन उसने मिर्चों की ओर ध्यान नहीं दिया। अब तो वह पुरजोर से पिंजरे को झकझोरने लगा और अपनी चोंच पिंजरे पर मारने लगा। उसने पिंजरे पर इतने जोर के आक्रमण किये कि उसकी लाल-लाल चोंच लहूलुहान हो उठी। तोता बेदम हुआ जा रहा था।

कल्लू उसका यह हाल देखकर घबरा उठा। वह पेशोपेश में पड़ गया कि वह क्या करे! उसे लगा कि वह पागल हो उठा है। यदि उसे तुरन्त नहीं छोड़ा गया तो वह अपनी जान दे देगा। इस वक्त वहां सेठानी भी नहीं थी।

कल्लू ने जी कड़ा करके पिंजरे का द्वार खोल दिया। परन्तु तोता चुप होकर रह गया। उछल-कूद छोड़ दी। थोड़ी ही देर में निढाल होकर पिंजरे के एक कोने में पड़ा रह गया। कल्लू ने पिंजरे हिलाया डुलाया। तोता तनिक भड़भड़ा कर जहां का तहां पड़ा रह गया।

कल्लू घबरा गया। तोते ने अपनी चोंच को लहूलुहान कर लिया था अत कहीं वह दम न तोड़ दे। वह उसके लिए पानी लेने के लिए अन्दर गया। शायद पानी के छींटें मारने से उसको चेत हो सके। वह लौटा तो पिंजरा खाली था। उसने चारों ओर नजर दौड़ाई परन्तु उसे कहीं तोता नजर नहीं आया।

कल्लू की निगाह नीम की टहनियों पर बैठे हुए तोतों पर गई। उसने ध्यान से उन तोतों की चोंचों को देखा शायद उसे उनमें से घायल चोंच वाला तोता दिखलाई पड़ जाए। वह देख-देखकर हार गया। उसे वह घायल तोता नजर नहीं आया। थोड़ी देर बाद वे सब तोते पंख फड़फड़ा कर उड़ गए। अब नीम का पेड़ मौन था। उसकी टहनियां उदास थीं। कल्लू का मन भारी हो गया।"

सेठ लौट आया। सेठानी अपनी मां के घर चली गई थी। वह नहीं लौटी। सेठ ने देखा कि पिंजरे का दरवाजा खुला पड़ा है और उसमें तोता नहीं है। उसका माथा ठनका। वह पुरजोर से चिल्लाया, "कल्लू ऽ।'''कहां मर गया! इधर आ।'''यहां आ।'''हे भगवान। यह क्या हुआ!" वह घबरा उठा। उसे लगा जैसे किसी ने बलात् रौरव नरक में धकेल दिया है और उस पर भयानक राक्षस व जीव-जन्तु टूट पड़े हैं। वे उसका मांस नोच रहे हैं।

कल्लू की देह कांप रही थी। वह वहां से भाग जाना चाहता था। सेठ समझ गया था कि यह अपराध कल्लू ने किया है। उसने कल्लू की एक नहीं सुनी। न पिंजरे पर लगे खून के धब्बों को उसकी बात का साक्ष्य माना। वह लात घूंसों से उस पर टूट पड़ा। उसके होंठ भित्ति में ठुकी कील से टकरा गए। उसके खून बहने लगा। उसके हाथ पांव में खरोंच आ गई। वह रोता पिटता निढाल होकर गिर

काम करने वाले के मन मे न केवल अपने प्रति अपितु उस काम के प्रति घृणा पैदा कर देता है। जबकि लगभग काम दोनो ही पूरा लेते हैं। काम करने वाला सेठानी के काम करने मे आनन्द का अनुभव करता है और भाग-भाग कर काम करता है जबकि उसके काम करने मे बोझ का अनुभव करता है और उस काम को अनमने मन से करता है। उसने सेठानी से तकरार से बचने का रास्ता बताने की सोचते हुए कहा, "तेरी मालकिन को सब पता चल जाएगा, चाहे मैं न भी बताऊ।"

"कैसे ?" कल्लू ने बाल्टी का पानी फैलाते हुए पूछा और सेठ की ओर देखने लगा।

'तेरे गाल पर उगलियो के निशान जो पडे हुए हैं·· वे सब कहानी कह देंगे।" सेठ ने समस्या की ओर सकेत किया।

"नही, मैं कुछ नही कहूगा।"

"वह सब कुछ उगलवा लेगी।"

"मैं अच्छी तरह से मुह धोकर, रगड कर और पोछकर मालकिन के पास आऊगा।···उन्हे कुछ पता नही चलेगा।" कल्लू ने समझाते हुए आगे कहा, "पर आप कुछ मत कहना।" क्यो, नही कहोगे न ?"

"ठीक है।" सेठ ने कहा, "जा, पानी भर कर ला।"

वह चुपचाप चल पडा। उसे तमाचे की जरा-सी चिन्ता नही थी, उसे तो मालकिन के सामने अपराधी होकर खडे होने से भय लग रहा था।

इस घटना को घटे तीसरा दिन ही हुआ था कि एक और घटना घट गई। सेठ ने एक तोता पाल रखा था। सेठ उसका बहुत ध्यान रखता था और उसे मुक्ति का हेतु समझता था। उसे हरी मिर्च खिलाता था और अमरूद भी। तोता बदले मे राम-राम कहता था। वह तोते के मुख से राम-राम शब्द सुनकर बहुत खुश होता था। उसने तोते की वह कहानी सुन रखी थी, जिसमे वेश्या का मुक्ति दाता तोता बना था। वह सोचता था कि तोता उसको भी नरक के द्वार से बचाएगा।

एक दिन क्या हुआ ? सेठ उगाही पर माल वाले गांवो मे गया हुआ था। आगन मे नीम का पेड था। अचानक उस पेड पर बहुत सारे तोते आ गए। वे इस डाली से उस डाली पर फुदक रहे थे। उनमे कुछ आपस मे एक दूसरे को चाट रहे थे।

सेठ के तोते की निगाह उन तोतो की मस्ती पर गई। वह भी पिजरे मे फडफडाने-कूदने लगा। वह बार-बार ऊपर उडता और पिजरे से उसका सिर टकराता। पेड पर बैठे तोते भी उसकी तरफ देखने लगे। अब तो उसका और भी छटपटाना शुरू हो गई। वह पिजरे मे भागता और पिजरे मे चोच मारने लगा।

कल्लू ने साश्चर्य उस तोते की गतिविधियों को ध्यान से देखा। उसने इससे पूर्व उसे इतना उद्दण्ड और उपद्रवी कभी नहीं देखा था। वह समझा कि कदाचित तोता भूखा है। उसने तीन चार मिर्चें पिंजरे में डाल दी। लेकिन उसने मिर्चों की ओर ध्यान नहीं दिया। अब तो वह पुरजोर से पिंजरे को झकझोरने लगा और अपनी चोंच पिंजरे पर मारने लगा। उसने पिंजरे पर इतने जोर के आक्रमण किये कि उसकी लाल-लाल चोंच लहूलुहान हो उठी। तोता बेदम हुआ जा रहा था।

कल्लू उसका यह हाल देखकर घबरा उठा। वह पेशोपेश में पड़ गया कि वह क्या करे! उसे लगा कि वह पागल हो उठा है। यदि उसे तुरन्त नहीं छोड़ा गया तो वह अपनी जान दे देगा। इस वक्त वहां सेठानी भी नहीं थी।

कल्लू ने जी कड़ा करके पिंजरे का द्वार खोल दिया। परन्तु तोता चुप होकर रह गया। उछल-कूद छोड़ दी। थोड़ी ही देर में निढाल होकर पिंजरे के एक कोने में पड़ा रह गया। कल्लू ने पिंजरे हिलाया डुलाया। तोता तनिक भड़भड़ा कर जहां का तहां पड़ा रह गया।

कल्लू घबरा गया। तोते ने अपनी चोंच को लहूलुहान कर लिया था क्षत कहीं वह दम न तोड़ दे। वह उसके लिए पानी लेने के लिए अन्दर गया। शायद पानी के छींटें मारने से उसको चेत हो सके। वह लौटा तो पिंजरा खाली था। उसने चारों ओर नजर दौड़ाई परन्तु उसे कहीं तोता नजर नहीं आया।

कल्लू की निगाह नीम की टहनियों पर बैठे हुए तोतों पर गई। उसने ध्यान से उन तोतों की चोंचों को देखा शायद उसे उनमें से घायल चोंच वाला तोता दिखलाई पड़ जाए। वह देख-देखकर हार गया। उसे वह घायल तोता नजर नहीं आया। थोड़ी देर बाद वे सब तोते पंख फड़फड़ा कर उड़ गए। अब नीम का पेड़ मौन था। उसकी टहनियां उदास थीं। कल्लू का मन भारी हो गया।"

सेठ लौट आया। सेठानी अपनी मां के घर चली गई थी। वह नहीं लौटी। सेठ ने देखा कि पिंजरे का दरवाजा खुला पड़ा है और उसमें तोता नहीं है। उसका माथा ठनका। वह पुरजोर से चिल्लाया, "कल्लू ऽऽ।'''कहां मर गया! इधर आ।'''यहां आ।'''हे भगवान। यह क्या हुआ!" वह घबरा उठा। उसे लगा जैसे किसी ने बलात् रौरव नरक में ढकेल दिया है और उस पर भयानक राक्षस व जीव-जन्तु टूट पड़े हैं। वे उसका मांस नोच रहे हैं।

कल्लू की देह कांप रही थी। वह वहां से भाग जाना चाहता था। सेठ समझ गया था कि यह अपराध कल्लू ने किया है। उसने कल्लू की एक नहीं सुनी। न पिंजरे पर लगे खून के धब्बों को उसकी बात का साक्ष्य माना। वह लात घूंसों से उस पर टूट पड़ा। उसके होंठ भित्ति में टुकी कील से टकरा गए। उनसे खून बहने लगा। उसके हाथ पांव में खरोंच आ गई। वह रोता पिटता निढाल होकर गिर

पड़ा। उसकी मां आई। पुत्र को रक्त सना पाकर वह चीख पड़ी। सेठ की
हुई लौट गई उसने सेठानी को भी जी भर कर गालियां दीं।

यह सब याद करते हुए कल्लू घबरा गया। उसे लगा कि वह किसी
जंगल से, जिसमें हिंसक पशु हैं, बचकर निकला है।…मां उसे लेकर यहां
नगर चली गई थी। वह कहती रही, "इन बड़े लोगों के दिल नहीं होता है
मिश्री वाणी में विष घुला होता है।" वह मां को यह एहसास नहीं करा
सेठानी उनमें से नहीं थी। वह सेठानी को ज्यादा कोसती थी। रह-रह क
मस्तिष्क गगन पर यादों की परछाइयां बिजली की भांति कौंध-सी जा
उससे उसकी बची खुची अस्मिता की लहलटी अनुगूंज उठती थी। वह
सा कांप जाता था। दिशाएं विकराल काल-सी उसकी तरफ बढ़ने लगतीं

काश! वह भी लाला की तरह भयावह निमृत से घबराकर खाट पकड़
लाला को चाकू देखकर चक्कर आने लगे थे और वह थाने पहुंचते-पहुंच
घबरा उठा था। जैसे ही थानेदार ने उससे कहा, "यदि वह युवक मर ग
तुम्हें फांसी लगेगी।" तुमने कानून को अपने हाथ में लिया है। इस बात की
सी चिन्ता नहीं की कि पुलिस भी शहर में है।"

"जी सरकार, यदि वह मुझे चाकू से मार देता।" लाला थानेद
ओर देखते हुए गिडगिडाकर बोला, "आप सच मानें थानेदार साहब।"

"सच-झूठ का फैसला कोर्ट में होगा, लाला की ओर घूरते हुए थाने
कहा।

लाला चकरा गया। क्या आत्म-रक्षा करना भी कानून के विरुद्ध है
रहकर उसके दिलोदिमाग में यही बात गूंज रही थी। इसी से लाला को तेज
आ गया था।

मालूखा ने सारी खबर एक सांस में सुना दी। उसे लाला का किस्सा सु
हुए जरा-सा भी दर्द अनुभव नहीं हुआ। वह तटस्थ भाव से सब कुछ कह
और हंसने लगा। वह सोच रहा था कि ऊंट पहाड़ के नीचे आया है। अब
दाल आटे का भाव मालूम पड़ जायेगा। वह प्राय अपने को छोड़कर शेष
को, अपनी पत्नी को भी, सन्देह की दृष्टि से देखता था। उसकी दृष्टि में दुनि
चोर हैं। साहूकार है तो एक वह।

कल्लू मालूखा का ठहाका सुनकर खिन्न हो उठा। वह कहने लगा कि
यह शोभा नहीं देता है।" फिर तुमने दूसरों की बुराई में आनन्द खोजने
यत्न शुरू कर दिया। तुमसे कितनी बार कहा, मालूखा कि तुम दूसरों के दो
निकालने में समय खराब नहीं करोगे और न उनके दोषों की चर्चा करोगे।"
लेकिन सब बेकार! चिकने घड़े पर पानी कहां ठहरता है?" मुझे दुःख है…।"

"हां कल्लू, मैंने चाहा था कि मैं दूसरों की बुराइयों की चर्चा न कर

कदाचित् मैं वैसा करता भी।···परन्तु···।" मालूखां यह कहते-कहते रुक गया।

कल्लू ने अनचाहे पूछा, "परन्तु क्या?···फिर कोई बहाना! फिर कोई मनगढ़न्त कहानी।"

"नहीं कल्लू, नहीं। ऐसा नहीं है, विश्वास कर।"

"तो फिर क्या है?"

कल्लू ने गहरी सांस ली और अपने सूखे होठों पर जीभ फेरते हुए उसे तर किया। इसके बाद वह बोला, "एक रहस्य हाथ लगा है!··· कल्लू, तब से···हां, कल्लू तब से मेरे में विष घुल गया है।"

"क्या रहस्य?"

"मैंने एक बार कहा था कि हिन्दू जब मुसलमानों से मुरादाबाद में हिन्दुओं को मारने का बदला ले रहे थे और वे दरिंदे हो उठे थे, तब लाला ने मुझे अपने घर में छिपाया था और मेरी जान बचायी थी।" "वह झूठ था।" कल्लू ने सामने रखा पानी से भरा गिलास गटगट च,ढाकर कहा,

"क्या!···उसने तुम्हारी जान नहीं बचायी थी?"

"बचायी थी।"

"फिर झूठ क्या था?"

"मेरी जान बचाने के पीछे उसका मकसद!"

"क्या मकसद हो सकता है—सिवाय इसके कि धर्म-जाति की कारायों के ताने तोड़कर मुझे मानव होने के पावन मंत्र के करिश्मे से साक्षात्कार कराने के।···वही उसने किया।" कल्लू ने तकरीर पेश की।

"काश! ऐसा होता मेरे भाई।···लाला तो व्यवसाय करने वाला ठहरा। उसे तो सौदेबाजी की लत होती है। वह हर चीज को हानि-लाभ की तराजू में तोलता है। बिना लाभ के वह कुछ नहीं करता।···एक गिलास पानी भी नहीं पिलाता।" मालूखां में पीड़ा की तहें खुलने लगी थीं। उसके स्वाद में कड़ुवाहट बिखरने लगी थी। उसके चेहरे पर घृणा, आक्रोश बारम्बार उभर रहा था। उसके होंठ फड़फड़ाने लगे थे। उसकी आंखों में हल्की-सी चिनगारी थी। कल्लू ने उसकी पीड़ा की कसमसाहट को समझते हुए सहानुभूति के स्वर में कहा, "मालूखां, हर व्यक्ति स्वार्थी है। इसमें बुरा मानने या मनाने का प्रश्न ही नहीं उठता।"

"लेकिन कल्लू, मनुष्य इतना स्वार्थी हो सकता है, यह मैंने स्वप्न में भी नहीं सोचा था।···जानता है, लाला ने मुझे इसलिए अपने घर में पनाह दी थी कि मुझ जैसा ईमानदार और सस्ता नौकर उसे दूसरा नहीं मिलेगा।—परन्तु लाला, इतना स्वार्थी निकला—।" यह कहकर वह जोरों से ठहाका लगा

उठा।

"इसमें अफसोस करने की बात नहीं है, मालूखां।—यह क्यों नहीं सोचता कि उसने, चाहे उसकी कोई वजह हो, तेरी जान तो बचायी।—तू सोच, हमने उस नवयुवक पर आक्रमण क्यों किया?—हमारा क्या स्वार्थ हो सकता है?—यदि वह हमारे आक्रमण से, जो कि हमने लाला की जान-माल बचाने के लिए किया था, मारा जाता तो उसका जुर्म हमारे सर बिखेर देता। हम पर क्या बीतती? हमें फांसी होती—लेकिन लाला हमारी ओर पलटकर भी नहीं देखता। उसने हमारे स्थान पर दूसरा नौकर रख लिया होता और वह भूल जाता कि हमें कब फांसी लगने वाली है?" कल्लू ने यथार्थ की शल्य चिकित्सा करते हुए उसके गुण-दोष प्रकट कर दिए।

"परन्तु मैंने—"

"तूने अपनी जान बचाने की खातिर लाला की जान बचाने के लिए मटका उस पर दे मारा और यह नही परवाह की कि वह यदि सभल गया होता तो वह चाकू से तेरे को चीर डालता।—यही न।" कल्लू ने मालूखां के पुराने चरित्र-व्यवहार का सहारा लेते हुए उसकी मनःस्थिति का विश्लेषण किया और आगे बदलते परिप्रेक्ष्य मे उसे समझाया, "तू सोचता है कि तूने यह बहुत बडा काम किया परन्तु लाला सोचता है कि तूने नौकरी का फर्ज अदा किया, जो तुझे करना करना चाहिए था।—बस, इससे ज्यादा कुछ नही।—मिया, यह इक्कीसवी शताब्दी है, जिसमे मनुष्य का मूल्य निर्जीव वस्तु से ज्यादा नही है। मनुष्य इसमे और बौना हो जाएगा और क्षुद्र। सवाल लाला का नही है, जमाने की हवा का है, जो सम्बन्धो की कच्ची दीवार को गिराकर पक्की सीमेण्ट की ऐसी दीवार खडी कर रही है, जिसमे कोई किसी के कत्ल पर रोयेगा नही, सिर्फ दिद्दे फाडकर रह जाएगा। कुछ सोचेगा भी नही। क्योकि उसके पास दिमाग के स्थान पर कम्प्यूटर लगा होगा और वह भावनाओ के बारे मे नही सोचेगा। न उसमे दया, सहानुभूति, करुणा, ममता, प्यार आदि का स्थान होगा।—कल्लू ने प्रोफेसर से सुनी-सुनाई प्रसग-वार्ता को उल्था कर दिया। वह उसमे से कुछ-कुछ भाव-विचार को समझ-सोचने लगा था। वह देख रहा था कि मालूखां की मोटी बुद्धि पर उसका कोई असर नहीं हुआ है। वह हतप्रभ-सा है। उसने अन्ततः कहा, "मालूखां, तूने जो कुछ किया, उसे किसी सदर्भ से जोडकर क्यो देखना चाहता है? जो किया, तुझे ठीक जचा, तो किया। तू दूसरे से अपेक्षा क्यो करता है?—अपेक्षा करेगा तो ऐसे ही क्षुब्ध, आक्रोशित और पीड़ित होगा और अपने को अकारण दुर्बलदिल बनाएगा।—लाला ने जो कुछ किया, वह लाला का सोच था और हमने-तूने किया वह हमारा सोच था। समझा।" कल्लू ने मालूखां मे कुलबुला रहे अन्तर्द्वन्द्व को कुरेद दि

निकाल रहा था। ज्यो-ज्यो मवाद वह निकाल पाता था त्यो-त्यों उसको चैन मिल रही थी। परन्तु अभी भी मवाद था जो उसे परेशान कर रहा था।

"मालूखा की समझ मे कुछ-कुछ आया। वह अपने दिमाग पर बहुत दबाव डालते हुए बोला, "हमने तो जो कुछ किया, वह नि:स्वार्थ भाव से किया।"

"क्यो ?" कल्लू ने प्रश्न किया।

"क्योकि उसके पीछे हमारा कोई मोह या लाभ नही था।" मालूखा ने सोचकर जवाब दिया।

"यह गलत है।"

"कैसे ?"

"हमारा लोभ था।"

"क्या था ?"

"कुत्ता अपने मालिक का वफादार क्यो होता है ?"

"क्योंकि वह अपने मालिक से प्यार करता है ?"

"प्यार क्यो करता है ?"

"प्यार क्यो करता है ?" मालूखा बुदबुदाया। वह इसका क्या उत्तर दे, उसकी कुछ समझ मे नहीं आया। वह कसमसाकर कभी आसमान और कभी जमीन की ओर देखता रह गया। वह हारकर बोला, "तू बता।"

"क्योंकि वह चाहता है कि उसका मालिक उसे प्यार करे।" कल्लू ने यथार्थ को जमीन पर ला पटका। यथार्थ को देखकर वह बिफर उठा। कल्लू ने आगे कहा, "यही हम भी चाहते हैं कि लाला यह समझने लगे कि हमसे वफादार और ईमानदार नौकर उसे दूसरा नहीं मिल सकता है।—और इसलिए तूने उस नवयुवक पर मटका फोड़कर और मैंने उसके हाथ पर छड मारकर यह जताना चाहा कि हमसे अधिक कुत्ता वफादार नहीं हो सकता है।"

"तभी तो तुम दुखी हो।"

"नहीं।"

"क्योकि लाला ने तुम्हारी कुर्बानी को नजर-अन्दाज कर दिया ! तुम्हारे मन मे इस कुर्बानी से पहले यह स्वार्थ कार्य कर रहा था।" कल्लू ने दबाव भरे स्वर मे कहा।

"नहीं, यह झूठ है।" वह चीख-सा पड़ा।

"यही सच है।" कल्लू ने उसी तेजी मे कहा जिस तेजी से मालूखा ने कहा था।"

"नही।"

"तो तुम्हें इस अच्छे कार्य के लिए यों दुखी नहीं होना पड़ता।—तुम इस बारे मे सोचते भी नहीं। लेकिन तुम सोच ही नही रहे, बल्कि दुखी भी हो रहे

हो। यही इसका सबसे बड़ा सबूत है।—तुम सोच रहे हो कि तुमने इतना स
किया परन्तु लाला ने तुम्हारी देह पर लटके इस चिथड़े को भी पलटने के लि
पहल नहीं की। कम से कम उसे कहना चाहिए था, हम तुम्हें नयी कमीज दें
यही न।"

मालूखा पकड़ा गया था। वह नतशिर था।

कल्लू ने कहा, "यदि वह ऐसा कर देता तो तुम्हारा यह आलीशान भेज
ठुमकी लगाकर कहता फिरता कि—लाला बहुत दयालु है, भला है और कृपालु
है।—क्यों यह ठीक है न!"

मालूखा की यह आदत थी कि उसका कोई जरा-सा काम कर दे तो वह उसके
प्रति दिलोजान से समर्पित हो जाता था। शायद यही तो उसकी हार्दिक खुशी का
कारण होता था। कल्लू ने उसकी चुप्पी का अर्थ समझ कर कहा, "इसलिए, तुम्हें
दुःखी नहीं होना चाहिए। तुम आशा और अपेक्षा की भूलभलैयों में अपने को
जितना दूर रख सको, उतना ही तुम्हारी सेहत के लिए लाभदायक है क्योंकि तुम
बीमार हो गए तो तुम्हारा कोई करने वाला नहीं है और न ही तुम्हारे पास दवा-
दारू के लिए अंटी में पैसा है। तुम व्यर्थ के सोच से अपने को उभारो, यही ठीक
रहेगा।"

मालूखा मानो समझ गया। क्या समझा वह! सिवाय इसके कुछ नहीं समझा
कि उसे यथास्थिति से संतोष करना चाहिए। उसे आक्रोश और विद्रोह की बात
सोचना पाप है। उसका वही मूल्य है जो सामने आ रहा है। उसे अपेक्षा नहीं
करनी चाहिए! वह क्यों और किसके लिए अपेक्षा कर रहा है! कौन है उसका!
उसके सामने गली के आवारा कुत्ते घुम गए। उसने पाया कि वह उन्हीं में से एक
है!

कल्लू भी अपने काम में लग गया। वह सोच रहा था कि काश, उसके पास
पैसे होते तो वह अपने पैसों से उसे कमीज खरीदवा देता। मालूखा इस चिथड़े-
सी कमीज में कितना विरूप और बेआकार इनसान लगता है—एकदम उस पागल-
सा जो चौराहे के आस-पास ऊंघता हुआ परछाईं-सा घूमता है और जिसको फटे-
पुराने फेंके हुए कपड़ों में लिपटा हुआ देखा जा सकता है। उसकी देह पर कपड़े
नहीं, फेंके और विरूप कपड़ों का मकान झूलता है। कल्लू का मन भर आया।
उसकी आंखें आर्द्र हो उठीं। उसके सामने पल भर के लिए वह कल्लू था मरा
हुआ था, जिसे सेठ ने रुई की तरह धुना था, जिसके माथे पर गूमड़ा उठा हुआ था
और जिसके होंठ चिर गए थे। होंठों से निकला रक्त उसकी ठुड्डी पर जमा हुआ
था और सीर-सीर कमीज पर पड़ा हुआ था। उसकी कमीज को सीर-सीर करने
वाला भी वही था। वह कितने ही दिनों तक उस सीरनुमा कमीज को कुत्ते के गले
में पट्टे की तरह सरकने लगाता रहा। आलीशान मकान वालों ने उसे देखा और

नाक भी सिकोड़े। उनके बच्चे ने उसे उनकी नगरी में आया कोई जानवर समझा। उसे लगा कि वह कल्लू नहीं, मदारी मां के साथ पालतू रीछ है। रीछ नाचेगा। रीछ कूदेगा। बच्चे खुश होंगे और उसकी मदारी मां को वे दो-चार पैसे ऐसे डालेंगे जैसे घर का कूड़ा घूड़े पर डालते हैं।

कल्लू की आंखों के सामने पिंजरे में बंद तोता घूम गया। उसने अपनी आजादी के लिए क्या कुछ नहीं किया! वह तो असहाय पक्षी था। वह भी अपनी आजादी का अर्थ जानता था। उसे अपने को आजाद कराना भी आता था। सेठ ने खाली पिंजरे को देख कर उसे मारा क्यों? तोता तो और आ जाता। दूसरों की आजादी छीन कर उनको पिंजरे में डाल कर बेचने वालों की कमी नहीं है, क्योंकि उनका तो व्यवसाय ही यह है, उनकी तो रोजी ही यह है और उनका ईमान-धर्म भी तो यही है।···उसके सामने लहूलुहान तोता पड़ा था। वह अपनी आजादी के लिए मरने को तैयार था। आखिर क्यों? क्योंकि उसने अपने आजाद साथियों को नीम की टहनी पर कूदते-फांदते देखा था। मानो नीम पर बैठे हुए तोते उससे कह रहे थे—"भाई, उठ। कोशिश कर। बाहर आ। हमारी तरह आसमान की दूरी नापने निकल चल।" वह पेशोपेश में पड़ा हुआ था, क्योंकि उसने इसी नीम की डाल पर दो पक्षियों को बात करते हुए सुना था। एक पक्षी कह रहा था, "सरदार, तुमने ठीक ही किया जो उसको मरवा दिया। नहीं तो वह गुलाम पक्षी हम में भी गुलामी में जीने के अंध सम्मोहन को फैला देता और हो सकता था कि हम धीरे-धीरे अपनी आजादी के अर्थ को भूल जाते। गुलाम कौम को आजादी की हवा में बहना मुश्किल आ जाता है। उसके लिए इसे अपनी आजादी के लिए किए संघर्ष से अधिक संघर्ष करना पड़ता है।"

"यही तो मैंने सोचा था! यही सोच कर मैंने उसे आजादी के लिए उकसाया था कि वह पिंजरे में पड़ा हुआ अपनी आजादी के लिए जी तोड़ संघर्ष करे और आजाद हो जाए।"

"और आजाद होकर जब वह आए तो उसे···"

"मार डाला जाए ताकि···"

"वह गुलामी के निर्जीव सुख का वर्णन कर हम में से किसी को नहीं बहका सके।"

कल्लू यह सोचते-सोचते चौंक पड़ा। मानो उसका हाथ जलते हुए कोयले पर पड़ गया हो। उसने बाहर आकर जरा हवा में सांस ली और अपने को तरोताजा करना चाहा। हवा तीखी बह रही थी। लगता था कि कहीं हिम पड़ी है। उसे छूकर हवा आ रही है। वह अधिक देर तक वहां खड़ा नहीं रहा। मालूखा दूध भगौने में उलट कर कड़ाई को नीचे रख चुका था। उसकी जालीदार मैलीकुचैली कमीज में से उसकी देह झिलमिला रही थी। वह उदास और अस्थिर लग रहा

था। कल्लू को उसकी इस स्थिति पर बहुत आत्मग्लानि हो रहा था। वह अपनी विवशता पर आक्रोशित होकर अन्दर एक कुर्सी पर आ बैठा। उसने अपनी आँखें बंद कर ली थीं और सिर झुका लिया था।

8

प्रोफेसर नर्मदा शंकर मुक्तानन्द के नाम से यहाँ और आसपास परिचित हो चले थे। उनकी अटूट आस्था और निरंतर कार्य में लगे रहने के फलस्वरूप वहाँ के लोग उनके प्रति श्रद्धावनत होते जा रहे थे। वह स्वयं गलियों की नालियों, को जो प्रायः कूड़े-करकट आदि के कारण बंद हो जाया करती थीं, खोलने और साफ करने में लग जाते थे। वह उन लोगों से बोलते कम थे, परन्तु अपने कार्यों से उन लोगों को अपने प्रति सोचने के लिये मजबूर कर दिया था। कूड़ा-करकट डालने के लिये, उन्होंने बस्ती में जगह-जगह तारकोल के खाली डिब्बे रखवा दिये थे। उनके बिना कुछ कहे धीरे-धीरे उस बस्ती के लोग भी कूड़ेदान का प्रयोग करने लगे थे। इसके साथ उनका स्कूल भी चल निकला था क्योंकि उसमें पढ़ाई के साथ अनेक धंधों का प्रशिक्षण देना शुरू कर दिया था। इससे पढ़ने वालों को रोजगार पाने में सुविधा मिलने लगी। उन्होंने लोगों को बैंक से धन व बस-पुरजों व कच्चे माल के लिये धन उधार दिलवा दिया था। इससे उनकी साख भी जमने लगी थी।

वह स्वयं सूत से कपड़ा बुनते थे, और कपड़ों पर अनेक नये डिजाइन डालते थे। औरतों तथा न[illegible] के नवयुवकों को उनका यह काम बहुत भाया था और इसी कारण वे भी सूत [illegible]ते, उसे रंगते और कपड़ा बुनते थे।

वे चाहते थे कि वह एक बार वहां कल्लू को लेकर आयें इसी दृष्टि से वह आज लाला की दूकान पर [illegible]ये थे। कुछ प्रतीक्षा करने पर कल्लू बाजार से लौट आया था। प्रोफेसर को वह [illegible]क पहचान नहीं पाया। अब तक उसकी दाढ़ी काफी बढ़ चुकी थी और उसके सिर के बाल भी। उसके सिर पर एक टोपी थी, जिसका उन्होंने पहले कभी प्रयोग नहीं किया था। उनकी आंखों पर काला चश्मा लगा हुआ था।

कल्लू ने उनकी ओर देखा पर इसलिये नहीं कि वह उन्हें पहचान गया था। इसलिए कि उन्हें वह विचित्र ग्राहक लगा था। आज कल उस दूकान पर विदेशियों का भी आना-जाना शुरू हो गया था। कल्लू विदेशियों से संकेतों से बात करता-करता उनके कुछ शब्द सीख गया था। विदेशी भी मठरी, चाय, दूध, नमस्कार, भुजिया, बाजार, लड़का, लड़की आदि अनेक शब्द सीख गये थे। विदेशियों का पहनावा और रहन-सहन उसे अजीब लगता था। उसने न किसी भी विदेशी को

प्रेस किये कपड़े पहने देखा था और न किसी विदेशी महिला को लिपस्टि
लगाये। वह उनके दातों को देखकर बहुत क्रोधित होता था। क्या वह भी को
विदेशी है ? यह प्रश्न उसके मन मे कौंध उठा। उसने अपना ध्यान उधर से हट
का यत्न किया परन्तु उसका उधर से ध्यान हटा नही।

थोडी देर बाद प्रोफेसर नर्वदा शकर ने उसे इशारे से बुलाया और उसक
ओर ध्यान से देखते हुए उसे कहा, "कल्लू, आज मैं तुम्हे भगी पाडे की
कराने के लिये लेने आया हू।"

"प्रोफेसर…" कल्लू ने साश्चार्य कहा।

"आज महगाई के विरोध मे शहर बद हो रहा है। कुछ देर मे तुम्हा
दूकान बद हो जायेगी।"

"शहर क्यो बद हो रहा है ?" मालूखा ने चटपटी खबर सुनते ही बीच
टोका।"

"विरोध…महगाई आसमान छू रही है। सरकार ने पेट्रोलियम, डीजल आ
पर टैक्स बढ़ा दिया है।"

"इससे आम आदमी को…।" मालूखा ने प्रोफेसर को चुप देख कर कहा

"आम आदमी पर ही इसका सीधा प्रभाव पडेगा।" उसने तर्क देने
पृष्ठभूमि तैयार की।

"क्या आम आदमी कार, स्कूटर आदि रखता है।"

"ट्रैक्टर, सामान का आना जाना…प्राय: समान ट्रक से इधर उधर अ
जाता है। इससे चीजों के इधर से उधर पहुचाने का किराया बढ़ेगा और वह ब
हुआ किराया उन वस्तुओ के क्रय मूल्य मे जोड़ कर विक्रय मूल्य निकालेगा
प्रोफेसर ने सहज होकर कहा।

मालूखा की समझ मे आ गया। वह तुरत बोला, "तब तब तो भव
बाजार बंद हो।"

कल्लू गुम्म हो गया था। उसने उसकी ओर देखकर कहा, "तुमने मुह
लटका लिया है, कल्लू ?"

"हमे छुट्टी कहां मिलेगी…हम तो रात दिन के नौकर हैं।"

"क्यों ?" प्रोफेसर नर्मदाशकर के चेहरे पर अचरज विलुप्त होकर गु
गायब हो गया।

"हमे लाला के घर काम करना होगा।"

"क्यो ?"

"नौकरी का सवाल है।…यह कोई सरकारी नौकरी तो है नहीं कि हड़
करो, कलम रोको आन्दोलन करो या ऐसा ही कुछ और…जिस मे काम
करना पड़े और मजूरी पूरी मिल जाये।" कल्लू के स्वर मे तनाव बिखर रहा

"वो मैं कुछ नहीं जानता आज तुम्हें मेरे साथ चलना ही पड़ेगा।" प्र
नर्वदा शंकर के स्वर में स्नेहाग्रह था।

"जाओ, कल्लू, साहब के साथ चले जाओ। दूकान मैं संभाल लू
मालूग्रा बीच में बोल पड़ा।

"पहले दूकान तो बंद हो।"

"क्यों, तुम्हें इसमें कुछ शुबहा है?" प्रोफेसर नर्वदा शंकर ने चश्मा
कर साफ करते हुए पूछा।

"यहां कौन आयेगा?"

"आयेगा।—यहां भी कार्यकर्त्ताओं का दल आयेगा।"

इतने में वास्तव में कार्यकर्त्ताओं का दल आ गया। उनमें से एक यु
"कल अखबार में था, फिर भी—।"

"मालिक कहां है?"

"घर।"

"दूकान क्यों खोली है?"

"तभी तो दूकानें धू-धू जलती हैं।—एक बार अखबार में निकल गया
यह जुर्रत क्यों?"

"इनसे हरजाना लो।"

"तुमने ठीक कहा, "तब इनकी अक्ल ठिकाने आ जायेगी। कोई बा
खिलाफी नहीं कर सकेगा।"

"अब की प्रस्ताव रखवा दो।"

"रखवाना क्या है, पास करवा देंगे।"

"अबे गुन क्या रहे हो? जल्दी दूकान बंद करो।" उनमें से एक खद्दरधा
जिसने जवाहर 'कट' जाकिट पहनी हुई थी, गरजा।

मालूग्रा और कल्लू ने जल्दी-जल्दी दूकान समेटनी शुरु कर दी थी। कल्लू
याद आया कि रात जाते समय लाला उनसे इसीलिए यह कह कर गया था
वह सुबह नहीं आयेगा।"'आयेगा भी तो देर से।'"ध्यान रहे, कल शहर में ग
बड़ का अन्देशा है।" इसका मतलब था कि लाला को सब मालूम था।

इसी समय किसी चीज के टूटने की आवाज हुई। मालूग्रा ने देखा कि बाह
पड़ी बेंच को उन लोगों ने तोड़ डाला। वह बोला, "यह आपने क्या किया, बा
लोगो?"'हम दूकान बंद तो कर रहे हैं।"

"ताकि लाला को मालूम पड़े कि हुक्म न मानने से क्या नुकसान होता है?"

"चीजें तोड़ने से क्या लाभ?" कल्लू ने साहस बटोर कर धीमे से कहा।

"चुप रह कुत्ते की दुम!"

"मूरख, हमें अक्ल सिखाता है।" इसके साथ ही उनमें से एक ने कल्लू के

मुंह पर दो-चार जोर के तमाचे जड़ दिये।

कल्लू का चेहरा लाल हो गया।

"यह क्या बदतमीजी है?···आपको उस पर हाथ उठाते हुए शर्म आनी चाहिए।" प्रोफेसर नर्वदा शंकर का तीखा स्वर था।

"चुप कर, बुड्ढे।"

"जबान सभाल कर बात करो।" कल्लू का गर्म खून खौल उठा। वह कुछ निर्णय कर चुका था। शायद उस नवयुवक की तरह जिसने लाला को चाकू दिखाया था।

"ओ कुत्ते, चुप कर।"

इस पर वे सब हंस पड़े। दूकान लगभग बंद हो चुकी थी। तभी उनमें से एक बोला, "ताला लगाओ।"

प्रोफेसर नर्वदा शकर को उन लोगों के मुंह से शराब की दुर्गंध आ रही थी। वह चुप रहे। मालूखा ने ताला लगाया।

"चाबी, इधर लाओ।"

मालूखा ने चाबी उनके हवाले कर दी। उन्होंने चाबी ली और मोटर-साइकिल पर बैठ कर हवा हो गये।

अब वे तीनों शान्त थे। उनके सामने धूल भरा गुबार चक्कर खा रहा था। कल्लू की आंखें धधक रही थीं। उसके अरुण ओठ फड़फड़ा रहे थे। उसे अपनी विवशता पर क्रोध आ रहा था। वे उसकी कमीज भी फाड़ गये थे। उसकी कमीज की एक बाह को वे हवा मे झुला कर भट्टी के हवाले कर गये थे।

"हरामी!" मालूखा बड़बड़ाया।

"मैं उनको जान से मार देता।" कल्लू का स्वर था।

"उस नवयुवक ने ठीक किया था। मैंने बेकार उस पर मटका फोड़ा।" मालूखा ने पश्चाताप प्रकट किया।

पता नहीं कल्लू को क्या हुआ कि उसने अपनी कमीज को लीर-लीर कर डाला और चिल्लाने लगा, "एक-एक को मार डालूगा।···जलती भट्टी या खौलते कड़ाहे मे डाल दूगा।···समझा क्या है···कायरो···एक-एक करके आते।···मैं तुम सबमें निपट लेता।···देख लेता।···!" उसकी सास उखड़ आई थी। उसका चेहरा रक्ताभ हो उठा था।

प्रोफेसर ने उसके कधे पर हाथ रख कर थपथपाया और कहा, "शान्त रहो। ···सब्र से काम लो।"

"आप कहते थे कि वे महगाई के विरुद्ध बाजार बंद कराने के लिये आयेंगे। ···ये भूत तो लूटमार करते घूम रहे हैं—गुण्डे!···इन प्रयासों से महगाई कम होगी क्या?···स्सालों का जमीर ही बिका हुआ है—कमबख्त दरिन्दे हैं—

जानवर, जाहिल और नंगे !"

प्रोफेसर ने उसके नंगे बदन को ढकने की सोची। उसने अपना कोट कल्लू के कंधे पर डालते हुए कहा, 'इसे पहनो।" उसकी आवाज में बड़ी ही आत्मीयता से युक्त।

"नहीं।"

"मैं कहता हूं। इसे पहनो और मेरे साथ चलो। मैं तुम्हें इनसे बदला लेने का ढंग बतलाऊंगा।" प्रोफेसर ने उसके मन में उबलते ज्वार भाटे को रास्ते पर लाने की दृष्टि से कहा।

कल्लू ने प्रोफेसर की ओर अर्थभरी दृष्टि से देखा और जानना चाहा कि उसकी मंशा क्या है। वह शान्त भाव से स्थिर खड़ा हुआ उससे कह रहा था, "कोट पहनो और मेरे साथ चलो।" उसकी आवाज में दर्द था। कल्लू को लगा कि प्रोफेसर के हृदय को भी आघात पहुंचा है। हो सकता है कि वह भी उनसे अपने अपमान का बदला लेना चाहे। उसने कहा, "आप सच कहते हैं।"

"हां, सच। एकदम सच। मैं तुम्हें इनसे बदला लेना सिखलाऊंगा।" उसने दोहराया।

मालूखां चकित होकर प्रोफेसर की ओर देखता रह गया और कुछ सोचकर बोला, "मैं इसी शर्त पर कोट पहनूंगा!"

"पहनो और चलो।"

"तुम जाओ, कल्लू। मैं लाला को इस घटना की सूचना दे आता हूं।" बीच में मालूखां जो लगभग नंगे बदन था, बोला।

"वह पूछेगा'''।"

"वह तुम मुझ पर छोड़ो। उसे मैं संभाल लूंगा।"

कल्लू प्रोफेसर नर्बदा शंकर के साथ-साथ चलने लगा। वे कुछ ही दूर गये होंगे कि उनके पार्श्व में आकर एक ऑटो रिक्शा रुका। उसका चालक कह रहा था, "घर चल रहे हो, मास्टर जी।"

"हां।"

"तो बैठो।"

वे बैठ गये।

रास्ते में चालक ने बताया कि बाजार में दंगा हो गया है। जो लोग दूकान खुले रखना चाहते थे, उनमें दूकान बंद कराने वालों की तू-तू मैं-मैं ऐसी हुई कि पलक झपकते ही कटरे की दूकानें जल उठीं।"

"क्या !" प्रोफेसर ने आश्चर्य कहा।

"उधर कर्फ्यू लगा दिया है।" चालक ने तटस्थ भाव से कहा।

"वहां पुलिस नहीं थी।" प्रोफेसर ने अगला प्रश्न किया।

"पता नहीं।"

"पुलिस को ऐसे तनाव पूर्ण जगहों का तो पूर्ण आभास होगा ही। "जरूर उन दूकानदारों ने पुलिस को अपनी मंशा बता दी होगी कि वे दूकान खोलेंगे।" प्रोफेसर ने मन ही मन स्थिति का जायजा लेते हुए बालक से प्रश्न किया।

पुलिस तो शहर की ग्राम है। "उसको क्या पता नहीं रहता है!"'काश, आज पुलिस अधीक्षक करीम खां होते तो यह सब कुछ नहीं होता। ओटो-चालक ने गहरी सांस लेकर कहा।

"क्यों, वह होता तो क्या होता?

"वह अपने प्राण पर खेल जाता लेकिन ऐसा नहीं होने देता। वह था तो यहां हंडिया बंद थी, सट्टा बंद था, गुण्डागर्दी को जंग लग गया था" और सबसे बड़ा काम तो यह हुआ था कि हिन्दू-मुसलमानों के तीज-त्योहारों पर होने वाले साम्प्रदायिक दंगे बंद हो गये थे। आज शहर वही है, लोग वही हैं।" अब शहर में रहना हराम है। आये दिन दंगे-फसाद, गुण्डागर्दी आदि की वारदातें होती रहती हैं। कोई देखने-सुनने वाला नहीं है।" यह कहते हुए उसने एक झटके से ओटोरिक्शा रोक दी और बोला, "आपका घर।"

प्रोफेसर नर्वदा शंकर ने उसकी ओर दस का नोट बढ़ाया। वह मुस्कराकर बोला, "मास्टरजी, यह क्या!" मैं तो आपका बच्चा हूं।"

"यह तुम्हारा मेहनताना है, बेटे।"

"सड़क पर से कूड़ा उठाकर कूड़ा पेटी में डालना, सारी बस्ती की नालियां साफ करना, सबको पढ़ाना-लिखाना, उन्हें रोजगार के लिए तैयार करना" क्या आपने कभी इस सबका मेहनताना लिया है, मास्टरजी, जो मैं।"

"बस "बस" बस"।" उन्होंने कहा।

कल्लू ने देखा और सोचा कि यह भंगी पाड़ा नहीं हो सकता। भंगी पाड़ा तो इस शहर की सबसे गंदी और पिछड़ी बस्ती थी।"'यह क्या है! उसने चारों ओर घूमकर देखा—साफ-सुथरे न केवल मकानात बल्कि यहां के लोग-बाग भी।" उसे कहीं भी बच्चे रास्ते में खेलते नजर नहीं आये।

प्रोफेसर ने अपने मकान की कुण्डी खोली और कल्लू से कहा, "अन्दर आ जाओ।"

"आपने ताला नहीं लगाया, प्रोफेसर साहिब!"

"मास्टरजी "मास्टर मुक्तानन्द"'प्रोफेसर नहीं। यहां सब मुझे इसी नाम से जानते हैं।" उसने समझाया।

"ताला"'।" वह फुसफुसाया।

"यहां है क्या।"'जो है, समाज का है, बस्ती का है और सबका है। यहां चाहे जब आना, उठना-बैठना चाहे बखुशी आयें, बैठें"'किसी को कोई रोक-टोक

नही है।" उसने बात बदलते हुए आगे कहा, "जानते हो, यहां हर घर में कोई न कोई काम हो रहा है।"

"कैसा काम ?"

"कही कागज के खिलौने बन रहे हैं, कही कपडा बुना जा रहा है, कही पाप... बन रहे हैं" कहने का अर्थ है कि यहां का हर घर कुछ न कुछ कर रहा है।" केवल पुरुष ही नही, स्त्रिया और बच्चे।...वे किसी के नौकर नही हैं। वे अपने काम के मालिक है।" प्रोफेसर नर्वदा शकर ने बताया।

"यह भगी पाडा ही है न ?" कल्लू ने साश्चर्य पूछा।

"हा है तो, पर अब इसका नाम बदल दिया गया है।"

"क्या हरिजन बस्ती कर दिया है?"

"क्यो ?"

"क्योकि हरिजन ही भगी हैं।"

"नही, इसका नाम हरिजन बस्ती नही रखा।" और इसीलिए नही रखा, ...मने ठीक ही सोचा है कि हरिजन भंगी का पर्याय बन चुका है। हरिजन से वही ...आती है जो भगी से।...इसलिए...।" कहते हुए वह अन्दर के कमरे मे गये और अन्दर से कपडा लेकर लौटते हुए कहने लगे, "इसका नाम रखा है, प्रभात नगर।" प्रभात अर्थात् सुबह ! पता नही कि यह देश इक्कीसवी सदी मे जब पहुचेगा तब तो इसी सदी मे जीने के लिए जो हो सकता है या होना चाहिए, ...सके लिए प्रयास चल रहा है।"

"इसका उद्घाटन किससे कराया था ?"

"किसी से नहीं। सिर्फ बस्ती का नाम बदलने की सूचना नगर पालिका, ...क-तार विभाग आदि को दे दी। सो अब यह नया नाम दौडने लगा है।" ...होंने कपडा एक ओर रखकर अपने सामने चरखा रख लिया। वह बात करते ...र सूत कातने लगे। कल्लू साश्चर्य देखता रहा कि प्रोफेसर असाधारण व्यक्ति ...। पहले उसे प्रोफेसर एक आदर्शवादी नजर आ रहा था।

"पुष्पा बहिन, जरा रहमान भाई को भेजना।"

"अभी भेजती हू, मास्टरजी।" कहकर वह चली गई। थोडी ही देर मे गले ...फीता लटकाये रहमान भाई आ गये। प्रोफेसर नर्वदा शकर बोले, "इसका ना... ।...कुरता-पायजामा बनाना है।"

"कौन है, मास्टरजी, आप ?"

"हमारे-तुम्हारे भाई-भतीजे—नाम कल्लू है।...लेकिन आज से इनका नाम ...कीचन्द रख दिया गया है।' क्यो रहमान भाई, कैसा रहेगा ?"

"...मेला नही, दौडेगा, मास्टरजी।"

"मिलेगा मास्टरजी, अभी दो घण्टे में। पायजामा अपनी सलमा सी लेती है और कुरता मैं"। आप बेफिक्र रहिये।"'अच्छा, आदाबअर्ज, मास्टरजी।" कहकर रहमान चला गया।

कल्लू पत्थर की मूर्ति बना बैठा रहा। वह उन्हें रोकना चाहता था। एक बार उसने उनसे 'टिप' नहीं ली थी। रोटियां खिला दी थी। आज वही कल्लू चुप बैठा रहा। वह उसके लिए कुरता-पायजामा सिलवा रहे हैं। फिर भी वह खामोश है। उसके होंठ मिल गये हैं। प्रोफेसर नर्वदा शकर कहने लगे, "कालीचरन नाम रखने से तुम नाराज तो नहीं हो, कल्लू।"

कल्लू फीकी मुस्कान बिखेर कर रह गया।

"क्या तुम कुरते-पायजामे के बोझ से दब तो नहीं रहे हो?"

कल्लू की आखें नम हो गई।

"ये मेरे बुने कपडे में से मिल रहे हैं।"'मैं इन्हें मुफ्त नहीं दे रहा हू।"'ये उधार हैं। कपडा लौटाना होगा।" सुनते हो, रहमान भाई की सिलवाई भी चुकानी पडेगी।"'क्यों करोगे न।" प्रोफेसर नर्वदा शकर ने उसको राहत देने क दृष्टि से कहा। वह उसके ऊपर से एहसान का पत्थर हटाने की कोशिश कर रहे थे।

कल्लू फिर भी चुप रहा।

इतने में कई लोग वहां आ गये। स्कूल शुरू हो गया। प्रोफेसर नर्वदा शकर सूत कातते हुए पढाने लगे। उनको पढ़ाने के बाद वह बोले, "अब डिब्बे बनाओ।"

"अभी पूरी तरह बनाना कहा आया है, मास्टरजी।"

"यहा ले आओ सारा सामान और बनाओ।"

सामान आ गया। वह डिब्बे बनाने में उनकी मदद करने लगे। मुश्किल से डेढ़ेक घण्टा लगा होगा कि फटाफट डिब्बे बनाने लगे। वह बोले, "अब आप लोग इन्हें घर बनाए। परसों तक पाच सौ डिब्बे देने हैं, ध्यान रहे।"

वे सब मुस्कराये और चले गये।

तभी तीन-चार अधेड औरतें और पाच-छह लड़कियां वहा दाखिल हुईं। सभी के साफ कपड़े थे और अच्छे भी। उनकी जुबान में मिश्री घुली थी। वे अपने साथ स्वेटर लाई थी। उनमें से एक लड़की, जो शायद तेरह-चौदह के आसपास की उम्र की होगी, कह रही थी, "देखो, मास्टरजी, ये नये डिजायन के स्वेटर बुने हैं।"'कलर स्कीम आप वाली है।"

प्रोफेसर नर्वदा शंकर उन स्वेटरों को देखते हुए प्रसन्न होकर बोले, "बहुत खूबसूरत हैं।"'खूब बिकेंगे।"'कितने बना लिये हैं आप लोगों ने।"

उनमें से एक हिसाब लगाते हुए बोली, "लगभग पैंतालीस"'और साइज भी

इसके आसपास का।"

"अब ?"

"बोहरा आया था।"

"खरीदने के लिए।"

"फिर ?"

"आपके बिना'''।"

"आप क्या सोचती हैं ?"

"वह बीस रुपये स्वेटर लेने की बात कर रहा था।"

"जचा ?"

"आप बतायें ?"

"स्वेटर आपने बुने हैं।"

"तो क्या हुआ ?"

"बोहरा कितने में बेचेगा ?"

उनमें से एक कहती है, "पचास-साठ में''' पचपन रुपये में तो जरूर।"

"आपसे वह बीस में लेना चाहता है।'''आखिर क्यों ?"

"कहता था, वह बुनने के लिए ऊन दे देगा।'''उसे डिजाइन और रंगों का मैच बहुत पसंद आया।"

"तो ठीक है।"

"क्या ठीक है ?"

"जो तुम सोचो।"

"सोचना आपको है।"

"आत्म-निर्भर बनो।'''अपना हित-अहित खुद से करो। पराधीन होने की भावना व्यक्ति को कमजोर करती है।" प्रोफेसर ने स्वभावानुसार सीख दे डाली।

"एक बार आप मार्गदर्शन दें।"

"तो इन्हें हम बेचने जाएंगे और हमारे साथ चन्दन भी होगा।"

"चन्दन'''वह आवारा लड़का।'''उसने तो काफी अपमान किया था।'''आप उसे साथ लेंगे।" सबने अचरज से प्रोफेसर की ओर देखा।

"उसे सही दिशा में मेहनत करना आना चाहिए तब वह बुरा नहीं रहेगा।" प्रोफेसर ने लम्बी सांस लेते हुए सड़क की ओर देखा।

"शायद ही वह सुधरे।"

"कल हम स्वेटर बेचने जायेंगे।"

"कहां ?"

"जहां मन चाहेगा वहां सड़कों पर दुकान लगा लेंगे।" प्रोफेसर के स्वर में

दृढ़ता थी।

"पटरी पर और आप।"

"क्यों ?"

"आप मास्टरजी हैं।"

"तो क्या हुआ ?"

"बस्ती नहीं मानेगी।"

"मैं कोई चोरी कर रहा हूं ?"

"आप इतने पढ़े-लिखे हैं ...इतने ज्ञानवान ... नहीं...नहीं... 'आप नहीं।" उनका स्नेह-समर्पण मुखर हो उठा।

"चन्दन को मैं ही साथ ले जा सकता हूं' 'और उसके लिए मुझे ही जाना होगा।...काम कोई छोटा-बड़ा नहीं होता। काम काम होता है जैसे इन्सान इन्सान।...उसके अलावा और कुछ नहीं।" उसने समझाया।

"एक बात और है।" वही छोटी लड़की बोली, जो सलवार-कुरता पहने हुए थी। उसके मोती से दांत बहुत चमकीले और खूबसूरत लग रहे थे। उसका चेहरा हंसता हुआ लगता था।

"बोलो बेटी, क्या बात है ?"

"मां ने कहा है कि वे इस नये काम का उद्घाटन करवाना चाहती हैं।

इस पर प्रोफेसर नर्बदा शंकर हंसकर बोले, "जरूर करायें। उनकी मरजी है।"

"आपसे।"

"मेरे से।" उन्होंने सकपकाते हुए कहा, "यह जानते हुए मैं इन झंझटों के सख्त खिलाफ हूं।"

"उन्होंने यह स्वेटर मशीन से नहीं, हाथ से स्वयं बुना है। ...आपके लिए...। मास्टरजी, कबूल फरमाकर हमें आशीर्वाद दें।... हमारे लिए यही उद्घाटन है।" इतना कहकर उसने स्वेटर उनकी ओर बढ़ा दिया।

प्रोफेसर नर्बदा शंकर का हृदय आर्द्र हो उठा। उन्होंने बमुश्किल आंखों में आंसू रोके।...ये अनजाने लोग...न नाते-रिश्तेदार हैं...न भाई-बहिन...कोई भी नहीं। इतना प्यार-सम्मान! उसके भाई का परिवार मेरे गया तो उसे आमंत्रित करके मौन रह गया था। लौटकर भी उसने खाने की नहीं पूछी। वह पुराने क्रम की कसक के साथ बोला, "बहुत सुन्दर है।...परन्तु...।"

"परन्तु कुछ नहीं।...मां ने रात-दिन मेहनत करके बुना है। आपने कबूल नहीं किया तो वे रोती रहेंगी...आप उन्हें रुलायेंगे क्या ?" वही लड़की भाव-पूरित नेत्रों से उनकी ओर देखकर कह रही थी। उसके चेहरे पर मृग-शावक की सी चपल सौम्यता थी।

"तुम लोग जानते तो हो कि मैं जरूरत से ज्यादा कपड़े अपने पास
हू । मेरे पास स्वेटर है, कोट है । फिर इसको कैसे स्वीकार करू ? ज
नहीं है ।" प्रोफेसर नर्वदा शंकर ने अत्यन्त गभीरता से धीरे-धीरे कह

वह लड़की एकदम उदास हो गई । उसका मासूम और खिला
बुझ-सा गया । वह कांपते हुए बोली, "तो फिर···?" उसकी आंखें
और उसका कण्ठ अवरुद्ध हो गया था । वे सब सिर झुकाये, मौन हुए
हुई ।

"सुनो ।" प्रोफेसर नर्वदा शकर का स्वर था । ठहरो, बैठो ।···
लाओ ।···यह स्वेटर हमे दिया है न ।···क्यों यही बात है ।"

"जी ।" सबके चेहरे खिल उठे ।

"हमने कबूल किया । परन्तु···।"

"परन्तु क्या ?"

"अब हम इसके मालिक हैं ।"

"बेशक ।"

"अब हम कुछ भी करें ।"

"आपकी खुशी ।"

"ठीक है । अपनी मा को हमारा धन्यवाद देना । कल याद रखना,
बेचने जायेंगे ।"

"जी ।"

वे सब चली गयी । प्रोफेसर नर्वदा शंकर की आंखें छलछला आई
बोला, "आप रो रहे हैं ।"

"नहीं, बेटे, मैं खुशी सभाल नहीं पा रहा हू ।···ये लोग, जब मैं आ
था तब मुझे शका की दृष्टि से देखते थे और मेरे से पहले वहा ठहरे एक
से ठगे जाने की कहानी सुनाया करते थे ।···इन्हे मैं भी ठग नजर आता थ
इनका नहीं था । इन्हें तो जो अनुभव मिला था, उसी ने इन्हें सोच दिया
इनको अपने व्यवहार मे परिवर्तन करने के लिए विवश किया था । अब स
हुआ है । ये लोग मुझे बेहद प्यार करते हैं । प्यार ही इन्सान की पूजी है
वही कम होता जा रहा है और उसकी जगह घृणा, हिंसा आदि लेती जा र
आज के मनुष्य के दुर्भाग्य का यही कारण है, जिससे साथ प्रयत्न व विकास
पर भी वह निरन्तर गिरता जा रहा है, गिर रहा है । मैंने कभी सोचा भी
था मुझे यहां इतनी जल्दी बेइन्तहा प्यार मिलने लगेगा, यह तो कल्पनातीत
थी ।···यह बस्ती आवारा, चोर-उचक्को, अशिष्ट और गंवार लोगों की कह
थी । वह जीते-जागते नरक भोग रहे थे । बस्ती गदगी का ढेर थी । यह कह
वह सोच रहा था एक बार तो उसको भी अपने निर्णय पर आश्चर्य हुआ था ।

था कि उसने यह इस्तीफे देने जैसे दूसरी गलती की है। उसे पता नहीं था कि उनके अन्दर एक देवता बैठा हुआ है। सिर्फ उस देवता को जागृत करने की जरूरत है कि यह नरक स्वर्ग बन सकता है।

"सब आपको बहुत प्यार-सम्मान देते हैं।"

"मैं यही तुमसे चाहता हूँ।"

"क्या ?"

"कभी तुमने मालूखां से पूछा है कि वह वहां कब से नौकरी कर रहा है।"

"नहीं।"

"पूछना।" कुछ सोचकर वह बोले, "यह भी पूछना कि उसने घर क्यों नहीं बसाया ?"

"फिर ?"

"फिर तुम सोचना कि तुम्हें क्या करना है ?"

"इसमें क्या सोचना है ?"

"सोचकर देखना और बताना कि तुमने क्या सोचा है? तुम्हें क्या बनना है?…मालूखां बनना है या… कुछ और।… खैर यह तुम्हें सोचना है, निर्णय लेना है। मुझे तो तुम बताना—सिर्फ।" वह चरखे को एक ओर रखकर कुछ सोचने लगे कि तभी रहमान आ गया। कुरता-पायजामा सिल चुके थे। वह कह रहे थे, "कालीचरन, पहनकर देखो।"

"जी।"

"जल्दी करो, तुम्हें लौटना भी।…रहमान भाई को भी और काम है।" उसने कपड़े पहने। कपड़े एकदम सही सिले थे। वह चकित था।

"यह कपड़ा बचा है।"

"कितना होगा ?"

"सवा मीटर।"

"तुम रख लो।"

"नहीं, मास्टरजी।"

"हमारी खुशी के लिए भी नहीं, क्यों रहमान भाई ?"

वह कपड़ा लेकर लौट गया। प्रोफेसर नर्बदा शंकर कहने लगे, "उधर साबुन रखा है, मुंह-हाथ धो आओ और हां पाव…एड़ी…अच्छी तरह रगड़ना। मैल जमा है। वहीं झावा रखा है उससे रगड़ना।…तब फिर ये कपड़े पहनना।"

वह अन्दर गया। हाथ-पाव धोता रहा। फिर पाव में मैल उतारते-उतारते खून झलक आया था। जूते तो उसने कभी पहने ही नहीं थे। वह सदैव नंगे पांव रहता था। लाला की दुकान या उसका घर यही उसकी दूरी नापने और जानने की सीमा थी।

तेजी से बदलाव ला सकता है ? यह कैसा जादू है ! इन्हीं सब बातों में उलझा हुआ कल्लू दूकान तक आ गया।

9

मालूखा अनायास चीखप डा। लाला के हाथ से पौना छूट कर उफनते तेल के कड़ाई में जा गिरा। उसमे तेल की छींटें उचटी। वे छींटें मालूखा की बाह पर आ पड़ी। कल्लू मालूखा की जगह काम करने लगा। मालूखा सरकारी अस्पताल में अपने हाथ को दिखलाने चला गया। लाला रह-रह कर मालूखा पर बडबडाता रहा "मालूखा की ग्रह-दशा खोटी है।'''आज से ही पकौड़ी बनाना शुरू किया था। दो-तीन घान अच्छे निकाले थे। ग्राहकों की भीड टूट पड़ रही थी कि''' कितना समय व्यर्थ में खराब हो गया।'''स्साले का रोता भाग्य है। ''तू ठीक से काम करना, कल्लू !'' देखता हूं कि तू मालूखा के पद-चिह्नों पर चलने की कोशिश कर रहा है।'''"

पकौड़िया फिर निकलने लगीं। ग्राहकों का मेला लग गया। लाला स्वय प्याज नहीं खाता है परन्तु आज वह प्याज, पनीर, पालक, आलू, मिर्ची, बैंगन आदि की पकौड़िया बना रहा था। चारो ओर महक मचल रही थी। उधर मौसम बादलों से घिरता जा रहा था।

लाला कल्लू से कई बार पूछ चुका था कि उसके पास नये कपड़े, स्वेटर और चप्पलों के लिए पैसे कहां से आये ? वह इस बारे में मालूखा से भी पूछ चुका था। उसे कल्लू की बात का यकीन नहीं हो रहा था। इस संसार में ऐसा कौन मूर्ख है जो अकारण किसी को अपने घर ले जाकर इतनी सारी वस्तुएं दे दे ? जरूर कोई चक्कर है। उसने दूकान में चोरी की होगी या कहीं और।—जिस बात पर उसे भरोसा नहीं हो रहा था, वह यह बात थी कि यह बारम्बार उस व्यक्ति का नाम ले रहा था,जिसको वह नहीं जानता था। कल्लू बारम्बार जिस नाम को दोहरा रहा था, वह था प्रोफेसर।—उसका पता था—प्रभात नगर। प्रभात नगर में कोई प्रोफेसर नहीं रहता है लाला ने यह पता कर लिया था। इससे लाला के मन में संदेह पैदा हो गया था।

कल्लू के दृढ़ स्वभाव से लाला परिचित हो चुका था। लाला बीमारी से उठा ही था। वह अपने में कमजोरी अनुभव कर रहा था। डॉक्टर ने उसे अधिक सोचने और चिन्ता करने से बचने का परामर्श दिया था।

मालूखा लौट आया। रात काफी हो चुकी थी। दूकान बंद करके कल्लू सोने की तैयारी कर रहा था। सोने से पूर्व उसने मालूखा से पूछा था, "सब कुछ ठीक है न।'''डॉक्टर ने क्या बताया ? तुमने खाना खाया या नहीं।'''कुछ बोलो

…ती दोस्त।"

"नींद आ रही है।" मालूखां फुसफुसाया।

"बत्ती बंद कर दूं।" कल्लू ने कहा।

"हां।"

दोनों सो से गये। कल्लू सोते हुए जग रहा था। उसके मनोमस्तिष्क [illegible] स्वप्न थे। आज वह कई बार दर्पण के सामने खड़ा हुआ था और अपने को दे[illegible] तक निहार का इस नतीजे पर पहुंचा था कि वह भी कुछ है। उसका रंग रू[illegible] निखर आया था। उसके चेतना में एक नये कल्लू का जन्म हो रहा था। वह भी इज्जत से जी सकता है। उसे भी ठीक से जिन्दगी जीने का अधिकार है। इससे पूर्व वह इस अधिकार से वंचित क्यों रहा, क्यों वह उपेक्षा, घृणा और दया का पात्र बनता रहा? उसे इस स्थिति में किसने पहुंचाया? कौन है उसके लिए जिम्मेदार?··· यह प्रश्न पहले भी उसके मस्तिष्क में हलचल मचाता रहा था! परन्तु इस बार प्रश्न के तेवर बदले हुए थे। उसे लग रहा था कि इस बार अपराधी उसकी आंखों के सामने था। और वह इस अपराधी का नाम बतलाने वाला है।

मालूखां कराह उठा। कल्लू ने पहली बार ध्यान नहीं दिया। मालूखां पुन: कराहने लगा। कल्लू ने पूछा, "क्या बात है मालूखां?" उसके स्वर में आत्मीयता थी।

"कुछ नहीं।" वह चुप हो गया।

"कुछ हो तो बता, दोस्त।" कल्लू बोला।

वह चुप रहा।

"तू चुप क्यों है?···क्या कहीं दर्द हो रहा है?" कल्लू ने प्रश्न किया।

"नहीं।" मालूखां ने कहा।

"छिपाता है।"

"नहीं।" मालूखां ने पीड़ा दबाते हुए कहा।

"मेरी कसम खा।" कल्लू ने कहा।

"क्यों?" मालूखां ने अंधेरे में टटोलते हुए कहा।

"[illegible] सच-सच बता।"

"[illegible]न, कल्लू तू सच सच सुन।" यह कह कर मालूखां कुछ देर बाद बोला, "[illegible] नहीं है।'

"[illegible]!··· इसलिए नींद नहीं आ रही है।"

"···। कुछ-कुछ दर्द भी है।" कल्लू का आर्द्र स्वर [illegible] रहा था।

"[illegible] देता है।"

"[illegible]।"

"[illegible]"

मालना करने की नाक में जो उसकी सास थी। लगातार बिना कुछ खाये पल पानी पर पत का हाथ रखकर, वह मनन कर लिया करती थी। एक बार उसने अपने को विगत परिस्थिति में फिसला पाया। उसे लगा कि अब उसके प्राण निकले कि···उसका चेहरा गम्भीर हो गया। उसके होंठ एकदम सफेद पड़ गये। उसकी आंखों में दूसरी-सी चमक थी। उसने बाबा नहीं आ रहा था कल्लू कुछ समझ नहीं पा रहा था कि वह इस समय क्या करे? वह पूछ रहा था, "मां, तुझे क्या हो रहा है।"

उसकी मां बोल नहीं पा रही थी। उसके होंठ कांपकर रह जाते थे।

"मां···बोलो न कुछ तो बोलो।" कल्लू चीख पड़ा था। वहरा हुआ सन्नाटा कांप गया था, क्योंकि कल्लू की आवाज में आन्तरिक शक्ति थी और तीखी कोशिश।

उसकी मां ने उसकी ओर और लगा कर देखा। उसकी आंखें अधमिची-सी थी। वह टकटकी लगाकर देखती रही। एक फकीर उधर से आ रहा था, वह दर्दभरी आवाज कोशिश को सुन कर रुका। पास आया। उसे देखा। अपनी झोली में से, उस बयोवृद्ध फकीर ने, जिसकी सफेद दाढ़ी बहुत लम्बी थी और जिसके झुर्रीदार चेहरे पर दमकती आंखों में लौ मचल रही थी और जो ऊपर से नीचे तक एक चोगा पहने हुए था, एक जड़ी-बूटी निकाली और उसे पानी में घोल कर उसकी मां को पिलाया। कुछ देर तक वह मौन बैठा, दूसरी ओर देखता रहा जिधर से चिड़ियों की टोलियां कुछ देर पहले गुजरी थी और अब अकेली एक चिड़िया, जिसकी उड़ान से थकान साफ नजर आ रही थी और जो आकाश-धरती पर घिरते अन्धेरे से अन्दर ही अन्दर सकपका रही थी, गुजर रही थी—उसके मायने में वह उसके मन की कल्पना करके सहम गया था क्योंकि जैसे ही उसने कल्पना की उड़ान भरी वैसे ही उसके सामने डरा-सहमा बैठा कल्लू विशाल आकार धारण करके एकदम धुंध के मानिंद फैल गया।

कुछ देर बाद उस फकीर ने उस ओर देखा जिधर कल्लू की आंखें देखते-देखते पथरा-सी गई थीं। कल्लू पूछ रहा था, "बाबा, मेरी मां को क्या हुआ है? —वह ऐसी क्यों हो गई हैं?"

फकीर मुस्कराया और उसे धीरज बधाने की दृष्टि से बोला, "बेटे, जो अपने में शरीर नहीं केवल आत्मा को जीते हैं, एकदम तेरी मा की तरह, वे समाधि ले

समाधि।"
री मा आखें खोलकर तुझे ढूंढ रही है।"
न भूल गया और अपनी मा की ओर देखने लगा। सचमुच उसकी
'क आंखें उसे ही ढूंढ रही थी। कल्लू पूछ रहा

न।"

उसकी मा मुस्करायी। उसने फकीर की ओर देखा। पूछा, संकेत से, वह कौन है?

"बाबा, मां आपकी कृपा से···।"

"देवि, तूने कब से लघन किया था?"

वह उस वयोवृद्ध फकीर की अमृतमयी वाणी को सुन रही थी। उसे मौन देख कर अन्दाज से उस फकीर ने कहा, "कम से कम बारह दिन से···।"

कल्लू लघन को समझ नही पा रहा था अतः वह चुप बना रहा।

उसकी मा ने केवल गरदन हिलायी। फकीर ने झोली में से एक रोटी निकाली। उसे उसने पानी में डुबोया। कल्लू की ओर गीली रोटी बढ़ाते हुए कहा, "अपनी मा को खिला।"

"नहीं···नही···।" उसकी मां चीख पडी।

फकीर मुस्कराया। उसने मद्धिम स्वर में कहा, "वाह परवरदिगार यह तेरा करिश्मा है ··तू ही जाने अल्लाताला···।" उसने पूरी दृष्टि से आकाश की ओर देखा। आकाश के निर्जन में अब वह अकेली चिड़िया भी नही थी। फकीर ने अपने चेहरे को हथेलियो से ढका। फिर अपनी आखो की पुतलियों को उगलियों से सहलाया और उसकी मा की ओर मुखातिब होकर बोला, "यह फकीर की रोटी है, बहिन, भीख की नही।"

"नही।" उसने हाथ जोड़ दिये।

"बहिन, यह फकीर की रोटी भी नही है" आसमान की ओर इशारा करते हुए उसने कहा, "तेरे रामकृष्ण की भेजी हुई सजीवनी बूटी है।···ना न कर।··· तुझे उसने प्यार से भेजी है।···ये कूटू की रोटी है—अन्न की नही"।—फकीर की आखो में सलोया की अरुणिमा फैल गई। वह मन ही मन कुछ कहता रहा।

उसकी मा ने रोटी खायी। बाद में उसको दोनो हाथ जोडकर प्रणाम किया।

फकीर उठते हुए कह गया, "मैं तो अपने को ही समझता था कि अल्लाताला के बहुत करीब हू। उससे बात कर लेता हू। तू तो बहिन, स्वय उसे ही जी रही है। —वाह! प्रभु तेरी लीला अपरम्पार है। तुझे जो चाहने लगता है, तू उसे अपने जैसा बना लेता है ··न उसे भूख मारती है और न प्यास।—बहिन, तुझे मेरा प्रणाम!"

कल्लू आश्चर्य से उसकी ओर देखता रह गया। फकीर ने उसकी मा को प्रणाम क्यों किया? वह फकीर कौन था? अचानक उस जनशून्य स्थान पर कैसे आ गया?

"मा, तुझे क्या हुआ था?"

"कुछ नही, रे ।"

"कुछ तो जरूर ।"

"तू एक वायदा करेगा ।"

"क्या मां ।"

"तू वायदा कर सकता है ।"

"हां मा, मैं वायदा करता हूं ।"

"तू कभी किसी से भीख नही लेगा ।"

"नही मा । मैं कभी भीख नही लूगा ।"

"न कभी चोरी करेगा ।"

"कभी नही ।"

"भूख से मरना भी पडेगा तो उसे · ।"

"स्वीकार करूगा मा ।" कल्लू ने वाक्य पूरा किया।

"कोई कभी कहेगा तो भी···।"

"नहीं मा, तो भी नही ।"

"तूने वायदा किया है ।"

"हा मा, तेरी कसम लेकर किया है । उसे प्राणपण से पूरा करूगा ।···तू परख कर देख लेना ।"

उसकी मा मुस्करायी । उसने अंधेरे की ओर देखा जो कि सझोखा की अरुणिमा को किसी बडे अजगर की तरह निगल चुका था । फिर भी वह आसमान में किसी को देखे जा रही थी । उसकी मुस्कराती हुई आखो से लग रहा था कि वह जिसे देख रही है, जिसे वह नही देख पा रहा है, वह अवश्य कुछ अजूबा है। वह अजूबा क्या है जो कि धीरे-धीरे उसकी मा की आखो मे फैलने लगता है और उसकी मा अनन्त सौन्दर्य से आवेष्ठित होती जाती है ।

मालूखा ने यह कहकर कल्लू की स्मृति के उत्सव को झकझोर डाला, "क्या तू मेरे लिए इतना भी नही कर सकता है,···कहो, कल्लू मैं इसी कारण मर गया तो···।"

"नही, तू नही मरेगा ।—जिद न कर, मैं तेरे लिए रोटी बना सकता हू ।···"

"दूध नही ।"

"नही ।" कल्लू ने दृढ़ता से कहा और अपनी बात की सफाई मे उसने आगे कहा, मालूखा, तू मुझे गलत न समझ । तू ही मेरा अपना है । मैं तेरे लिये जो कुछ कहे, कर सकता हू परन्तु यह मैं कदापि नहीं कर सकता कि सामा के दूध मे···।"

"तेरी समझ मे यह आता है कि सामा दूसरों की आंखो मे धूल झोंकता है,

···दूध में पाउडर···अरोरोट मिलाता है। चोरी किये कोयले खरीदता है,·· हमें तुम्हें कुत्तों से बदतर जीवन जीने के लिये विवश करता है···और···और···।"

"बस-बस, मालूखां।"

"क्यों, सच का खुलासा क्या कड़वा लगता है!"

"नहीं, मैं सच से नहीं, सच की आड़ में दिन में उठे झूठ के शैतान से डरता हूं, मालूखां। वह शैतान जीने के तमाम हकूक में आग झोंक देता है। ··सच की तासीर कभी कड़वी नहीं होती है। सच जलते घाव पर ठण्डे मरहम का काम करता है।" कल्लू की मां उसके सामने आ खड़ी हुई थी। वह शायद उसको दिये वायदे के कारण ही जी रहा है और मुश्किलों से सामना कर पा रहा है।

"खैर, तेरी इच्छा।···तेरा ईमान जैसा कहे, तू वैसा ही कर।···" व्यंग्य मिश्रित मुस्कान से वह कहने लगा, जिस अंधेरे के कारण कल्लू नहीं देख पा रहा था, "यह जनम तो नहीं बन सका, तू अगले जनम को सुधारने की कोशिश कर रहा है, यह भी बुरा नहीं। तू हिन्दू है, हिन्दुओं का पुनर्जन्म होता है। मैं मुसलमान हूं, हमारे यहां पुनर्जन्म की व्यवस्था नहीं है। हमें तो अल्लाताला के सामने अंत में पेश होना पड़ेगा। और पता नहीं कब?" मालूखां ने अंधेरे में झांकने की कोशिश की।

कल्लू जोर से हंस पड़ा।

"क्यों हंसा रे।" मालूखां के व्यंग्य का वार खाली गया। वह स्वयं चौंक पड़ा।"

कल्लू ने होठों में अपनी हंसी दबाकर कहा, "तू तो एकदम मुल्ला-मोलवी हो गया है इस वक्त, मालूखां।"

"इसमें मुल्ला-मोलवी की क्या बात है?" मालूखां ने खीझते हुए स्वर में कहा।

"पशु भी तो मरते हैं।"

"तो···।"

"पशुओं को हिन्दू मुसलमान दोनों पालते हैं।"

"तो क्या वे हिन्दू और मुसलमान नहीं होते हैं।"

"हिन्दू···मुसलमान।···पशु···कैसे हो सकते हैं!" मालूखां ने धार्मिक गणित फैलाकर हिसाब लगाया।

"वे भी तो जन्मते, मरते है।"

"हां।"

"फिर—वे अपने को कटघरे में क्यों नहीं बांधते हैं।" कल्लू ने कोयले पर छा रही राख को फूंक मार उड़ा दिया। कोयले की अरुणोष्मा धधक उठी।

"हां, तू ठीक कहता है।···खुदा तो उनका भी है। उस पर मनुष्य का ही

एकाधिकार क्यों !" 'खुदा तो पक्षियों का भी है ! वह तो सबका है।" मालू[illegible]
की पकड़ मजबूत हो उठी।

"सोचने की शक्ति के विकास का मतलब यह तो नहीं होता है कि [illegible] सोच के ताबूत पर बैठकर उसके अंत की कल्पना को तरह-तरह नश्तर लग[illegible] रहे। सोच को खामख्वाह जीते जी मार डाले।' 'यह आत्महत्या का तरीका [illegible] जिसे कोई मजहब स्वीकृति नहीं देता है। कल्लू ने अदृश्य तहरीर को प[illegible] सुनाते हुए विनती की, "तुझे रोटी बनाकर देता हूं, मेरे अजीज भाई !" "[illegible] खुदा की नियामत है। तू उसे कबूल कर और अल्लाताला का शुक्रिया अ[illegible] कर।"

"कल्लू...।" मालूसा का हृदय पुकार उठा।

"मालूसा, वह प्रोफेसर कह रहा था...।"

"जिसने तुझे कपड़े वगैरह दिये थे।"

"हां, मालूसा, वही।"

"क्या कह रहा था।"

"धर्म इन्सान से बड़ा नहीं है। वह उत्तेजित व विकराल भावनाओं का इस[illegible] [illegible]रना है। जो मजहब व्यक्ति को व्यक्ति का दुश्मन बनाता है वह मजहब नहीं [illegible] मजहब का ढोंग है—जो व्यक्ति और समाज दोनों के लिए नासूर-सा स[illegible]रना [illegible]।...हमारी तेरी इस स्थिति के लिए किसी सीमा तक वह भी जिम्मेदार है [illegible] "मन को जो पाक रखे, वह मजहब है।...सच्चा मजहब खुदा की तहरीर [illegible] इसमें वह पढ़ सकता है जो खुदा के बंदे की खिदमत में प्यार से लगा है।" कल्लू [illegible] को इसकी खुशी थी कि उसने प्रोफेसर के कथन को ज्यों का त्यों उगल कर डाला [illegible] और, वह भी बड़े प्रभावपूर्ण ढंग से।

मालूसा ने कहा, "तू रोटी खिला, कल्लू।"

कल्लू मुस्कराया और उठ खड़ा हुआ। वह कहने लगा, 'अब आया न रास्ते [illegible]।' "फटाफट रोटी बनाता हूं।" तू थोड़ा-सा सब्र कर। वह स्टोव उठाकर [illegible] पड़ी मेज पर रख चुका था और उसके बाद टूटे कनस्तर में आटा निकालने [illegible]। उसे खुशी थी कि मालूसा उसकी बात मान गया। उसके चैन की [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]।

10

[illegible]

करने लगता है। वह क्या-क्या कहता है। उसे कोई भला आदमी नहीं सुन सकता। लाला ब्लड प्रैसर का मरीज है और अधिक देर तक तेज बोलने पर वह हाफने लगता है तथा उसके चेहरे पर पसीने की बूंदें तैरने लगती हैं।

नल से नल नहीं आ रहे थे। कल्लू पकड़ में आ गया। मालूखा की जगह उसकी शामत आ गई थी। धीरे-धीरे जैसे ही वह सोचता जा रहा था वैसे ही उसके सामने उसका अतीत कुनकुनी धूप-सा फैलता जा रहा था। कुछ देर तक वह खेंचू के सामने बाल्टी भरकर खड़ा रहा। उसको लगा कि बहुत सारे जंगली पक्षी उस पर टूट पड़े हैं और वे उसे अपनी पैनी तथा नुकीली चोंच मारमारकर लहूलुहान कर रहे हैं। वह चीखना चाहकर भी नहीं चीख पा रहा है। वह अचानक भाग खड़ा होता है। आश्चर्य कि थोड़ी दूर भागकर ही रह जाता है। उसे महसूसता जैसे उसकी टांगें नकली हों और वह बैसाखी के सहारे चलने वाला हो। उसकी बैसाखी उसके हाथ से छूटकर नीचे गिर गई हो और वह अब खड़े होने में भी असमर्थ हो। तभी कोई तेज स्वर में पुकारा। उसे लाला का खयाल आया और वह बाल्टी लेकर चल पड़ा।

वह बाल्टी लेकर आया तो देखा लाला मालूखा पर लाल-पीला हो रहा है। उसे डांट-डपट रहा है। बिलकुल उसी तरह जैसे वह उसको डांटता-डपटता है।

कल्लू को कुछ तसल्ली हुई। मालूखा पैंतालीस को छू रहा था। लगता वह चालीस से ज्यादा नहीं था। इतना बड़ा होकर भी वह यदाकदा मार खा जाता था परन्तु वह कभी उफ् नहीं करता। देखने पर लगता है कि वह सब कुछ है। उसकी आंखों में ज्योति-सी जलती रहती है—एकदम इण्डिया गेट पर जलने वाली ज्योति-सी। उसकी देह गठी हुई है। यह अलग बात है कि वह महीने में एकाध बार ही नहाता-धोता है। उसकी देह पर सदा मैल जमा रहता है। उसकी कमीज-पैंट चीकट है।

कल्लू ग्राहकों की आपस में चल रही बातों को ध्यान से सुनता और समझने की कोशिश करता। वे बताते—"ये लाला क्या था, कुछ भी नहीं, खुले में चाय लिये बैठा रहता था। तब हम पढ़ते थे। हम पढ़-लिख भी गये परन्तु क्या हुआ? बाबू बन गये। गीली लकड़ी की तरह सुलग रहे हैं और ये लाला हमारे देखते ही देखते घर का मकान बना बैठा और पक्की दुकान। अण्टी में दो पैसे भी रखता है। हमारी तरह महीने का अन्त आते-आते बुझी बीड़ी-सा नहीं रह जाता है। स्साला मोटा रात-दिन नौकरों पर ताबड़-तोड़ वर्षा की तरह बरसता रहता है—एकदम हमारे खूसट शराबी अफसर की तरह'''जो बिना बात गुर्राता है और गुर्राने को अफसरी का रुतबा समझता है'''और हम लाजरपतू हा-हा साब की रट लगाये बराबर शुतुरमुर्ग की तरह राष्ट्रीय गीत दोहराते हुए समझते

रोते हैं कि हम पर न जाने कितने अत्याचार हो जायेंगे।"

कल्लू के पल्ले कुछ पड़ता और कुछ नहीं। वह चार नंबर ऑफिस में जाता। अफसर की ओर कनखियों से देखता और लाला से उसकी तुलना करता—वैसा मोटा वैसा ही फूला तन-बदन और ठाठ-बाट वाला। न मालूम तब उसे क्या संतोष होता, पर होता, जरूर होता।

लाला अगर किसी से डरता था तो मजदूर नेता से। उसकी वह बड़ी आवभगत करता था। पर जब भी आता तब वह मन में इतना जरूर बड़बड़ाता था—'साला इस लड़के को मारा पीटा मत कर। एक तो कानून के खिलाफ इतना छोटा लड़का नौकर रख रखा है। रात-दिन उससे काम लेते हो और ऊपर से उसे ठोकते-पीटते हो, यह नहीं चलेगा।" लाला चुपचाप उसकी तरफ दस का नोट बढ़ा देता और वह दस के नोट को जवाहरकट बंडी की जेब में रखकर आगे बढ़ जाता—सीना ताने और फिर उड़ा दिये।

लाला भद्दी-सी गाली देता हुआ बड़बड़ाता—"नेता का बच्चा। हरामखोर।" कल्लू कुछ नहीं समझता। सिर्फ आश्चर्य से देखता रहता और महसूस करता कि उसकी लाला की कोई रग दबी हुई है।

अनायास लाला भड़ककर चीखने लगता—"कहां मर गया, हराम की औलाद' इधर आ' 'साला सुनता ही नहीं है। कब से चीख रहा हूं'''कुत्ते, इधर आ।"

कल्लू तै नहीं कर पाता कि वह उन दोनों में से किसे बुला रहा है। वह फटी-फटी आंखों से देखता रहता।

"अबे कल्लू के बच्चे, दिदा फाड़कर क्या देख रहा है। मैं गला फाड़कर तुझे ही पुकार रहा हूं।"

"—क्या है, लाला।"

"कितनी बार कहा है कि उस नेता के सामने मत आया कर पर तू है कि एक कान से सुनता है और दूसरे से निकाल देता है। एकदम चिकना घड़ा हो गया है।'''जानबूझकर उसके पास जा पहुंचता है। वह क्या—तेरा बाप लगता है?" लाला बैठने का रुख बदलता हुआ कहता। "लाला आगे से ध्यान रखूंगा।"

"—ध्यान का बच्चा" लाला शब्दों को चबाता और खीज भरकर अन्दर ही अन्दर खिसिया कर रह जाता'''कमबख्त!

लाला को रह-रहकर इस नेता का बौना चित्र उभरता और वह कस-कसकर उसे मन ही मन कोसने लगता। वह सोचता कि आखिर इस तरह से इस देश का क्या होगा?" कोई इस देश को अपना मानता भी है क्या? जिधर देखो, ऊपर से नीचे तक हरेक आदमी, चाहे वह बड़ा हो या छोटा, सरकारी नौकरी में हो या गैरसरकारी, जन सेवक हो या आतंकवादी, सबके सब मेज के नीचे से होने

वाली आमदनी की दौड़ में धंसे-फंसे हैं। नाना को जिन्दगी का खासा तजुरबा था। उसने सड़क छाप इन्सान से उठकर यहां तक प्रगति उन्हीं तरीकों की मेहरबानी से की थी, जिन्हें घृणा या उपेक्षा की दृष्टि से देखा जाता है। प्रारम्भ में वह भी ईमानदारी के सम्मोहन में फंसा अपनी जिंदगी की चादर को, कबीर की तरह ज्यों की त्यों धर कर जाना चाहता था। उसने यदि समय पर वक्त का 'नोटिस' नहीं लिया होता तो वह मालूखा की तरह हिकारत तथा उपेक्षित जिन्दगी के दौर से गुज़र रहा होता। आज वह जो कुछ है, वह उन रास्तों की बदौलत है, जिन पर रोशनी में चलना उन जैसों के लिए नामुमकिन है। वह समझ गया है कि पाप वह है जो प्रगति के रास्तों पर व्यवधान बनकर खड़ा है। उसके लिए सत्य-झूठ में कोई अन्तर नहीं है। वह इस अन्तर में अपना समय भी नष्ट नहीं करना चाहता है। वह जानता है कि कोई शिष्ट और समझदार व्यक्ति ऐसे झमेलों में पड़ना नहीं चाहता है, जो कि व्यक्ति के वर्तमान को कील से गाड़ना चाहता है।

लाला जिन्दगी के हर दौर से गुजरा है, फलत: उससे कुछ भी छिपा नहीं है। वह अब तक भली प्रकार अपनी जिन्दगी के उसूल निश्चित कर चुका है। उसको कोई भटका नहीं सकता। संत और मुनियों के नैतिक कवच को वह पहचानता है।

इसी समय प्रोफेसर नर्मदाशंकर आ गये। कल्लू ने उनका स्वागत तो किया परन्तु सहमते हुए। उन्होंने जो कुछ उसे दिया है, वह उधार। वह उसे वापस मांग सकते हैं। उसे लगता कि कुरता, पायजामा, स्वेटर व चप्पल की कैद में पड़ा हुआ वह सिसक रहा है। आज वह फिर उससे वही प्रश्न करेगा। वह कछुए की तरह प्रश्न की आहट सुनते ही गरदन समेटकर पानी के अंधेरों में उतर जायेगा। वह प्रायः ऐसा ही करता रहा है। यह उसका स्वभाव है।

चाय, बिस्कुट और मौन यह कैसा भारी पत्थर है, जिसे न जाने किसने उसकी पीठ पर बांधकर उसे पानी में ढकेल दिया है। यदि वह उस भारी भरकम पत्थर को अपनी पीठ पर से हटाना चाहता है तो उसे प्रोफेसर के रास्ते को ही अपनाना होगा।...नहीं तो वह कुछ नहीं सोचे। चुपचाप उसकी दी हुई सौगात उसे लौटाकर हाथ जोड़ दे।

प्रोफेसर उसको क्या बनाना चाहता है? क्या यथार्थतः वह कुछ बन सकेगा? दरअसल उसे अपने पर भरोसा नहीं था। हां, जब वह दर्पण के सामने खड़ा होकर अपने को देखता था तब उसे लगता था कि वह कुछ बन सकता है। उसमें अपार शक्ति है। वह भी अच्छा जीवन जी सकता है। वह कौन है जिसने हरे-भरे जीवन की उससे कल्पनाएं छीन ली हैं और उसे थार के मरुस्थल में भटकने के लिए अकेला भूखा-प्यासा छोड़ दिया है। वह पागलों की तरह वर्षों

से घटाटोप की दम-दम में फंसा हुआ अर्थहीन जिन्दगी को जीने का भ्रम पाले
रहा है। उसकी जिन्दगी कितनी निरर्थक और बेबुनियाद है—नश्वर और क्षुद्र
जीने वाले-सी।

जरूर उसको कुछ करना चाहिये। उसे अदृश्य बेड़ियों के बंधन स्वयं तोड़ने
हैं। उसका शत्रु बाहर का नहीं है, उसके अन्दर का है। इस अदृश्य शत्रु के तमाम
आस-पास को उसे ही काटना है। उसे ही उससे मुक्ति पाने का आन्दोलन सदा
करना है।

इससे कल्लू का गला रुंधने लगता। उसके मोटे काले होंठ फड़फड़ाते। उसके
सामने हैंगे फड़फड़ाता तोता ठहर जाता। इसके बाद बस आकर रुकती। बच्चे-
बच्चियां कंधे पर बस्ते लटकाए बस में चढ़ने लगते। बस सरकने लगती। बालक-
बालिकाएं हाथ हिलाकर टाटा करते हुए मुस्कराते।

प्रोफेसर नर्वदाशंकर ऊपर के होंठ से निचला होंठ दबाकर कसमसाते और
तैश खाकर पूछते, "तुझे भी क्या मालूखा ही बनना है। वह अधेड़ उम्र का हो
गया है, फिर भी वह जहां का तहां है, न उसकी शादी हुई और न उसका घर
बसा। रिस-रिसकर जी रहा है, वह अक्ल का अंधा और भाग्य का मंदा है।
तुझे भी ऐसे ही जीना है क्या?...उसे कितना समझाया परन्तु वह नहीं समझा।"
कल्लू ने जैसे कुछ सुना ही नहीं और प्रोफेसर नर्वदाशंकर ने जैसे उससे कहा ही
नहीं।

कल्लू ग्राहकों की सेवा में खो गया और प्रोफेसर नर्वदाशंकर चुपचाप
उठकर अपने में सुलगता बरसता चल दिया, "जाने कब इस देश का इन्सान
जागेगा। कब उसे अक्ल आयेगी? कब वह आजाद होगा?"

आज प्रोफेसर नर्वदाशंकर ने कल्लू पर चलने के लिए जोर नहीं दिया।
कल्लू कई बार निर्णय लेकर पुनः जहां का तहां रह गया। उसके लिए वह क्षेत्र
एकदम नया था। वह डरता था कि वह उन लोगों के बीच नहीं रह पाया
तो। सम्भावनाएं उसे तोड़ जाती थीं। मालूखा इस तरह के अनुभव सुना
चुका था, जिससे वह अपेक्षाकृत आगे बढ़ने के पीछे लौट आता था।
आज उसने तै कर लिया था कि वह जरूर निर्णय करेगा। उसे रह-रहकर
प्रोफेसर की बात याद आ रही थी कि वह मालूखा के बारे में पता करे कि
वह कुएं का मेंढक बनकर एक जगह रह गया! मालूखा करवट लिये सोने
का प्रयास करने में सफल नहीं हो पा रहा था और कल्लू की आंखों में नींद नहीं
थी। सर था।

दर्द की अपनी फितरत है। वह किसी को तरजीह नहीं देता। वह मालूखा
को नहीं पहचानता। वह तो दर्द है, वह रोके नहीं रुकेगा। बांध की दगार पर
जैसे पानी का संयम काम नहीं करता है। वैसे दर्द किसी सीमा-मर्यादा की परवाह

नहीं करना है।

"कल्लू फिर साहस बटोरकर पूछता, "मालूखा मैं पैर दबा दूं, सिर रगड़ दूं।" वह आज भी कराह रहा था। जहां से वह जला था, वहां घाव बन गए थे। पूरे दिन वह काम करता रहा था। इस कारण उसके घावों पर जोर पड़ा। दिन में तो मरने की भी फुर्सत नहीं थी। इस कारण उधर उसका ध्यान नहीं जा सका। अब एकांत था। ठण्ड भी तेज थी। उसका शरीर भी कांप रहा था। काश ! वह मर जाता। वह सोच के पर नोच डालना चाहता था क्योंकि सोच ही उसे मारे डाल रहा था। वही उसे उकसाता था और वही धोबी पछाड़ लगाकर उसे अकेला सिसकने के लिये छोड़ जाता था। उसने कल्लू की ओर देखकर सहजता से कहा, "नहीं, कल्लू।"

"दवा से कोई फायदा नहीं हो रहा है क्या ?" कल्लू ने अगला प्रश्न किया।

"हो रहा है।" मालूखां मद्धिम स्वर में फुसफुसाता और करवट बदल लेता।

"कम हो रहा है, मालूखां ?"

"शायद · ठीक हो जाएगा, कल्लू, तू सो जा।"

"नींद नहीं आ रही है, मालूखां।" कल्लू का मन आर्द्र हो उठता।

"क्यों, क्या बात है ?···लाला ने कुछ कहा है क्या ?"

"नहीं।" कल्लू दृढ़ता से दोहराता।

"तो क्या किसी ग्राहक ने उल्टा-सीधा कहा है ?"

"नहीं।"

"तो फिर क्या बात है ?"

"है, मालूखां, है ··बात है। मन में पके फोड़े-सी ऐंठ रही है।"

"मालूखां अपने होठों पर जीभ फिराता और थूक गटककर पूछता, क्या है ?"

"आज तुम्हारे दर्द हो रहा है मालूखां, आज रहने दे।"

"नहीं रे, तू कह डाल जो कुछ कहना है।"

"कुछ खास नहीं है, मालूखां। तू सोने की कोशिश कर।"

"मुझे भी नींद नहीं आ रही है, कल्लू।" मालूखां का बुझा हुआ स्वर था। उसे रह-रहकर दर्द उद्विग्न कर डालता था।

"क्यों मालूखां, जिसके दर्द होता है, क्या उसे नींद नहीं आती है ?" कल्लू ने झिझकते हुए प्रश्न तैराया।

"तेरे भी क्या दर्द हो रहा है ?"

"नहीं तो।"

"फिर तुझे नींद क्यों नहीं आ रही है, रे ?" मालूखां झपटकर पूछता और सोचता कि वह बेचैन हो उठा है। उसमें अपने को लेकर हलचल है परन्तु वह

कोई निर्णय नहीं कर पा रहा है।

"एक बोझ है'''सांपिन-सा मन पर लोट रहा है।" कल्लू सोचने लगता।

"क्या बोझ ?"

"जीवन का बोझ।"

"कुछ कहेगा भी या पहेलियां ही बुझाता रहेगा।" मालूखा ने कुछ से तैश खाकर कहा और कल्लू की ओर कनखियों से देखने लगा।

"एक बात बता, मालूखा ?"

"क्या ?"

"तू इस लाला के पास कब से है ?"

"जब तेरे जितना था'' यही छह-सात वर्ष का था' 'तब से।" म कुछ सोचकर उत्तर देता।

"तुझे यह कहां से पकड़कर लाया था ?"

"सड़क से।" मालूखा ने तेजी से कहा।

"कैसे ?"

"मैं भीख मांग रहा था। इसने पूछा, कुछ काम करेगा। इससे पहले कोई उत्तर देता, इसने मेरे सिर पर गठरी रख दी और बोला मेरे पीछे-पी चलता आ।"

"और तब से लाला के पीछे-पीछे चल दिया'''चलता ही रहा'''"

"हां, और करता क्या ? तीन दिन से भूखा था। तब तो यह भी याद नहीं था, कल्लू, कि मुझे तीन दिन बिना कुछ खाये हो गये हैं।"

"फिर ?"

"फिर क्या ? लाला ने मेरा इतिहास पूछा और रख लिया था।

"तुम्हारा क्या इतिहास था, मालूखा"—कल्लू में जिज्ञासा ने करवट ली।

"क्या था मेरा इतिहास ? एक रात मां मुझे साथ लिए जा रही थी। एक ट्रक पास से गुजरा। मां उसकी चपेट में आ गई और अल्लाह को प्यारी हो गयी'''बस''' !'''वह दृश्य मैं कभी नहीं भूल सकता। मेरी मां और ट्रक। खून सड़क पर बिखरता जा रहा था और वह धीरे-धीरे सूख करती जा रही थी। अन्त में वह रोशनी रोशनी में मिल गई और मैं उसके कुछ अर्से बाद से यहां हूं। यही था, यही हूं और जब तक प्राण में प्राण हैं, मैं यहीं रहूंगा।'''मेरा इतना-सा मामूलिम इतिहास है किसी कमजोर जाति की वरासत-सा—एकदम सूना और बहरा।" मालूखा ने गहरी सांस लेकर कहा, "मैं बच गया, यह मेरी बदकिस्मती थी।"

'तेरा और कोई'''" कल्लू के मन में कुलबुलाता प्रश्न उछल कर सामने

आ गया।

"और कोई नहीं था" मालूखा ने अति गंभीर होकर उत्तर दिया।

"पिता जी ?"

"उन्हें मैंने नहीं देखा और न मां ने कभी उनके बारे में बताया। मां मजदूरी करती थी। मां के अलावा मेरा दुनिया में कोई नहीं था, कल्लू।" मालूखा की आवाज में दर्द डोल गया। उसका स्वर आर्द्र हो गया। उसने अपने को तुरन्त संभाल लिया और खखार कर आगे कहा, "सब पूरब जनम का फल है, कल्लू, वह तो भोगना ही पड़ेगा। इससे कोई नहीं बच सकता।"

'पूरब जनम' की बात कल्लू के पल्ले नहीं पड़ी उसको इतना ही समझ में आया कि मालूखां भी उसकी तरह इतनी बड़ी दुनिया में अकेला है और दुःखी है। उसने मन-ही-मन हिसाब लगाया और पूछा "तू यहां कब से है, मालूखा ?"

मालूखां ने अंधेरे को चीरने का यत्न किया। दिमाग पर जोर डाला। धीरे-धीरे वह हिसाब लगा पाया और बोला "पैंतीसेक वर्ष हुए जाते हैं, कल्लू। शायद कुछ ज्यादे ही···परन्तु इससे कम तो कतई नहीं।"

"पैंतीसेक वर्ष।" साश्चर्य कल्लू बड़बड़ाया और पुनः उसने पूछा—"तब से आज तक तुम में कोई अन्तर नहीं आया, मालूखा ? तू जहां था, वहीं है।"

"कैसा अन्तर ?" मालूखा बुदबुदाया। उसने करवट ली।

कल्लू के सामने प्रोफेसर आ खड़ा हुआ उसका एक-एक शब्द आकार बन गया। वह तड़प उठा। उसके मनोमस्तिष्क में गूंज रहा था। अट्टहास लगाता यह स्वर "क्या तुझे भी मालूखां ही बनना है, कल्लू ?"

ग्राहकों की भीड़-भाड़ में कल्लू ने प्रोफेसर से यह प्रश्न नहीं किया था कि मालूखां में क्या बुराई है ? क्या वह इन्सान नहीं है ? क्या उसके हाथ-पैर नहीं हैं ? आखिर क्या कमी है उसमें ?

उसे तो मालूखां में कोई कमी नजर नहीं आती। परन्तु आज उसको लगा कि मालूखां में कमी है। क्या कमी है, यह वह पकड़ नहीं पा रहा था उसने पूछा, "आज तक तुम पहनने के लिए भी ठीक से कपड़े नहीं जुटा पाये, मालूखा ?"

"देखना हूं कि तुम कैसे जुटाते हो, बच्चू।" मालूखा कहने को तो यह सहज कह गया परन्तु इससे उसका हृदय डांवाडोल हो उठा। उसके आहत स्वप्न और व्रण भरी कल्पनाएं हरे हो उठे।

मालूखां के मथन का कुछ-कुछ आभास पाकर कल्लू में जोश पैदा हुआ। उसने उसके मन-हृदय को छू जाने वाली बात सोची और चाहा कि उसका निशाना उसके मर्म को मथ डाले। वह खखार कर बोला "तुम एक घर भी नहीं बना पाये, मालूखां।"

"तुम बना लेना, कल्लू।" मालूखा के स्वर में व्यंग्य था, व्यंग्य में चोट थी।

घाट में मवाद भरा फफोला अन्दर फुफकार रहा था। उसमें हल्का सा आक्रोश भी था। वह किस पर आक्रोशित हो रहा था, उसे यह नहीं पता था।

"पर तुम से यह सब क्यों नहीं हुआ, मालूखा ?" उसने बहस करनी चाही।

"तुम करके दिखा देता, बच्चू।···वह तो सस्ता जमाना था। एक रुपया का तीन किलो दूध आता था तेरह-चौदह रुपये मन गेहूं था। ग्यारह रुपये किलो देसी घी था···और आज···।" मालूखा का स्वर आर्द्र था। वह सोच गया था कि वास्तव में वह कुछ नहीं कर पाया।

कल्लू अवाक् रह गया। क्या मालूखा सच कह रहा है, वह सोचता रह गया। प्रोफेसर ने ठीक ही कहा था कि संघर्ष जीने का मंत्र है।

"परन्तु मालूखा, तुमने कभी कोशिश नहीं की···" कल्लू की जुबान लड़खड़ा गई।

"क्या कोशिश करता ?" मालूखा ने उपेक्षा से पूछा और उठते दर्द को दबा लिया। जबाड़ा पूरी तरह खोला, मुट्ठी तानी और दर्द को आंख दिखा दी। दर्द बेचारा चुपचाप खिसक लिया। उसने अपने ऊपर टाट खींच लिया। अब तो टाट के भी पैबंद जवाब दे उठे थे।

"यही कि ऊपर उठते। दो पैसे जोड़ते।"

"ऊपर कहां उठता ? पैसे कैसे जोड़ता ?" मालूखा विद्रूप से भर उठा।

"इस स्थिति से ऊपर उठते और पेट काट कर दो पैसे जोड़ते।"

"आखिर कितना जोड़ लेता ?" मालूखा ने बिना सोचे समझे कहा।

"जितना जुड़ पाता ?" उसने कहा, "पर जोड़ना था।"

"जितना कितना दो-चार रुपये···" मालूखा भुनभुनाया। उसमें उबाल ने आंखें खोली। वह सख्ती से उस कीचट अंधेरे में बंद हो गई आंखों को तलाशने लगा। उसे लगा जैसे कुछ उससे छूटा जा रहा है। तेजी से वह अथाह समन्दर की गुमनाम और अदृश्य दुनिया में समाता जा रहा है। उसका सिर चकराया। वह जोर से खांसा। उसकी पसलियां हिल उठीं। नसें तन गईं।

"नहीं, मालूखा, यह तुमने अपने साथ न्याय नहीं किया।" कल्लू ने अनोखे प्रोफेसर का वाक्य दोहरा दिया।

मालूखा के मनोजगत् में समुद्र मंथन होने लगा। उसे पहले भी किसी ने यही कहा था। उसने दिमाग पर बहुत जोर डाला परन्तु कुछ याद नहीं आया। उसकी स्मृति भी अब उसका साथ छोड़ने लगी थी। यथार्थतः उसने अपने साथ ठीक नहीं किया। पर क्या ठीक नहीं किया ? मात्र इस कथन से क्या काम चलता है। उसने, जो कुछ वह कर सकता था, किया। वह उनके अलावा और कुछ नहीं कर सकता था। उसको अपने ऊपर या कल्लू पर गुस्सा आया। उसके सामने अंधेरा छाने लगा।

"क्या न्याय नहीं किया ?" मालूखां खीझ से भर उठा।

"हां क्या न्याय नहीं किया ?" कल्लू ने दोहराया। दरअसल वह इस जुम्ले का अर्थ नहीं समझता था। परन्तु फिर भी उसे लगता था कि वह इस जुम्ले का अर्थ महसूसता है।

"तू अनाप-सनाप मत सोच, कल्लू ! सोचने से कुछ नहीं होगा। शेख चिल्ली बनने में कोई फायदा नहीं जो है, जैसा है, उसे अल्लाह के नाम पर कबूल कर ले. इसी से सुख मिलेगा, शान्ति मिलेगी और मौज-मस्ती मिलेगी।" कल्लू ने मालूखा के तरन्नुम को नहीं सुना वह सारी जिन्दगी ऐसे नहीं काट सकेगा। वह कुछ करेगा अपाहिज नहीं बनेगा नहीं-नहीं कदापि नहीं। सीलन भरी बदबूदार जिन्दगी वह नहीं जियेगा।

"कुछ तो सोचना होगा !" कल्लू के सामने प्रोफेसर था।

"कुछ क्या सोचेगा, रे ? इस नौकरी से भी हाथ धो बैठेगा। पगले, सोचना बंद कर दे। यह काम हमारा नहीं है। हमारा काम है लाला की शुभकामनाएं हासिल करना, झूठे बरतन धोना, मेज-कुर्सी साफ करना वगैरह-वगैरह।" मालूखा ने उसे धरती पर ला पटका।

"क्या जिन्दगी से इतनी जल्दी हार मान बैठा है, मालूखा ?" उसका सोच कसमसाया।

"कुछ भी समझ, मैं जो हू और जैसा हू, उसी से सन्तुष्ट हूं।"

"तुम असन्तुष्ट किससे हो ?" सवाल ने फन उठाया।

"मैं असन्तुष्ट किससे हूं ?" मालूखा ने मन ही मन दोहराया। वह किससे असन्तुष्ट है। उसने मगज पर जोर डाला पर कुछ हाथ नहीं लगा। लगता भी क्या, उसे ऐसे सोचने का मौका ही पहली बार मिल रहा था।

"बोल, जवाब दे ?" कल्लू ने उसे कुरेदा और सोचा शायद राख के ढेर के नीचे कहीं कोई चिनगारी दबी पड़ी रह गई हो तो वह फूट पड़े परन्तु बेकार वहां कोई चिनगारी नहीं थी। जो कुछ था, राख थी। सर्द राख एकदम बुझी हुई शान्त राख। श्मशान-सी शान्त राख।

मालूखां से जवाब देते नहीं बना। उसके सामने अंधेरे की दीवारें आ खड़ी हुईं और ज्वारभाटा के उन्माद में समन्दर की उत्तालोर्मियों का कानफोड़ शोर उछालें लेने लगा वह किसी तरह इस भयानक स्वप्न से छुटकारा पाने के लिए थूक गटक कर बोला—"कल्लू, पानी पिला दे और सो जा···कुछ मत सोच। जितना सोचेगा उतना दुःख पायेगा···जो सरोसब्ज दिखलाते हैं, उनसे मिलने वाली पीड़ा को तू नहीं जानता मैंने उसे महसूसा है। वह लाला से ज्यादा भयावह प्रहार करने वाली होती हैं। आदर्श देखने में सुन्दर लगते हैं और वे लुभाते भी हैं, बिलकुल फूलों की तरह। परन्तु फूलों से पेट की ज्वाला शान्त नहीं होती।"

मे आग जल रही है। वह उसी आग को बुझाने मे रात-दिन एक किये डाल रहे हैं···है न।"—कल्लू प्रश्न फेंकता। अधेरा कसमसा उठता।

हालाकि यह प्रश्न भी उसका नही था। यह प्रश्न उन लोगो का था जो लाला की दूकान पर घण्टे बैठे ऐसे प्रश्नो को उछालते रहते थे। उसकी स्मरण शक्ति तेज थी। उसे उसके कथनोपकथन ज्यो के त्यो याद हो जाया करते थे। वह जब तक उनके कथोपकथनो को उछालता और फुटबाल खेलने का आनन्द मन ही मन लेता रहता।

"तू ठीक कहता है, रे··।" "प्रोफेसर नर्वदा शंकर का चेहरा बुझने लगता। मन बैठने लगता। तब जीने का उद्देश्य था। सारे देश का एक उद्देश्य था—आजादी पाना। तब सब एक थे। तब सबमे एक ही तमन्ना थी कि वे शहीद हो जायें। तब न भाषा सिर उठाती थी और न पानी विवाद···न कुछ और ही। तब सब एक थे—तन से, मन से, धन से, सारे देश मे यज्ञ हो रहा था। देश यज्ञशाला बना हुआ था। क्या लाला, क्या मालूखा तब सब बलिदान हो जाना चाहते थे, परन्तु आज···राम-राम, क्या आजादी पाने का यह उद्देश्य था ? वह का र गया।

"प्रोफेसर साहब, कुछ और लाऊ।" कल्लू पूछता।

"नही, रे।" प्रोफेसर पुरानी दुनिया से लौट आते।

आज दूकान पर लाला नही था। ग्राहक भी कम थे। रविवार जो था।

वह बोला, प्रोफेसर साहिब, एक चाय और लाता हू।"

वह कुछ कहता, उससे पहले ही वह चला गया।

कल्लू जानता था कि चाय प्रोफेसर की कमजोरी है। उसके लिए उनका नाह-नूह ऊपर से ही होता है।

कल्लू ने मन से चाय बनायी। खूब दूध डाला। अदरक और दालचीनी भी, दालचीनी का प्रयोग लाला केवल अपनी चाय के लिए करता था या उस मजदूर नेता की चाय के लिए। आज उसने उसका प्रयोग प्रोफेसर की चाय के लिए किया और थोडी-सी चाय खुद ले ली। कब से उसकी यह इच्छा थी कि दालचीनी वाली चाय पीये, पर कैसे ? आज मौका था तो वह नहीं चूका। वह सोच गया कि जरा सी दालचीनी लेने मे चोरी कैसी ? लाला आयेगा तो उससे वह कह देगा। वह भी क्या करेगा उसका ? जरा बड़बड़ायेगा। वह तो उसकी आदत है। वह बिना बात भी बड़बड़ा उठता है। उसके बड़बड़ाने का क्या कोई अर्थ है ? व्यर्थ मे अपने को परेशान करता है और देर तक रह-रह कर कापता रहता है। तब वह बिना पूछे उसे चाय बनाकर देता। उससे उसे राहत मिलती है और वह अपनी गलती महसूसता हुआ सोच के भंवर मे पड़ने लगता।

"आज तो तूने गजब की चाय बनायी है, रे···प्रोफेसर ने पहला घूट भरकर कहा। और चाय की ओर देखा। मानो वह चाय नहीं, कल्लू हो।

"पसंद आई न, प्रोफेसर साहब।"

"एकदम पसंद आई, कल्लू ''। प्रोफेसर ने खुश होकर कहा—ऐसी चाय तो बरसों बाद मिली है।" उसने कुछ याद करने की कोशिश की।

कल्लू का मन छलछला आया। मानो उसने अपने जीने का उद्देश्य पा लिया हो। वह खुशी से आर्द्र हो उठा। उसको बहुत बड़ी सफलता मिल गई।

इसी समय लाला लौट आया। लाला का माथा ठनका। चाय का रंग-रूप देखकर वह चीखा "कल्लू ऽऽ''।"

कल्लू की चाय अभी तक कप में रखी हुई थी और वह पेटी खुली पड़ी थी, जिसमें लाला दालचीनी, इलायची आदि रखता था।

कल्लू अन्दर ही अन्दर काँप गया।

लाला ने ताबड़तोड़ उसे मारना शुरू किया। लात, घूँसे, तमाचे उस पर पड़ रहे थे, लाला बेतहाशा बके जा रहा था—चोर की औलाद, तेरी ये हिम्मत ' मालूम था इतना बड़ा हो गया परन्तु उसने कभी चोरी नहीं की''' क्या मजाल है कि बिना माँगे उसने रोटी का टुकड़ा भी कभी मुँह में डाला हो। उसे भूखा रहना मंजूर था परन्तु ' और तूने कुत्ते की औलाद''' तूने उसके घर ही डाका डालना शुरू कर दिया जिसने तुझे पेट की आग शान्त करने के लिए रोटी दी, सिर छिपाने को दुकान में रहने की सुविधा दी और पहनने को कपड़े लत्ते दिये'' नमकहराम नेकी का यह बदला हमारे आज मैं तेरा खून पी जाऊँगा।"

लाला उसको मारता ही गया रुका नहीं, मारता ही गया।

प्रोफेसर [illegible] से चाय नहीं पी गई। वह अपराधी की तरह सिर नीचे किये चुपचाप दुकान से खिसक लिए। उन्हें अपने पर बड़ा गुस्सा आ रहा था। [illegible]

[illegible]

बावेला ही मचाना था या उनके लिये भी कुछ करना था, जिनके हाथ हैं, परन्तु बिके हुए हैं, जिनके पांव हैं, परन्तु परवश, जिनके आख-नाक-कान हैं, परन्तु मातहत हैं, विवश हैं, वह घबरा गया। उसका सिर चकराने लगा। उसकी आंख के सामने तेजी से धरती और आकाश घूम गये।

"आज तो तूने गजब की चाय बनायी है रे, "वह अपने ही स्वर पर कांप गया। उसके सामने कल्लू था। उसे लगा कि अभी देश आजाद नहीं हुआ है। आजादी अभी बहुत दूर है'''मीलों दूर है'' अभी तो कल्लू काल कोठरी में बंद है। वह लात घूसे खा रहा है। अभी तक जनरल डायर जिंदा है। उसने मरकर अनेक लालाओं में पुनर्जन्म लिया है। जनरल डायर की तेज आवाज उसके कानों में गूंज गई—फायर'''और जलियानवाला बाग में निहत्थों की सभा पर गोलियों की बौछार होने लगी'''कोटपूतली ''बागपत'''आदि नाना दृश्य उसको कचोटने लगे।

—देखकर चलो, भाई—एक मोटर साईकिल वाला यह कहता हुआ पास से गुजर गया—आत्महत्या के इरादे से निकले हो तो और बहुत से रास्ते हैं। किसी भले आदमी को बख्शो। वह कुछ नहीं बोला। चुपचाप एक तरफ होकर चलने लगा। अब वह पहले से सावधान होकर चल रहा था।

11

रात गहरी थी। काली नागिन-सी स्याह।

मालूमा पूछ रहा था—तूने चोरी क्यों की, कल्लू?

कल्लू क्या जवाब दे! क्या वास्तव में उसने चोरी की थी? उसने लाला की पेटी क्यों खोली? क्यों उसने उनके लिए स्पेशल चाय बनायी? किसने कहा था उससे?

उसमें अंधेरा सकपकाया! वह घबरा उठा। दरअसल वह प्रोफेसर नर्बदा शंकर को, जो चाय के शौकीन थे और जो उस पर बहुत मेहरबान थे, अच्छी चाय पिलाकर खुश करना चाहता था। उसे नहीं पता था कि उसकी मामूली-सी इच्छा उसको जहन्नुम के दरवाजे पर ढकेल जायेगी। वह चोर कहलायेगा। उसे अपनी मां का स्मरण हो आया। वह व्यथित हो उठा। उसने कभी चोरी नहीं की थी। वह कांप उठा। आखिर सेठ अपने आपको क्या समझता है? उसकी भी तो इज्जत है। उसके मन में आया कि ऐसे यह अंधेरा कभी नहीं हटेगा। उसे दूकान में आग लगानी होगी। तब ''तब दूर तक प्रकाश होगा। बिजली कौंधेगी। सवाल उठेंगे। आज एक सभा नहीं सारी सभाएं अंधी, बहरी और गूंगी हैं। आज एक भगतसिंह से काम नहीं चलेगा। आज अनेक धमाकों की जरूरत है। जगह-

जगह धमाकों की जरूरत है। ये शब्द उसके नहीं थे, उस बाबू के थे, जिसको
महीने बाद नौकरी से निकाल दिया था। वह भी चाय की दूकान पर
बैठता था और दो-चार को घेरकर आजादी, आग और धमाके की बात कर
था।

लाला उससे भी डरता था कहता था "वह खतरनाक आदमी है।"

"बोलता नहीं है, कल्लू, कि तूने चोरी क्यों की ?"

कल्लू बोलता तो क्या बोलता ? उससे कोई बोल फूट भी नहीं रहा था। वह
छाया बन फुसफुसाया "आगे से ऐसी गलती नहीं होगी।"

मालूखाँ जोर से अट्टहास लगा उठा।

कल्लू को लगा कि किसी ने लाला की दूकान में आग लगा दी है और
सकी गगन-स्पर्शी लपटें आस पास के अंधेरे का दिल चीरकर आदिम नृत्य कर
ी हैं।

"क्यों हंसता है, मालूखा ?"

"तेरी मूरखता पर, रे ?"

"मैंने क्या मूरखता की है, रे ?"

"तूने अभी कहा न कि तू आगे से चोरी नहीं करेगा।"

"चोरी करना बुरी बात है न।"

"यह समझ क्या तुझे लाला से ताबड़तोड़ पिटकर आई है, कल्लू ?" मालू
चबाते हुए कहा। आज उसकी बारी थी। रोज-रोज वह अपनी
लाकर उसको हतप्रभ कर देता था।

...यद।" वह असहाय-सा बोला।

...ो, क्या तुझे इसमें कुछ शुबहा है, रे ?"

...।" कल्लू ने रेगिस्तान उछाल दिया, वह मजबूर था। उसके सोच की
...ही अन्त होता था। वह अपनी विवशता पर कसमसा रहा था।
...ो यथास्थिति में बनाये रखने वाला कौन है ? उसके मनःआकाश
... स्वर गूंज रहे थे, "जब तक तुम जैसे शतुरमुर्ग बनने में अपने हित
...री रखोगे तब तक यथास्थिति बनी रहेगी। इसको बनाये रखने के
... जिम्मेदार हो।" यह बात प्रोफेसर उससे सलाह लेने आये मजदूरो
... वह कुछ रुककर बोला, अपनो से भी आजादी लेनी होगी। उनके
...गे। तब निखरेगी यथास्थिति की नियति।"
...ी करना बुरा नहीं है।" मालूखा ने तीसरा नेत्र खोलने की
... कहा।
...ना बुरा है।"—कल्लू ने अपने स्वर पर धार धरते—

"नहीं, रे पकड़े जाना भी बुरा नहीं है।"

कल्लू चौंका। बोला "तब ?—बुरा क्या है?"

मालूखां फिर अट्टहास लगा उठा। उसकी आवाज से अंधेरा कुलबुलाया। वह खखारकर बोला "हौंसला छोड़ना बुरा है।"

"क्या!" कल्लू ने असमझे कहा।

"हां रे, हौंसला छोड़ना बुरा है। चोरी मैं भी करता हूं।"

"क्या कहा, चोरी तू भी करता है।" हैरानी में कल्लू ने उसकी ओर देखा।

"धीरे बोल, कल्लू, दीवारों के भी कान होते हैं।"

"तुझे तो लाला···।"

"ईमानदार बना रहा था। यही न।"

"हां।" कल्लू ने आश्चर्य उसकी ओर टकटकी लगाते हुए कहा।

"वह ठीक ही कह रहा था, मेरे दोस्त।"

"तू ईमानदार है।"

"हां कल्लू, मैं ईमानदार हूं।" मालूखां ने पहेली बुनते हुए कहा।

कल्लू फिर चौंका। उसकी कुछ समझ में नहीं आया कि मालूखां क्या कह रहा है?

[illegible] होना होता है। ईमानदारी तो हर
[illegible] ने समझाने की मुद्रा में कहा।
[illegible] मालूखां।"
[illegible] अभी तक तो तू नया-नया ही है। समझ
[illegible] अनुभव तीसरा नेत्र [illegible] और उसकी
[illegible] ा। वह तुझे
[illegible] , रे।"
[illegible] चाही परन्तु उसे
[illegible] देकर उस अनन्त
[illegible] सन्नाटा था।
[illegible] उसने पहचानना चाहा
[illegible]
[illegible] मालूखां

लगता है। पता नहीं तब उसके अन्दर क्या कुलबुलाता है कि वह धीरे-धीरे कठोर और भयानक होने लगता है। उसकी आंखों में अदृश्य राक्षस की परछाईं ठहर जाती है। और वह अपने रक्तहीन होंठों को चबाने लगता है।

वह समझने की कोशिश में उलझता जा रहा था। वह यह भी नहीं समझ पा रहा था कि उसे क्या समझना है, सिवाय इसके कि उसके सामने एक नया मालूखा था। वह कुछ नहीं बोला। उसकी देह थरथरा रही थी। वह किसने कहे? कौन है उसका? जंगल की सांय-सांय उसमें अनुगूंज रही थी। किसी बियाबान रेगिस्तान की तेज लाल आंधी-सी।

मालूखां ने भी चुप्पी नहीं तोड़ी। उसने करवट बदल ली। बीड़ी का ठूंठ मसल कर एक तरफ फेंक दिया। वह कसमसा उठा।

अब उन दोनों के बीच में फिर से अन्धेरा पसर कर दुश्मन की फौज की तरह फैल गया, दोनों चुप हो गये। कल्लू भी इस बात को कुरेदने की इच्छा नहीं रखता था। बहुत कुछ उसे अनुभव हो चला था। बुराई को कुरेदने का अर्थ है दबी हुई कीचड़ और दुर्गंध को फैलाना।

जब भी उसे एकान्त मिलता तभी उसके सामने प्रोफेसर नर्बदाशंकर आ खड़ा होता। मानो वह कह रहा होता कि उसने क्या निर्णय किया है। क्या वह यथास्थिति में बना रहना चाहता है? क्या उसे अपने आपसे नफरत नहीं होती है? या वह अपने को यों ही बनाये रखना चाहता है? उसको प्रोफेसर की एक एक बात याद आने लगती। प्रोफेसर उसे समझा रहा था परन्तु उसे लग रहा था कि वह उसकी बातों को कभी नहीं समझ सकेगा।

"आदमी को कुछ पाने के लिए बहुत कुछ छोड़ना पड़ता है।" प्रोफेसर ने उससे हार नहीं मानी। वह बराबर उसे अलग ढंग से समझाता रहा।

"मेरे पास छोड़ने को है क्या?" कल्लू ने उत्तर की सटीकता पर फख्र का अनुभव करते हुए कहा।

"तू यह पूछ कि क्या नहीं है?" उसने एक नया प्रश्न उछाला।

"क्या है!" कल्लू चौंक पड़ा।

"क्या होना चाहिए?" प्रोफेसर नर्बदा शंकर ने कल्लू को घेरते हुए पूछा।

"क्या होना चाहिए, आप बताएं? मैं क्या जानूं?"

"तू क्यों नहीं?" प्रोफेसर ने उसमें जिज्ञासा पैदा की।

"मैं···मैं···मैं···कैसे···?" कल्लू हकलाया। वह हर बार ऐसे ही मोड़ पर आ खड़ा होता था जिससे आगे का रास्ता उसे मालूम नहीं होता।

"आखिर तेरे में क्या कमी है?" प्रोफेसर प्रतिप्रश्न करता।

"क्या है मेरे पास?" कल्लू दोहराता।

"वह तो सबके पास है।" कल्लू इसे उदासीन भाव से स्वीकारता।

"सब की छोड़, रे, तू अपनी कह कि तेरे पास यह सब है कि नहीं।"

वह कहता "है।"

"परन्तु तू उनसे काम नहीं लेता है, कल्लू।"

"सारे दिन तो काम करता हूं।"

"काम करता है, परन्तु तू काम लेता तो नहीं।"

"मैं तो नौकर हूं।···लाला का चौबीस घण्टे का नौकर।" वह खीझ उठता।

"नौकर एक समय तक है।"

"बाद में जाऊंगा कहां? रहूंगा कहां?···क्या करूंगा? ···मेरे कोई अन्य ठौर ठिकाना नहीं है।" कल्लू तड़प के साथ कहता।

"यही तो तुझे निर्णय करना है।"

"कैसे?"

"अपने को समझ कर।"

"कैसे?"

"पढ़ना शुरू कर और पढ़े को अपने से प्रकट होने दे। तू देखेगा कि तेरे में एक शक्ति जन्म ले रही है।"

"परन्तु जो पढ़े-लिखे हैं, वे क्या कर पा रहे हैं, यह किसी से छिपा नहीं है।"

"उनमें से जो पढ़े हुए का मथन कर उसे अपने में प्रकट कर रहे हैं, वे वास्तव में शिक्षित हैं।" प्रोफेसर ने समझाया।

कल्लू की ठीक से कुछ समझ में नहीं आया। वह जानता तो है कि क्या कुछ है। इसके अलावा वह और क्या जानेगा। वह पूछता है, "क्या जानूंगा?"

प्रोफेसर आज पुनः उस पूर्व कही बात को समझाने लगा, "कि तू कौन है? यह सारी दुनिया क्या है? कैसे चल रही है? तू नौकर और असहाय है तो क्यों?···तेरे श्रम का नफा कौन ले रहा है? वह तुझे क्यों नहीं मिल रहा है?··· वे बच्चे स्कूल में क्यों जा रहे हैं? तू क्यों नहीं जा पाया?" प्रोफेसर ने अनेकानेक प्रश्न उछाल दिये। सारे प्रश्न उसमें फूटते चले गये। उसमें एक साथ अनेक विस्फोट होने लगे। वह पूछ रहा था, "क्या पढ़ने से यह सब समझ में आयेगा?"

"ये तो आयेगा ही और इसके साथ बहुत-सी बातें समझ में आयेंगी।"

"सच कह रहे हैं?" कल्लू अचम्भे से पूछता। उसके सामने शरद ऋतु की सदा बहार नदी मुखर हो जाती।

"क्या, क्या तुझे मेरे पर यकीन नहीं है।"

"डरता हूं।" कल्लू सहम कर मन को उल्टा कर देता।

"किससे ?"

"किससे !···यह नहीं जानता।" वह अनिल-सा चकित देखता हुआ
जाता।

"तू डरता है, यह तो जानता है।"

"कैसे ?" वह घबरा कर पूछता।

"क्योंकि मुझे यकीन तो है कि तू डरता है।" प्रोफेसर का और निगाहें
बैठता है। और कल्लू उसके बार-बार पूछने पर सोच में पड़ गया कि वह
जानता है।

"तुझे कौन डराता है ?"—प्रोफेसर का अगला प्रश्न था।

कौन डराता है उसे ? कल्लू क्या उत्तर दे ? मालिक डराता है। मालिक
तो और कौन है जिससे वह डरता है। और तो कोई नहीं है। फिर वह कि
डरता है ? वह घर कर बोला, "यह सब मैं नहीं जानता, परन्तु डरता हूं, इ
जानता हूं।"

प्रोफेसर नर्बदा शंकर ने ऐनक ठीक करते हुए कहा, "तू नहीं जानता, कि
भी डरता है।"

कल्लू पशोपेश में पड़ गया। क्या वास्तव में वह डरता है ? डरता है
क्यो ? कारण उसकी समझ में नहीं आता। लेकिन वह इस तथ्य से कतई इनक
नहीं कर सकता कि वह डरता है। जीवन भर वह डरता ही रहा है। हालां
उसके डर का कोई आधार नहीं है और अगर है, तो वह जानता नहीं है।
भी वह पहली मर्तबा सोच रहा है कि वह डरता है। परन्तु डर का कारण न
जानता, उसे यह सोच कर अचरज होता है कि वह अपने ही बारे में नहीं जानता
वह बुदबुदाया, "हां।"

"पढ़ाई इस अदृश्य शत्रु से मुक्ति दिला सकती है, कल्लू।" प्रोफेसर का स्व
उसके शून्याकाश में रह-रह कर अनुगूंज उठा।

"कैसे ?" उसकी आंखों में जिज्ञासा का तिलिस्म फैल जाता।

"तू पढ़कर उसे समझ और समझ कर गुन ले।"

"गुन लूं !—पर क्या गुन लूं और कैसे गुन लूं ?"

"हां, पढ़े हुए को अपने जीवन में उतार ने तो तू निडर हो जायेगा। ड
मृत्यु है, जो जीते ही मनुष्य को अन्दर ही अन्दर खोखला कर देती है।"—उसने
समझाया और सामने की ओर देखने लगा, जहां से भित्ति में जड़ी खिड़की आम
छोले देखे जा रही थी। उसने उसे कुरेदा और एक बार पुनः उससे उसकी इच्छा
जानने के लिए कहा, "तू पढ़ना चाहता है।"

वह सोचता रह गया, चाहता तो है पर कैसे ! कभी उसकी मां ने उसको
पढ़ाने की कोशिश की थी, यह सोच कर उसकी आंखें नम हो गईं।

२

"तू हमेशा मालूखा ही बना रहना चाहता है क्या ?" प्रोफेसर ने उसे चुप देखकर कहा और उसकी तरफ से निगाह घुमा ली। बाहर इस समय कोई लैण्डस्केप नहीं था।

"क्या मतलब ?" कल्लू ने समझने की चेष्टा की।

"मालूखा बचपन से लेकर अधेड़ उमर तक मालूखा का मालूखा ही बना रहा। आगे नहीं बढ़ा···उसने स्वयं अपने पैरों में बेड़िया डाल ली, पगला शुतुरमुर्ग बन गया।" प्रोफेसर ने प्रत्यक्ष उदाहरण उठाया और उसका विश्लेषण किया।

"शुतुरमुर्ग !" कल्लू ने पूछा, "वह क्या होता है ?"

"जो शिकारी को देखकर जमीन में चोंच गड़ा लेता है और सोचता है कि शिकारी उसे नहीं देख रहा है।" प्रोफेसर ने कहा।

"सोचूगा ?" कल्लू अपने में शुतुरमुर्ग की कल्पना बुनकर उसमें अपने को मिलाने लगा।

"क्या सोचेगा ?" प्रोफेसर नर्वदाशकर का स्वर कुछ तीखा हो गया। वह कह रहे थे, "सोचते-सोचते जिन्दगी निकल जायेगी मुट्ठी में बंद बालू की तरह उसे जितनी दबाओगे, वह उतनी ही मुट्ठी से खिसकती जायेगी। ··अब सोचने का समय निकल चुका है, अब तो निर्णय लेने का समय है।·· निर्णय करो कि क्या करना है।"

कल्लू सहम गया था। निर्णय उसके लिए बहुत भारीभरकम शब्द था। प्रोफेसर चाहता था कि वह मजदूर बालकों की अन्तश्चेतना में आग पैदा करे ताकि नये मालूखा पैदा न हों और एक भ्रान्त घटना का घटाटोप हटे। इस संदर्भ में उसे मिली सफलता से वह सन्तुष्ट था। परन्तु कल्लू उसकी पकड़ में नहीं आ रहा था। अन्ततः उसने हार कर कहा, "तेरी मरजी, कल्लू ··तेरा मन मान जाये तो मेरे पास आ जाना, मैं तुझे पढ़ा-लिखा कर खड़ा करूंगा ··आदमी बनाऊंगा··· मुकम्मल आदमी।"

कल्लू तिलिस्म-सा देखता रह गया। प्रोफेसर की बातें धीरे-धीरे उसे अन्दर ही अन्दर छीलने लगीं। वह उद्विग्न हो उठा। उसे लगा कि आज प्रोफेसर वहां से नाराज होकर गया है। वह चलते समय कुछ नहीं बोला वह चुपचाप उठा और बिना उससे कुछ कहे चल दिया। उसने ध्यान से देखा कि उसकी आंखों में सन्नाटा गुमसुम पथरा गया था।

कल्लू चाहता था कि वह सेठ के तोते की नाईं लाला के पिंजरे को तोड़कर उड़ जाये। उड़ता ही जाये। उसमें जीवनाकांक्षाओं के स्वप्न [illegible] भ्रम में उड़ते अकेले पक्षी की तरह विलुलित हो उठे थे। वह यथास्थिति की स्थायी अहिल्या को अपने में पुनर्जीवित करना चाहता था। नये स्वप्न-कल्पनाओं के इन्द्रधनुषों को अपने में सद्यः प्रफुल्ल शतदल की तरह वह खिलाना चाहता था। लेकिन शंकाओं के

[illegible]

[illegible]

तरह।

12

समय पानी के बहाव सा बहता रहा। पता ही नहीं चला कि कैसे इतना समय व्यतीत हो गया! उसकी पढ़ाई का मतलब [illegible] कल्लू को महसूस होता था। उसमें [illegible] होकर वह। काफी हद तक किसी अच्छी [illegible] दूर कर पुनः स्थापित हो उठती थी। कभी उसके दिमाग का विकास चुप और उसकी अन्तर्दृष्टि बीच [illegible] भर उठती थी। उसे यह अनुभव हो रहा था कि वह स्वयं भी टेढ़ी मेढ़ी लकीरों का मालिक बनता जा रहा है। वह फिर भटक कर उठ खड़ा होता और धीरे आसमान पर घटते हुए रंगों को उसकी मुस्कान देखता रहता, निस्तब्ध और निरुद्विग्न होकर।

प्रोफेसर महेश मल्लू की बातें सुनता रहता। कभी कभी उनमें इसमें चिनगारी भड़क उठती। उसे अपने में कोंपता सिकुड़ता-पड़कता अनुभव होता। वह उद्विग्न हो उठता। उसको लगता कि उसके दिलोदिमाग पर हथौड़े पड़ने लगे हैं। फिर भी, वह जड़ होता जा रहा है किसी ठूंठ की तरह।

वह बारम्बार घुमा फिरा कर मालूआ से प्रश्न करता। वही एक जैसे प्रश्न, जिनका मालूआ कई बार एक ही तरह से उत्तर दे चुका था।

"मालूआ तूने तरक्की क्यों नहीं की?…दुनिया कहां से कहां पहुंच गई परन्तु तू एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सका। एकदम कोल्हू के बैल की तरह एक ही जगह चक्कर काट रहा है।…आखिर क्यों?" इस पर मालूआ का सीधा व कड़कती बिजली-सा वही पुराना उत्तर होता, "मेरे भाग्य में यही लिखा था!… समझा।"

"कैसा भाग्य?" कल्लू पूछता।

"भाग्य कैसा होता है।…तू भी उस भाग्य की अदृश्य लिखावट का फल है

"'तू अपने को पहचानेगा तो तुझे भाग्य का रहस्य समझ मे आ जायेगा।" मालूखा का स्वर विगलित हो उठता। उसमे एक साथ अनेक विद्रूप विद्रोह कर उठते। उसे नीला आसमान लाल नजर आता।

"कौन लिखता है भाग्य ?"

"तू और कौन ?···चुप कर मेरे बाप !···जो भोग रहा है, उसे सब्र से भोग और दुनिया को देख कर अनदेखा करता जा, क्योंकि उससे तेरे मे दुःख उपजेगा और तू भाग्य पर से आस्था खो बैठेगा।···नास्तिक हो जायेगा।" मालूखा ने तिलमिला कर कहा।

"ये नास्तिक क्या होता है ?"

"तू जिसे ईश्वर कहता है, मैं जिसे अल्लाह और क्रिश्चियन जिसे गॉड कहता है !···उसे न मानने वाला नास्तिक होता है।"

"पर वह है कहा ?"

"तेरे मे है, मेरे मे है, जीव मे है, निर्जीव मे है,—सब मे है।"

"और लाला मे ?"

"उसमे भी है।"

"फिर मैं लाला क्यों नहीं ! तू सेठ क्यो नही !···मेरी उम्र के लडके पढते हैं,···फिर मैं इस घटिया नौकरी पर क्यो ?···वह है तो क्या उसे दीखता नहीं है या उसके यहा भी हमारी तरह की रिश्वत चलती है।" कल्लू का स्वर पैना होने लगा। उसे भाग्य व ईश्वर पर गुस्सा आने लगता। वह तेज स्वर मे आगे कहता "यह सब झूठ है, मालूखा, मनगढ़न्त है।"

"नहीं, ये झूठ नहीं है और मनगढ़न्त भी नहीं। यही सच है। तो बताओ कि तुझसे किसने कहा कि वह है ?"

"सब कहते हैं !"

"सबके कहने से क्या होता है ? सब मिल कर सूरज को चाद कहे तो क्या तू मान जायेगा।"

"पहले तो वे ऐसा कहेंगे ही नहीं।" मालूखा ने जवाब दिया।

"क्यों नही कहेंगे ? और मान लो, कह दिया तो···।"

"तो मैं नहीं मानूगा।" उसने एक सास में कह डाला।

"फिर तू अल्लाह को क्यो मानता है ? ईश्वर और गॉड को बीच मे क्यो लाता है ··भाग्य-वाग्य को क्यो खडा करता है ?···वह सब नहीं है, न भाग्य है, न ईश्वर है, जो कुछ है, तू है ··सिर्फ तू··।" उसका तर्क गूज उठा खाली आकाश में।

"सिर्फ मैं !" मालूखा ने हैरानी से कहा और सशय से उसकी ओर देखा।

दोनो के बीच मे थोड़ी देर के लिए अर्द्धविराम छा गया। सन्नाटा दोनो को

पीछे ठिठका रहा। दोनों गुमसुम बने अपने में कुछ तोलते व नापते रहे।

"काश, तूने प्रयत्न किया होता, मालूखा !"

"कैसा प्रयत्न ?" मालूखा ने लापरवाही से उत्तर दिया।

"मालूखा की गहरी छाप तोड़ने का और मालूखा से अलग हट कर नई छाप छोड़ने का ...।" वह फुसफुसाया।

"तो क्या होता ?" मालूखा ने तेजी से कहा और उपेक्षा से मुंह फेर लिया।

"तो मालूखा की परम्परा भाग्य के अंधेरे से निकलने का प्रयास कर सम्मान से जीने में सफल होती।" उसके स्वर में दृढ़ता थी।

"तू तोड़ दे परम्परित छाप को ! मिटा दे भाग्य की रेखाओं को। बात बनाने में काम नहीं चलेगा, उसके लिये हमारे नेता काफी हैं. तू तो कुछ करके दिखा सके तो दिखा ? ...मैं भी मान जाऊंगा।" यहां आकर कल्लू सकपका गया क्योंकि उसने जो कुछ कहा था, वह तो उसके शहरों की देन थी उसमें उसका अपना कुछ नहीं था। वह वास्तव में उस सबका ठीक से अर्थ भी नहीं समझता था। कहने भर के लिये कह दिया था उसने। उसके मानस की कोरी स्लेट पर नामालूम ऐसे कितने अनबूझे सम्वाद लिखे पड़े थे। वह ठीक से उन्हें सही जगह पर पेश भी नहीं कर पाता था। उन सम्वादों के कौशल के बाद भी उसमें तिक्त रिक्तता सदैव बनी रहती थी। उसकी आखों के सामने हिमानी अंधड़ आंधी अपने पावों में तूफानी नूपुर बांधे बराबर ताण्डव किया करती थी।

वह थक जाता था अपने आपसे लड़ता-लड़ता उसमें एक नया कल्लू जन्मता था, मां-बाप के साथ बीच में खड़ा कल्लू !...उसे लगता कि वह धीरे-धीरे कालीचरन बन जायेगा।

इस पर भी वह वहीं मालूखा बन जाता था जिससे वह इस समय वाद-विवाद कर रहा था।

मालूखा पर लाला बरसता। उसे पीटता। मालूखा की देह पर अनगिनत बबूल के वृक्ष खड़े हो जाते। जगल की सांय-सांय बिखर जाती।

एक बरस !...

दो बरस।

तीन बरस, चार बरस, पांच बरस। बरस दर बरस। पूरे पैंतालीस बरस, बरसों की एक लम्बी शृंखला, उत्तर से दक्षिण तक, पूर्व से पश्चिम तक कतार बन खड़ी हो जाती। नगर के नगर बदल जाते। गांव कस्बों में, कस्बे शहरों में और शहर महानगरों में बदल जाते। परन्तु मालूखा नहीं बदलता। वह वैसा ही बना रहता, जैसा वह शुरू में था।

खुले आकाश के नीचे दूकान लेकर बैठने वाला लाला एक इज्जतदार, बाल-बच्चों वाला इन्सान बन गया। परन्तु मालूखा जहां का तहां बना रहा। उसमें

कुछ परिवर्तन नहीं आया।

क्यों नहीं आया? कल्लू के सामने प्रोफेसर खड़ा हो जाता। उसे लगता कि मालूखां नहीं, उसके सामने ठूठ पड़ा है। -

"इसमें किसका दोष है?...मालूखा का, लाला का, समाज का, सरकार का, तकदीर का...? आखिर किसका दोष है? किसी न किसी का तो दोष होगा? ...किसका होगा?" रह-रह कर अनेक बार यह प्रश्न उसके मन में उठता और किनारे से टकराने वाली लहरों-सा बिखर जाता।

फिर कल्लू में जंगली जानवर रोने लगते और घना बयाबान अनचाही घास सा कान उमेठने लगता।

मालूखां पर लाला कोड़े बरसाता परन्तु वह जरा भी चू नहीं करता।

बस मालूखा की आदिम नंगी देह सटाक के साथ कांप जाती। दूर-दूर तक सिहरन दौड़ जाती। जंगल के कान खड़े हो जाते। इसमें लगता, ईसा अभी तक क्रूस पर टंगा हुआ है, मरा नहीं है,—वह न कभी मरेगा, वह बराबर युगान्त तक टंगा ही रहेगा।

कौन उतारेगा क्रूस पर से ममीहा को? क्या वह यों ही लहूलुहान होता रहेगा? और उस पर चील, गिद्ध, कौए मुंह मारते रहेंगे? कौन रोकेगा उन्हें? ...कोई नहीं...कोई भी नहीं। सबकी आंखों पर चर्च का मोटा चश्मा चढ़ा होगा। किसी को न कुछ दिखाई देगा और न कुछ सुनाई देगा। चर्च की घंटियों में ईसा की आवाज सुनाई नहीं पड़ेगी। मस्जिद की अजान में अल्लाह का मद्धिम स्वर कुचल कर रह जायेगा और मंदिर के घण्टे-घड़ियालों में ईश्वर को कील दिया जायेगा।

कल्लू सन्नाटे में आ गया। उसका चेहरा तमतमा उठा। उसकी कोई मदद नहीं करेगा।

दरिंदा अपने खूंखार पंजों और हिंसक जबड़ों की मदद से सबको निगल जायेगा। कोई नहीं बचेगा। कोई भी नहीं ' जो बचेगा वह दरिंदा होगा, एक नम्बर का पाजी, राक्षस और हैवान।

हवा बल खाकर ऐंठने लगी। बौखलाये समुद्र की लहरों-सी!

कल्लू चीख पड़ा—नहीं...नहीं...नहीं' 'मैं मालूखा नहीं बनूंगा। कदापि नहीं...कभी भी नहीं...मैं मालूखा नहीं बनूंगा।

मालूखा ने देखा कल्लू नींद में बड़बड़ा रहा है। उसकी सांस तेज चल रही है। उसके चेहरे पर पसीने की बूंदें उभर आई हैं।

"कल्लू रो रहा है गिड़गिड़ा रहा है—मुझे छोड़ दो...मैं तुम्हारी गाय हूं... मुझे छोड़ दो...छोड़ दो...नहीं छोड़ोगे तो लो...लो...लो। हां...हा...हा... हा...तुम युग युगों तक हाथ में पट्टा लिये खड़े टापते रह जाओगे परन्तु...परन्तु

कल्लू की गरदन में गुम पड़ा नहीं डाल सकोगे'''कल्लू, कल्लू है, वह मानुषा नहीं है'''तुम उसे मानुषा नहीं बना सकोगे। कभी नहीं बना सकोगे।" वह स्वप्न में अपने आप से कह रहा था।

मानुषा ने चाहा कि वह कल्लू को जगा दे। उसका दुःस्वप्न से पिंड छुड़ा दे लेकिन वह कुछ नहीं कर सका। वह खुद डर गया, उसे लगा कि कल्लू बराबर बड़बड़ाता जा रहा है।

कल्लू पर भूत चढ़ आया है और वह बड़बड़ा रहा है—मैं मानुषा नहीं बनूगा। कभी नहीं बनूगा। मानुषा घबरा गया। उसने टाट की रजाई मुंह तक खींच ली और वह सोने की कोशिश करने लगा।

स्वत कल्लू की नींद खुल गई। उसने उठकर पानी पिया और मानुषा को गहरी नींद में सोता हुआ पाकर इत्मीनान से अपने बिस्तर पर आ लेटा।

उसे रह-रह कर स्वप्न डरा रहा था। अब उसकी नींद उचट चुकी थी। वह चाह कर भी नहीं सो पा रहा था। उसके मनोमस्तिष्क में सद्य देखा स्वप्न घूम रहा था, चक्रवात की तरह और वह समुद्री तूफान की सी आवाज़ कर रहा था। वह कुछ समझ नहीं पा रहा था। उसे न कुछ सुनाई दे रहा था, सिवाय निरंकुश भीड़ के बेसुरे शोर के। उसे न कुछ दिखाई दे रहा था, सिवाय अधड़-आंधी की उच्छृंखलता के। उससे न कुछ बोला जा रहा था, सिवाय मुंह खोल कर स्तम्भित रह जाने के। उसे लगा कि वह घने और छोरहीन बयाबान जंगल में बेतरह से घिर चुका है। मूसलाधार वर्षा हो रही है। रह-रह कर बिजली की कड़क के साथ सारा जंगल भयानक चमक के साथ कांप रहा है और घटाटोप अंधेरा और गहरा व डरावना हो रहा है। हिंसक पशु की भयावह आवाजें गूंज रही हैं। वह अब किधर जाये? क्या करे! उसे स्वप्न दबोच उठता। वह पूछ उठता, "मां, तू बता।" वह करवट बदल कर, आंखें बंद किये घासहीन जमीन को देखता रह जाता।

मां ने उसको कुछ बनाने का बीड़ा उठाया था। उसे पापड़ बनाने का काम मिल गया था और वह कुछ दिनों में यह सोचने लगी थी कि अब वह कहीं भी एक कोठरी किराये पर ले सकती है। उसमें अचानक आशा के शुभ प्रभात की एक किरण फूटी थी। उसने कल्लू को नये कपड़े सिलवाये थे और उससे कहा था, "तुझे मैं पाठशाला भेजूंगी। तू पढ़ेगा। पढ़ कर अंधेरों के भयावह व हिंसक जंगलों को काटेगा। शुभ प्रभात लायेगा।"

"कैसा शुभ प्रभात, मां?" वह प्रश्न करता।

"जिससे हम सम्मान से रह सकें—दोनों वक्त रोटी पा सकें, पहनने के लिये कपड़े हों और रहने के लिये छप्पर।"

"मां, ऐसा होगा क्या।" कल्लू की आंखें जरूरत से ज्यादा फैल गईं।

आश्चर्य डोल उठता।

"अवश्य होगा।" मा के होठो मे दृढ़ता होती और उसके स्वर मे गहरा विश्वास।

"मैं पढ़ने जाऊंगा।...अच्छे-अच्छे कपड़े पहनूंगा। तुम मुझे बस तक छोड़ने आओगी...है न, मा!..." कल्लू ने अपना वह हाथ हवा मे झुला दिया जो कभी खेंचू के सामने खड़े स्कूल जाने वाले बालको को देख कर नहीं उठ पा रहा था और तब उसे लग रहा था जैसे किसी ने उसके हाथ पर पलास्तर बाध दिया हो लेकिन अब...! वह मन ही मन उन बालको की तरह गुनगुना उठा, "टा' 'टा' टाटा"...!...उसमे समवेत स्वर गूंज उठा।

"हां, मेरे लाल, मैं तुझे छोड़ने जाऊगी! तुझे मैं स्कूल तक छोड़ने जाऊंगी।"

"बस तक नहीं!" कल्लू का स्वर काप गया।

"बस से तो स्कूल दूर होगा और मैं तुझे दूर स्कूल तक छोड़ने जाऊगी।... तुझे मेरा दूर तक साथ चलना पसन्द नहीं है क्या?" मां ने कल्पना के पखो के साथ उड़ते हुए कल्लू को धरती पर ला खड़ा किया।

"वह बात नहीं है, मा।...सब बस मे जाते हैं...इसलिए।" कल्लू ने अपनी कल्पना को डूबने से बचाने का रास्ता निकालने की कोशिश की।

"वे कमजोर हैं, मेरे लाल।" उसने इस तथ्य को गले उतारने की गरज से कल्लू को समझाया, "तूने लाल बहादुर शास्त्री का नाम सुना है?"

"कौन लालबहादुर शास्त्री?"

"वही जो उस दिन, जहा मैं काम करती थी न।"

"ईंट ढोने का।"

"हा, वहा वह उद्घाटन करने आये थे?"

"उद्घाटन!"

"फीता काटने।"

"वह तो बहुत बड़े आदमी थे। कितनी पुलिस थी उनके आगे-पीछे। कितने लोग थे और कितनी गाड़ियां।"

"वह हमारे देश के प्रधानमंत्री थे।"

"प्रधानमंत्री!"

"देश का महान् व्यक्ति...।"

"वे कहां से आये थे, मां?"

"उन्हें हमने ही चुन कर अपना प्रधानमंत्री बनाया था।"

"हमने चुना था, मां! पर क्यो?"

"क्योंकि वे हमारी भलाई के लिए सोच-समझ कर कुछ कर सकें।"

उसने क्या किया ?

क्या नहीं किया। सब कुछ तो उन्होंने ही किया था।'

तूने ही तो कहा था मां कि भलाई करने वाले लोग किसी से डरते नहीं हैं। 'तूने भगतसिंह व बाबा गांधी की कहानियां सुनाई थीं।'''है न ?" बच्चे ने सहज प्रश्न किया।

हां सुनाई थी।

क्या उनकी भी याद है ?

नहीं तो।' 'तुमसे किसने कहा ?

किसी ने नहीं। मां, उनके साथ कितनी पुलिस थी।'''क्यों मां थी न ?"

'थी तो।"

पर क्यों मां ?'

वह इस सवाल के लिये तैयार नहीं थी। क्या थी, वह उसने कभी नहीं सोचा था और न कभी इस तरह सोचने की बात ही पैदा हुई थी।

'वे क्या डाकुओं से मिलने आए थे ?"

'क्या बकता है ? चुप कर।" मां उसे डांटती।

"क्यों मां'''वे हमारी भलाई के लिये हैं। हमने उन्हें चुन कर भेजा है। है न ?"

"हां, भेजा है।"

"तो वे उन लोगों के पास जिनकी उन्हें भलाई करनी है, पुलिस के पहरे में क्यों आये ?'''इसका अर्थ होता है कि वे डरते हैं ?'''उनसे डरते हैं जिन्होंने अपनी भलाई के लिये उन्हें चुना है।—वे क्या भलाई करेंगे ?—कभी नहीं।"

"नहीं रे, ऐसा नहीं सोचते हैं।—हम में कुछ ऐसे हैं जो इस देश को नुकसान पहुंचाना चाहते हैं।"

"क्यों ?"

"उन्हें बाहर के देश धन देकर ऐसा करने के लिये राजी कर लेते हैं।"

"इससे हमारे प्रधानमंत्री डरते हैं ?"

"उनकी सुरक्षा की जाती है। यह जरूरी भी है।"

"गलत मां।"

"क्या गलत ?"

"क्या उनका यह उदाहरण इस देश की जनता को डरपोक बनाने के लिये पर्याप्त नहीं है ? कहां भगतसिंह और कहां बाबा गांधी, जिन्होंने मौत की चिन्ता नहीं की। बाबा गांधी ने तो, तू ही बताती है मां, अपनी सुरक्षा के लिए तैनात दल का भी कड़ा विरोध किया था।—जो स्वयं की सुरक्षा के काबिल नहीं, वह दूसरों की सुरक्षा नहीं कर सकता।—उदाहरण देने से नहीं, बनने से कुछ होता है।"

कल्लू ने उस दाढ़ी वाले बाबा के कथन का उल्था कर डाला, जो उसने घूम-घूम कर वहां के लोगों मे कहा था और जिसे पुलिस पकडकर ले गई थी। उसके मन में तब प्रश्न फूटा कि उससे इस देश के प्रधानमंत्री को कैसा डर ?

"तू ऐसी-वैसी बातें कहाँ से इकट्ठी करता है ?" मा ने कहा, "मेरे लाल, ऐसा नही सोचते।"

"क्यों मा, क्या ऐसा सोचने मे कोई खराबी है ? "क्या उनके बाद" "

"चुप कर। दीवारो के भी कान होते हैं।"'''मा ने उसे झिडक दिया।

थोड़ी देर बाद वह पुन. बोली, "तुझे नही पता कि तू क्या बकझक रहा है। ऐसे-वैसे बोलेगा तो तू और मैं भी अन्दर हूंगे।" मा ने उसे चुप करने की दृष्टि से कहा। फिर वह सामने से आती हुई उस महिला की ओर देखने लगी जो अभी-अभी खूबसूरत कार से उतरी थी और जिसके सिर पर छतरी लिये एक दूसरा व्यक्ति चल रहा था।

मां की बात पर कल्लू ठहाका लगा उठा। उसने इतनी जोर का ठहाका लगाया कि वह सम्भ्रान्त महिला जो उस छाता उठाने वाले व्यक्ति के अतिरिक्त अन्य बड़े-बड़े लोगों से घिरी हुई थी, चौंक कर उधर देखने लगी। इसी के साथ उधर पुलिस नजर आने लगी।

कल्लू मुस्कराया और बोला, "जिनको हम से डर लगता है, मां, वे हमारी भलाई कभी नहीं कर सकते हैं।'''वे हमारी हंसी बर्दाश्त नही कर पा रहे हैं तो फिर वे हमारे रुदन को क्या बर्दाश्त करेंगे ? '''कदापि नहीं।" '' कल्लू के सामने वह दाढ़ी वाला बाबा उठ खड़ा हुआ था जो अलख जगाता घूम रहा था और सबको बराबर सावधान कर रहा था। वह कह रहा था कि यदि ऐसा ही अभ्यास चलता रहा तो एक दिन ऐसा आयेगा जब रिआया तीन चीजो से डर कर मरती रहेगी—एक सफेद डाकू, दूसरी पुलिस और तीसरा जंगली डाकू।

अब वे लोग दूसरी ओर जा चुके थे। उसकी मां ने टूटे सूत्रों को जोड़ते हुए कहा, "तू अभी पढने की बात कर रहा था। ''तो सुन—शास्त्री जी अपनी पीठ पर बस्ता बाध कर नदी पार करते थे और इसी तरह वे रोज स्कूल जाते व स्कूल से लौटते थे।'''पढ़ाई के लिए बस जरूरी नहीं है।"

"ऐसे वीर बालक थे शास्त्री जी मां।"

"हा, मेरे लाल।"

"तब क्यों उनके साथ पुलिस थी ?"

"पगला।" उसकी मा ने उसे अपनी गोद मे लेटा लिया और उसके सुर्ख गालों पर हाथ फेरने लगी। उसने अपनी मां की आंखों मे झाका। उसे उसकी आंखों मे सद्य खिले सुमन की सी स्वप्निल मोहकता नजर आई। एक लम्बे अर्से बाद वे एक दूसरे के होने की ऊष्मा का अनुभव कर रहे थे। उनकी आंखो मे

चमक मुस्करा रही थी, शुभ प्रभात की पहली किरण
मा की आमदनी से उसके जीवन में जीने की लग
सोचने लगी थी अपने भविष्य के बारे में। उसका स्व
गया था। उसमें फिर से कल्पना की कोपलें फूटने लग
पिछवाड़े में एक कोठरी मिल गई थी, इस शर्त पर
बुहारा किया करेंगे। वे भी खुश थे कि उन्हें बिना कुछ
अच्छी जगह मिल गई। अन्यथा तो वह सोचती थी
बगल में झोपडी मुर्गी वाले के यहा एक खोली किरा
कल्लू महसूस कर रहा था कि उसकी मां अन्य म
हुई रहने लगी है। उसके चेहरे और उसकी आखो
लगी है। वह मन ही मन अनदेखे और असमझे मा के
था। वह विनती करता रहा था कि वह उनसे उनके
पर वह कृपा बनाये रखे। उन्हे जो मिल रहा है, वे
उसके हाथ श्रद्धा से जुड़ जाते और उसकी गरदन झुक
जाती। उसमें मौन सम्वाद बह उठता और वह भूलने
चीख-चिल्लाहट को। उसमें शुभ प्रभात की कुमकुम मह
अचानक 'बिलकुल अचानक। कल्लू घबरा उठ
पता चला था। काश ! उसे पता नहीं चलता।'''अ
स्वप्न था। वह अपनी मां की तलाश में निकल गया था
का फाटक बंद था। वह जैसे-तैसे चारदीवारी फांद
कोठरी पर ताला जड़ा पाया। वह रो पड़ा। कोठी के
धक्के देकर बाहर निकाल दिया और उसकी फटी-पु
साथ फेंक दिया।
सन्नाटा तना हुआ था। रह-रह कर सड़क के
वातावरण और भी भयावह बनता जा रहा था। दूर-दू
सिर्फ कोठियों के बंद दरवाजों व खिड़कियों में हल्का-
वह नहीं सोच पा रहा था कि वह अब क्या करे? वह
किरणें उसे बेध डाल रही थी। उस दम घुटने लगी
मुट्ठियों को कसता गया। फिर वह भागने लगा। भागत
उसकी सांसो की तेजी ने उसे गरमा दिया। वह अब
उसके पांवो की नसें तन गई थी और आखें भर आई थी

रहा था जैसे मगरमच्छ के मुंह में कोई जानवर। वह जानवर उसे खरगोश नजर आया। खरगोश अपनी पिछली टांगों से बाहर निकलने का प्रयास कर रहा था। परन्तु उसे अपने प्रयास में सफलता नहीं मिल पा रही थी। उससे यह दर्दनाक दृश्य नहीं देखा गया और उसने आँखें बंद कर ली।

इसी वक्त उसका ध्यान पिल्ले की आवाज पर गया। उसने ध्यान से पिल्ले की ओर देखा। वह भट्टी के अन्दर दुबका हुआ था। वह उस भट्टी तक आया और उसने नीचे झुक कर देखा। उसे लगा कि भट्टी में कुछ भूभल है। वह उसकी गर्मी में वहाँ छिपा हुआ है। उसने अपनी दोनों हथेलियाँ जोर से रगड़ी और वह तब तक रगड़ता रहा जब तक उसकी हथेलियाँ एकदम लाल सुर्ख नहीं हो गईं। उसने अपने पाँव मसले। उनमें कुछ हरकत होने लगी। धीरे-धीरे उसने अपने पाँव भट्टी की ओर बढ़ा दिये। उसको थोड़ी सी गर्मी का एहसास हुआ। इस तरह उसने यह कोशिश की कि वह अपने शरीर के अधिकांश भाग को उस भट्टी के अन्दर ढकेल दे ताकि उसे भयानक ठण्ड से कुछ राहत मिल सके। पिल्ले ने उसके प्रति अच्छा रुख अपनाया। उसने उसका विरोध नहीं किया।

सुबह आँख खुली। वह पोटली संभाल कर उठ गया। उसे जोरों से भूख लग रही थी। उसका ध्यान जमीन पर पड़े चने के दानों पर गया। वह धूल साफ करते हुए वह उन्हें गुटकने लगा। अब सूर्य बादलों की ओट में निकलने का प्रत्यन कर रहा था। वह दाने चुग चुका था। अब उसे अपनी मां की तलाश में जाना था। वह पुनः उस कोठी के सामने आया। उसने दूर से अपनी कोठरी देखी। उसमें ताला जड़ा हुआ था। उसकी अन्दर जाने की हिम्मत नहीं हुई। रात की मार व धक्कों को वह भूला नहीं था। आदमी अचानक कैसे बदल जाता है। प्रायः बड़े लोगों को बदलने में देर नहीं लगती। कल से पहले ये लोग उनके प्रति कितना अच्छा बर्ताव करते थे। ओह ! यह सोच कर उसका सिर फटने लगा।

वह भूखा-प्यासा पटरी-पटरी चलने लगा। उसकी मां वहाँ आने से पूर्व रेल की पटरी-पटरी कोयले बीनती घूमती थी। शायद उधर उसकी मां मिल जाये। इससे पहले वह उस भवन तक हो आया था, जहां उसकी मां काम करती थी। वहाँ वह कहीं नजर नहीं आई। वह उस रेत पर जहां वह खेला करता था, काफी देर तक खड़ा रहा और अपलक दृष्टि से चहुं ओर देखता रहा। वहाँ बहुत-सी औरत-लड़कियां काम करती थी। उनमें उसकी मां नहीं थी। उसने उस मोटे आदमी से भी पूछा जो वहाँ काम करने वालों की हाजिरी लिया करता था। उसका उत्तर नकारात्मक था। रास्ते में उसको रोटी के कुछ टुकड़े नजर आये, वे सूखे थे। उसने उन्हें उठाया, गौर से देखा और अपनी मजबूत मुट्ठी में कस लिया मानो उसके हत्थे शत्रु की गरदन आ गई हो। फिर वह उन्हें चबा-चबा कर खा गया। अब उसे प्यास लगी। वह खेंचू से पानी खींच कर पीने लगा। पानी पीकर

चमक मुस्करा रही थी, शुभ प्रभात की पहली किरण सी द्युतिमान् और सौ

मां की आमदनी ने उसके जीवन में जीने की ललक पैदा कर दी थी। व सोचने लगी थी अपने भविष्य के बारे में। उसका स्कूल जाना भी लगभग गया था। उसमें फिर से कल्पना की कोपलें फूटने लगी थीं। उन्हें एक को पिछवाड़े में एक कोठरी मिल गई थी, इस शर्त पर कि वे उस कोठी की बुहारू किया करेंगे। वे भी खुश थे कि उन्हें बिना कुछ खर्च किए सिर छिपा अच्छी जगह मिल गई। अन्यथा तो वह सोचती थी कि उसे किसी गन्दे ना बगल में झोपड़ी झुग्गी वाले के यहां एक खोली किराये पर लेनी होगी।

कल्लू महसूस कर रहा था कि उसकी मां अन्य माताओं की तरह सुख हुई रहने लगी है। उसके चेहरे और उसकी आंखों में लालिमा की धूप लगी है। वह मन ही मन अनदेखे और असमझे मां के भगवान को नमन करने

[illegible]

चाहा ।

"कहा भागू ?" "मेरा कोई नही है, मेरी मा के अलावा।" हुजूर कुछ करो।" वह गिडगिडा रहा था।

"क्या करू ?"

"कुछ भी"'।"

"मुशी इस बला की कहानी सुनकर निचोड निकालना।" थानेदार उठकर चल दिया।

मुशी ने ऐनक को ठीक से नाक पर बिठाते हुए उससे पूछा, "तेरी मा का नाम।"

"नाम" नाम" नाम"'।"'हुजूर' माई-बाप' 'वह मेरी मा थी।"

"परन्तु उसका नाम क्या था ?"

"पता नही।"

"तुझे अपनी मा का नाम पता नही।" मुशी ने चश्मे की कमानी को जरा ठीक करते हुए साश्चर्य उसकी ओर देखा।

"पिता का नाम बता।" पार्श्व मे खडे पुलिस वाले ने पूछा।

वह सकपका गया। उसकी गर्दन झुक गई। वह धीरे से बोला, "मालूम नहीं।"

"ओ खैरात की औलाद"'जा लम्बा पड यहा से' नही तो मारते-मारते साले-याजी का भुरता निकाल दूगा।" मुशी गुडगुड़ाया। उसने अपनी ऐनक को ठीक किया और उसे घूरकर देखता रहा। उसने पाया कि वह लडका मुसीबत में है और अकेला है। मुशी को पुलिस मे आये लम्बा समय हो चुका था, जिसके कारण उसका तरह-तरह के लोगों से पाला पड चुका था। उसने बडे-बड़े बेहरूपियों की अक्ल ठिकाने लगा दी थी। उसे बहुत कुछ अच्छे-बुरे की पहचान हो चली थी।

एक पुलिस वाला उस लड़के का मजाक बना रहा था, "न बाप को जानता और न मा को।" "तो क्या सीधा ऊपर वाले की मेहरबानी का फल है।"

दूसरा पुलिस वाला उससे पूछता, "तेरी मा क्या करती थी ?"

"मजूरी हुजूर।"

"कैसी मजूरी ?"

"ईंट ढोने की।"

"कहा ?"

"जहा अभी-अभी उद्‌घाटन हुआ है, हुजूर।"

"जवान थी।"

वह चुप।

"रग गोरा था।"

उसने इकार की ओर चढ़ते सूरज की ओर देखा। तभी पार्श्व में रेलगाड़ी निकल गई। वह देर तक उस गाड़ी को देखता रहा। कभी वह रेलगाड़ी आने की सूचना पटरी पर कान लगा कर पता लगाया करता था। वह कहता था, "मा···मा··· रेल आने वाली है।"

"कहां ?"

"आने वाली है।"

उसकी मा चारो ओर देखती और उसे झिड़कते हुए कहती, "कहा रे?" तभी उन्हे रेल के इजन की सीटी सुनाई पड़ती और वह उसकी ओर मुस्कराते हुए देखती रह जाती। मन ही मन फुसफुसाती—"पागल···नटखट।"

उसके लिए दुनिया भूलभुलैया हो गई। उसकी आखों के सामने अंधेरा छा गया। वह कांप उठा। कहा से मा का पता करे? कौन बतायेगा? किसके पास वह जाये? क्या बताये? वह तो अपनी मां का नाम भी नही जानता। मां के अलावा किसी को नही जानता। वह और अधिक नहीं सोच सका। वह धीरे-धीरे रोने लगा। रोता ही रहा। अपने आप उसका रोना थम गया। उसका गोल-मटोल चेहरा धूल व आसुओ के मिलने से किसी पुरानी पत्थर पर उकेरी प्रतिमा-सा हो गया। वह हार कर आगे चलने लगा। एक जगह उसने भीड़ देखी। उसने भीड की ओर देखा और आगे बढ़ गया। वह फिर कुछ सोच कर मुड़ा। कही उसकी मां भीड मे तो नही है। वह कुछ देर तक उस भीड की परिक्रमा लगाता रहा। इस बीच वहा पुलिस आ गई। वह थोड़ा-सा चिन्तित हुआ। उसे याद आया कि वह पुलिस थाने मे जाये और वहां अपनी मा के बारे मे बताये और उनसे तलाश करने मे सहायता ले।

उसने ऐसा ही किया। वह वहा से सीधा थाने पहुचा। अन्दर जाने मे डर लग रहा था उसे। वहा उसने लोगो को पिटते और गिडगिडाते हुए देखा। उसे इन दोनो चीजो से घृणा हो गई थी। उसने कभी बड़े आदमी को पुलिस थाने मे पिटते व गिडगिडाते हुए नही देखा था। क्यो? वह सेठ जिसने उसे तोते के उड जाने के कारण लात-घूसो से बेदर्दी से मारा था और वह कोठी का मालिक जिसने उसे अर्द्ध रात को तावडतोड थप्पडो से मार-मारकर बेदम कर दिया था, कानून व पुलिस से ऊपर थे। उन पर कानून व पुलिस का रौब नही चलता था। थानेदार अपनी गलमूछो पर हाथ फेरता हुआ उससे पूछ रहा था, "क्यो बे क्या बात है?"

"हुजूर कल रात से मेरी मां का पता नही।"

"···हम क्या करें?"

उसने हकलाते हुए कहा, "माई-बाप, तलाश···।" वह हाथ जोड़-

[illegible]

[illegible] से, बन्दर की औलाद!" थानेदार ने झिड़की देकर भगाना

चाहा।

"कहा भागू ?" मेरा कोई नहीं है, मेरी मा के अलावा।···हुजूर कुछ करो।" वह गिड़गिड़ा रहा था।

"क्या करू ?"

"कुछ भी···।"

"मुशी इस बला की कहानी सुनकर निचोड़ निकालना।" थानेदार उठकर चल दिया।

मुशी ने ऐनक को ठीक से नाक पर बिठाते हुए उससे पूछा, "तेरी मा का नाम।"

"नाम···नाम···नाम···। ··हुजूर ··माई-बाप · वह मेरी मा थी।"

"परन्तु उसका नाम क्या था ?"

"पता नहीं।"

"तुझे अपनी मां का नाम पता नहीं।" मुशी ने चश्मे की कमानी को जरा ठीक करते हुए साश्चर्य उसकी ओर देखा।

"पिता का नाम बता।" पार्श्व में खड़े पुलिस वाले ने पूछा।

वह सकपका गया। उसकी गर्दन झुक गई। वह धीरे से बोला, "मालूम नहीं।"

"ओ खैरात की औलाद···जा लम्बा पड यहा से···नही तो मारते-मारते साले-भाजी का भुरता निकाल दूगा।" मुशी गुड़गुड़ाया। उसने अपनी ऐनक को ठीक किया और उसे घूरकर देखता रहा। उसने पाया कि वह लड़का मुसीबत मे है और अकेला है। मुशी को पुलिस में आये लम्बा समय हो चुका था, जिसके कारण उसका तरह-तरह के लोगो से पाला पड चुका था। उसने बडे-बडे बेहरूपियो की अक्ल ठिकाने लगा दी थी। उसे बहुत कुछ अच्छे-बुरे की पहचान हो चली थी।

एक पुलिस वाला उस लड़के का मजाक बना रहा था, "न बाप को जानता और न मा को।···तो क्या सीधा ऊपर वाले की मेहरबानी का फल है।"

दूसरा पुलिस वाला उससे पूछता, "तेरी मा क्या करती थी ?"

"मजूरी हुजूर।"

"कैसी मजूरी ?"

"ईंट ढोने की।"

"कहां ?"

"जहा अभी-अभी उद्घाटन हुआ है, हुजूर।"

"जवान थी।"

वह चुप।

"रग गोरा था।"

वह चुप।

"नाक-नक्श तीखे थे।" होंठ पतले पारदर्शी और आंखें बड़ी-
जैसी।"

उसने सोचा कि उस पुलिस वाले को किसी औरत का पता
हुलिया बनाकर तसदीक करना चाहता है अत वह अपने दिमाग पर
मां के रंग-रूप के बारे में सोचने लगा। परन्तु वह ठीक से कुछ त
पाया, जो कुछ उसे बताया गया, उससे वह अपनी मां का मिलान न
रहा था। वह पशोपेश में पड़ गया।

"कमर पतली।" छरहरी देह"।

"जी।"

वह पुलिस वाला उछल पड़ा और बोला, "कहां है वह ?"

मुंशी को उन लोगों की बेहूदा हरकतों पर गुस्सा आया और व
बरस पड़ा, "उसकी मां गुम हो गई है और तुम्हें मजाक सूझ रहा है।
लोगों की मदद के लिए है, उनके दुःख-तकलीफों को दूर करने के लिए"

"बूढ़ा '।" उनमें से किसी ने खिसियाकर कहा।

मुंशी ने उसे सुना-अनसुना कर दिया। वह दुःखी होकर बोला, "पुलि
मस्ती का अड्डा नहीं है।" वह तो जी जान पर खेलकर दूसरों की
वालों का दल है—समाज सेवी दल।" "तुम लोग क्या सोचकर भर्ती
आइन्दा ऐसा न हो, नहीं तो।" मुंशी के गुस्से से वहां सब डरते थे। मु
इरादों का इन्सान था। उसने उस लड़के से हुलिया पता कर उसकी म
जाने की रपट लिखी और पुलिस वालों को उसकी तलाश पर रवा
दिया।

—

उसने उसे जबर्दस्ती खाना खिलवाया। फिर उसे कल आने को कहा
वह थाने से निकलकर पटरी-पटरी दक्षिण दिशा की ओर बढ़ा ही था कि
एक लाश नजर आयी, जिस पर कौआ, चील आदि झपट रहे थे। वह
[illegible] रहा था। उसे कौआ-चील को मांस नोचते हुए देखकर भ
लगा। है कोई इन्सान जरूर। वह पुन थाने में आया और उसने मुंशी को
कि थाने से कोई एक डेढ़ फर्लांग दूर एक लाश पड़ी है जिस पर कौअ
आदि टूटे पड़ रहे हैं। मुंशी दो पुलिस वालों को लेकर वहां पहुंचा। वह
नष्ट हो चुका था। एक पुलिस वाले ने हवाई फायर किया, जिससे उस लाश पर
वाले पक्षी वहां से उड़ गये। वह [illegible] से भर उठा। वह पास नहीं आना
था। मुंशी का माथा ठनका। उसने उसे पास बुलाया और कहा, "इस
देखो।"

उसकी चीख से आस-पास का वातावरण कांप गया। वह उसकी मां थी। तसदीक हो गई।

उसने अपनी मां को आग दी। लौ आकाश को छूने लगी और वह फटी-फटी आंखों से शून्याकाश में तैर उठे पतंगों को देखने लगा। उसके लिए अब जीने और न जीने का अर्थ दोनों ही समझ से बाहर थे। उसकी मां को किसने मारा? क्यों मारा? वह कुछ नहीं जान पाया। आज तक उसकी मां को मारने वालों की टोह नहीं लग सकी।

उसने करवट बदली। उसकी आंखों में आंसू और चिनगारियां एक साथ मचल उठीं। उसके होंठ फड़फड़ाये और उसकी मुट्ठियां तन गयीं। उसे लगा कि उसके सामने उसकी मां का हत्यारा आ खड़ा हुआ है और वह उसको बेतरह से मारने लगा है। आखिर उसने उसे मारकर ही चैन लिया। उसकी लाश को अनगिनत चील-कौए नोचने लगे हैं। पुलिस उसे हथकड़ी डाले ले जा रही है और वह फख्र से गरदन ऊंची किये व सीना ताने जा रहा है।

अब दिन निकलने की तैयारी कर चुका था। वह भारी मन से उठा और उसने आंखों पर पानी के छपके दिये। अनिश्चय की मानसिकता के कपाट खोलकर उसने भट्टी में कोयले जमाये और मिट्टी का तेल डालकर उसे माचिस की तीली दिखायी। पल भर में आग की लपटें छत की ओर उठीं और उसमें अपनी मां की चिता की याद गहरा गई। उसने महसूस किया कि यह काम वह प्रोफेसर के पास जाकर ही कर सकता है। पहली मर्तबा उसे लगा कि उसके जीने का कोई मकसद है—खास मकसद। इसके साथ ही उसने दुकान का दरवाजा खोल दिया।

उपसंहार

लाला को पता चल गया कि बच्चू उसकी नौकरी छोड़कर जा रहा है। लाला काफी देर तक उसके बारे में सोचता रहा। उस जैसा ईमानदार और मेहनती नौकर दूसरा नहीं मिलेगा। उसने ठान ली थी। उसे इतना कठोर व हृदयहीन नहीं होना चाहिए कि वह उसे एक दो कपड़े बनवाकर भी न दे सके। उसे अपने किए पर बहुत गुस्सा आया जिसने उसे यह महसूस करा दिया था कि नौकर के प्रति उदार मत होना। उसे दबाकर और नथ में रखना किन्तु गरदन में फंदे डाले बैल-घोड़े की तरह। यदि इनमें एक बार भूख जग गई तो सत्यानाश समझो। उसकी आदिकाल से दबी आ रही भूख है जिसे हर अक्लमंद आदमी ने साम-दाम-दण्ड-भेद से बराबर दबाये रखा है। उसने भी उसकी भूख को कभी सिर उठाने का मौका नहीं दिया। हमेशा वह उस पर गिद्ध दृष्टि जमाये रहा। जरा भी उसने चूं-चपड़ करनी चाही तो उसे वहीं दबोच दिया। उसके मन में दहशत बैठा दी, ताकि वह कुछ और सोच ही नहीं सके।

लाला अब यह तै नहीं कर पा रहा था कि उसके गले में पड़ा पट्टा किस प्रकार से बराबर लटका रहे। वह चला गया तो उसका एक हाथ बेकार हो जायेगा और फिर मालूमो भी वहां ज्यादे दिन न रह सके। लाला की समझ में यह नहीं आया कि बल्लू के मन में यह विष घोला तो किसने घोला उसका माथा तभी ठनका था जब उसने उसको नये कपड़े पहने हुए देखा था। उसको उसने तहकीकात भी खूब की थी। उसे इस नतीजे पर पहुंच कर प्रसन्नता थी कि उसने दूकान में चोरी नहीं की थी और न कभी उसकी आज्ञा का उल्लंघन ही किया था। मुरख प्रोफेसर ने कभी भावुकता में आकर समाज पर अपना रौब डालने के लिए उसे नये कपड़े सिलवा दिये थे। वह इस बात को आई-गई कर गया था। फिजूल में इस मुद्दे को लेकर वह राई का पहाड़ बनाने के पक्ष में नहीं था। परन्तु अब उसे अपनी इस भूल के लिए पछतावा हो रहा था।

उसने क्या कुछ नहीं किया। उसे खूब डराया धमकाया। समझाया कि प्रोफेसर किसी बच्चे चुराने के गैंग से जुड़ा है। बाहर के मुल्कों में नौकर न मिलने

की समस्या है, वह उसे वहां टकने देगा। ताउम्र अपने देश में आने को तरस जायेगा और गैर मुल्क के लोगों की सेवा चाकरी करते करते दम तोड़ देगा। लाला में इस मुद्दे पर भरपूर देश प्रेम उमड़ पड़ा था। उसकी आंखों ने इस वक्त घड़ियाली आंसू बहाने में चूक नहीं की थी और उसने यह जतलाना चाहा था कि वही उसका सबसे बड़ा हितैषी है। परन्तु कल्लू टस से मस नहीं हुआ। उसे अपने जीने का उद्देश्य मालूम पड़ चुका था। अब उसे वह अपने लिये नहीं, अपनी मां के लिये जियेगा। 'लाला के यहां रह कर वह जीते-जीते मर रहा था। ''मालूखा भी लगभग उसकी स्थिति में ही था। नहीं वह मालूखा नहीं बनेगा, कदापि नहीं। वह लड़ेगा जरूर। मरते दम तक लड़ेगा। उसका विश्वास शहीदाना अन्दाज में आक्रामक बन चुका था उस पर लाला की कोई बात असर नहीं कर रही थी।

वह आज जा रहा था। सुबह वह जल्दी तैयार हो गया था। उसने भट्टी भी जलायी थी और लाला के लिये स्पेशल चाय तैयार की थी। लाला ने उसे टोकते हुए कहा, "तीन स्पेशल चाय बनाना।" आज वे तीनों स्पेशल चाय पी रहे थे। मालूखा का कण्ठ अवरुद्ध था और लाला को सचमुच आंसू अदर ही अदर भिगो रहे थे। उसके होंठ सूख रहे थे और उससे आंख नहीं मिला पा रहा था।

आज की सुबह कुहरा नहीं था। सूरज दमक रहा था। कल्लू को लग रहा था कि प्रोफेसर ने उसमें जिस शुभ प्रभात को फैलाया था, वही सामने आ खड़ा हुआ है और उसके पाक इरादों की अगवानी कर रहा है। वह मुस्करा रहा है और अंधेरे को पीछे छोड़ने का संकेत दे रहा है। मानों वह सूरज नहीं, मंगल कुमकुम बिखेरने वाला कोई जादूगर हो।

आजादी के इतने बरस बाद लगा कि पहली बार मर्तबा उसने आजादी के अर्थ-भाव को अपने में सक्रिय होता अनुभव किया है, अन्यथा तो वह अब तक पराधीनता के अंधेरे में पड़ा हुआ कूप मण्डूकी जीवन जीता रहता। बेमतलब ! प्रोफेसर के शब्द मुखर हो रहे थे, "तुम्हें अच्छा जीवन जीने का पूरा हक है, क्योंकि तुम भी इस महान-देश के नागरिक हो। तुम से ' तुम लोगों के उठने से यह देश उठेगा और अपनी महानता को सिद्ध कर सकेगा। ''तुम्हें कोई नहीं उठायेगा। तुम्हें स्वयं उठना होगा। तुम्हें स्वयं अपनी आजादी की पहरेदारी करनी होगी।'''आओ मेरे साथ आओ और शुभप्रभात की इस पुण्य वेला में कसम लो कि तुम प्रभात की रश्मियां बन कर मुस्कराने का प्रयास करोगे और अंधेरे की तन्हा घाटियों को, जहां नरभक्षी पशु-पक्षी पल रहे हैं, द्युतिमान कर दोगे।" प्रोफेसर प्रभात नगर के वासियों को सम्बोधित कर रहा था, "तुम में शक्ति है। तुम शक्ति के अवतार हो ! तुम में अद्वितीय, साहस है। तुम साहस के अवतार हो ! तुम से ही देश को आजादी मिली है और तुम्हीं उसी आजादी को बरकरार रखोगे।'''तुम कसम लो

कि जब वह युगीन रचनाओं का यश और इतिहास जो मुक्त आज़ादी के बाद की गुलामी से भी तो के सुन्दरताओं की मायावी छलना है। जो उन्हें गुलामी के संदूक के रूप में मिली है और जिस वह चिड़ियों का शिकार किये जिया करता मान कर रहे से सटकाये हुए आसमानी बुलंदी को छू लेने की आरजू रखते हैं। वे इसे भूल हुए जाते हैं कि उन्हें गुलामी के शिकंजे से मुक्त नहीं होने दें।'''तुम्हें उनको अपने अस्तित्व का आभास कराना होगा।'' वे मुट्ठी भर शुभ कर्मों को अंधकार की वादियों में भटकने के लिये विवश नहीं कर सकेंगे।'''उठो, मनु-पुत्रो शुभ प्रभात तुम्हारे स्वागत के लिये मंगल थाल सजाये तुम्हारे घर द्वार पर दस्तक दे रहा है।" प्रोफेसर का ओजस्वी स्वर और दमकता मुखमण्डल देदीप्यमान सूर्य सा दमक रहा था। पहली बार ऐसा शुभ प्रभात हो रहा था, जिसमें कर-बेमन दोनों ही मंत्र मुग्ध होकर एक साथ उठ रहे थे और आगे बढ़ने के लिये तत्पर थे।

कल्लू में संवेदनाओं की आंधी घुमड़ घोर उठी थी। उसने मालूखां से कहा, "दादा, मैं तुम्हें लेने आऊंगा, प्रतीक्षा करना।" बोलो कर सकोगे प्रतीक्षा !"

मालूखां ने सहमते हुए सिर हिला दिया। वह कुछ बोल नहीं सका। उसका कण्ठ अवरुद्ध हो चला था। वह कल्लू की ओर देखना चाह कर भी नहीं देख पा रहा था। उसे लग रहा था जैसे उसके पांव तले जमीन खिसकती जा रही है और वह गिरने वाला है। उसने अपने को मजबूती से सभाला। उसे लगा कि मानो कल्लू उससे कह रहा है कि वह वुजू के बाद ही नमाज पढ़ा करे।"

"पगला हो रहा है, कल्लू, मैं नमाज नहीं पढ़ रहा हूं, मैं तो नमाजियों की नकल कर रहा हूं।" मालूखां कह रहा था।

"नमाज साधना पद्धति का पहला इल्म है। उसकी नकल नहीं, उसे आत्मसात करना चाहिए। उसे सम्मान देना चाहिए।"

"पर मैं नहीं जानता कि वे नमाज में क्या पढ़ते हैं ?" उसका भोला स्वर था।

"तू जो पढ़ेगा वही नमाज होगी, दादा। अल्लाताला, हर भाषा और हर मजमून को बखूबी जानता है।'''वह तुम्हारे दिल की भाषा को समझता है।''' अन्यथा तो बेचारे गूंगे नमाज पढ़ ही नहीं सकें।"

मालूखां का दिल भर आया। अब कौन उसे रोकेगा-टोकेगा ? किससे वह अपनी बात कह सकेगा ? उसका बेचारा और अभागा मन फिर अकेला रह जायेगा घने बयावान में नरभक्षियों के बीच। वह सकपका गया। उसकी हथेलियों पर पसीने की बूंदें छलछला आईं।

"तो तू जा ही रिया है, रे।" लाला बोलता।

कल्लू ने सिर झुका कर सहमति प्रकट की।

"खूब सोच लिया है न।" लाला ने पुनः पूछा।

"हां।···खूब सोच लिया है।"

"क्या सोच लिया है?" लाला पुनः कुरेदता। उसे यह सोच कर डर लग रहा था कि वह गया तो कभी मालूखां भी चला जायेगा। फिर वह अकेला रह जायेगा। वह अकेला इस दूकान को नहीं चला सकेगा। बिल्कुल नहीं चला सकेगा। उसकी जो कुछ आमदनी हो रही है, उसका कारण तो ये दोनों ही हैं, अन्यथा वह सिवाय दूकान पर बैठे रहने के करता क्या है? सब तो मालूखां और कल्लू ही करते हैं। वह बैठे रहने का टैक्स वसूल करता है। इतना टैक्स कि उसने उससे घर का पक्का मकान बनवा लिया। मकान को आधुनिक साज सज्जा से सजा लिया—फ्रिज रेफ्रिजरेटर है, सोफा है, डबल बैड है···और सब कुछ है जो होना चाहिये। उसे लगा कि कल्लू नहीं, उसका सुख-वैभव कूच करने का संकेत दे रहे हैं। वह घबरा कर आगे कहने लगा, "तूने कुछ नहीं सोचा है। तू कुछ सोच भी नहीं सकता। तुझे बहकाया गया है। यह उन दुश्मनों की चाल है जो मेरे सींचे पौधे को उखाड़ कर पत्थर पर पटक देना चाहते हैं।···तू मेरी बात मान जा।" उसका स्वर पिघल रहा था मोम की तरह।

"नहीं, लाला, मैंने फैसला कर लिया है।"

"बिना मेरे पूछे।"

"हां।"

"क्या मैं तेरा कोई नहीं हूं। ···जब तू छह साल का रहा होगा तब से मैंने तुझे पाला है, बड़ा किया है। ···क्या मेरा तुझ पर कोई हक नहीं बनता है! ···लाला ने पैंतरा बदला। वह अनुभव के आधार पर इस नतीजे पर पहुंचा था कि जिसे दुनिया की बड़ी से बड़ी शक्ति नहीं जीत सके, उसे प्यार का इजहार करके जीता जा सकता। बढ़ते पैसे के साथ उसमें यह अक्ल पैदा हो गई थी कि काम अकड़-ऐंठ कर नहीं, प्यार के भुलावे में डाल कर कराया जा सकता है। तभी जो विद्यार्थी प्रोफेसर-प्रिंसिपल को मुर्दाबाद के नारों पर उछालने में जरा सी भी गलती या देर नहीं करते हैं, वे उसे लालाजी ''लालाजी के सम्बोधन के अलावा कभी अलिफ से बे नहीं कहते। गुण्डे से गुण्डा लड़का उसका सम्मान करता है। उसने अपनी वाणी को और कोमल और करुणा युक्त बना कर कहा, तुझे शायद नहीं, परन्तु मुझे तेरी परवाह है। ···मेरे लिये तू···।" वह अपनी नम आँखें पोंछने का नाटक करने लगता।

मालूखां का हृदय पसीज उठता। उसे लगता कि लाला से उनका मालिक-नौकर के अलावा भी कोई संबंध है। लाला बुरा आदमी नहीं है।

कल्लू के सामने बचपन की वह घटना रेखांकित हो गई जब उसने लाला से मेला देखने की छुट्टी चाही थी और यह ध्यान भी उसमें इसलिए पैदा हुआ था कि लाला सपरिवार मेला देख कर लौटा था और मेले की प्रशंसा अपने एक मित्र

मालूखा ने कल्लू की ओर देखा। उसे उसमें अपना कल्लू नजर नहीं आया। वह सोच रहा था कि कल्लू को लाला से ऐसे नहीं बोलना चाहिए। आखिर लाला उनका मालिक है और उसने उन्हें छुटपन से पाला है। वे जो कुछ हैं, लाला की बदौलत हैं। लाला बाप समान है। वह बोल पड़ा, "कल्लू, इस समय तेरा दिमाग ठीक नहीं है। तुझे पता नहीं है कि तू क्या कह रहा है?"

लाला को लगा कि यही वक्त है जब वह सफल नेता की भूमिका में उतर सकता है। उसने शिव-शंभु की तरह हंसी खुशी गरल पीकर कहा, "मालूखा, तू कल्लू से कुछ मत कह। उसने जो कुछ कहा है, वह सच कहा है। आखिर मैंने तुम दोनों को दिया क्या है—सिवाय गाली गलौज-मार पीट के न ...रूखा सूखा खाने और भिखमंगों की तरह रहने-सहने के। मैं तुम्हारा गुनहगार हूं।..." लाला का कंठ अवरुद्ध हो उठा।

"नहीं, लाला, आप ऐसा नहीं सोचें आपने हमें सब कुछ दिया। हम अनाथों को सहारा दिया है, सिर छिपाने को दुकान दी है और बाप जैसा संरक्षण दिया है।...लाला हम तुम्हारा यह एहसान कभी नहीं चुका सकेंगे।... इस जन्म में क्या अनेक जन्मों में भी नहीं चुका सकेंगे। मालूखा द्रवीभूत हो उठा था। उसने कल्लू की बांह पकड़ कर कहा, "चल, लाला से मुआफी मांग ले।"

कल्लू ने लाला की ओर देखते हुए कहा, "नहीं, मालूखा, नहीं।"

"मैं कहता हूं, मेरे दोस्त।...तो भी नहीं?" मालूखा ने अपना वास्ता दे डाला।

"मालूखा, मैं तेरी हर बात मान सकता हूं लेकिन...।"

"मेरी भी कुछ सुनेगा।" लाला ने बिगड़ती स्थिति को संभालते हुए कहा, "मेरे भी कुछ अरमान थे।" "मैं चाहता था" 'आज ऐसी स्थिति न आ जाती तो मैं अपना मुंह कभी नहीं खोलता। पर क्या करूं? आदमी हारा है तो अपनी औलाद से, अपनों से।" लाला भावुक हो उठा था। वह एक-एक शब्द धीरे-धीरे बोल रहा था, "मैं सोच लिया था कि मालूखा के साथ जो मैं नहीं कर सका वह अपने कल्लू के साथ जरूर करूंगा।...उसकी शादी करूंगा।...तब उसे घर चाहिएगा। अच्छे कपड़े चाहिएंगे।" वह नहीं पढ़ा" मैं भी कहां पढ़ा हूं, किस स्कूल में गया हूं...मेरे लिए भी तो काला अक्षर भैंस बराबर है...लेकिन मेरा लड़का कालेज जाता है, पढ़ता है...उसी तरह कल्लू भी अपने लड़के को स्कूल भेजेगा...बड़ा आदमी बनायेगा" मैंने इस सबके लिए बहुत पहले सोच लिया था और इसी कारण मैं इसके और तुम्हारे नाम से पोस्ट ऑफिस में खाता खोल दिया था। हर माह में उसमें इसके और तुम्हारे नाम से रुपये जमा करवाता हूं ताकि वक्त आने पर यह पैसा तुम लोगों के काम आ सके।...जाओ, जाकर पता कर आओ।...परन्तु तुम हो कि मुझे अपना दुश्मन मानते हो।...पगलो, अपना

...ता ही होता है वह मानता है [illegible] और [illegible] है [illegible]?" [illegible] [illegible] भी [illegible] [illegible] [illegible] और [illegible] बनाते जायें। [illegible] धीमड़े-धीमड़े हुई जिन्दगी [illegible] और [illegible] [illegible] उनकी [illegible] घूट पढ़ाते रहा, [illegible] भी न [illegible] और [illegible] और [illegible] शागिर्दी का सबक पढ़ाया था।"

गौरीशंकर [illegible] के साथ कहता "फिर तो यह मुल्क कभी उठ सकेगा।"

"यदि मुल्क से भिखमंगे, गरीब, गुण्डा, [illegible] आदि नहीं रहे फिर हमें कौन राज करने देगा। आम लोग तो [illegible] हो जायेंगे।" [illegible] समझाता। कुछ [illegible] कर वह आगे कहता, हम हैं तो जार फिर कोई नौशेरवां (ईसा की छठी सदी का फारस का एक अत्यन्त न्यायप्रिय बादशाह) पैदा नहीं हो सकता।···यदि कभी उनको हमारी इस मक्कारी का रहस्य मालूम पड़ गया तो यह शुतुरमुर्गीय जमात हमारी वही हालत करेगी जो [illegible] की जनता ने वहां के जार की की थी।"

"यह गलत है, भाई।"

"इस धंधे में अभी नये-नये आये हो धीरे-धीरे अपने अस्तित्व को जमाने के ए सब सीख जाओगे चिंता मत करो ''तुम्हारा तीसरा नेत्र अभी खुला नहीं। खुलते ही तुम भी वही कहोगे जो मैं कह रहा हूं। मैं यह परम ज्ञान अपनी के पेट से लेकर नहीं जन्मा। कभी मैं भी तुम्हारी तरह सोच कर इस धंधे बड़े अरमानों के साथ आया था। परन्तु मुझे यह परम ज्ञान मेरी परम्परा ने जो ने मेरी झोली में डाल दिया और कहा धंधे का गुरु-मंत्र बाहर नहीं जाना हिए। जब किसी भरोसेमंद शिष्य को पा लो तब उसके कान में यह फूंक मार। यों यह परम्परा चलती रहनी चाहिए।···"

लाला समझ गया था जो गुड़ से मर सके, उसे जहर क्यों दिया जावे। दो कनी चुपड़ी बातें करो और पत्थर को मोम बना कर एक कोने में पटक दो।

कल्लू भी एक बारगी चक्कर खाने लगा, मालूम तो मन ही मन लाला को बरदिगार मानने लगा।

लाला ने सम्मोहन को फैलाते हुए आगे कहा, "इस जिन्दगी का क्या भरोसा लूखा। उमर भी काफी हो चली है। पता नहीं कब कूच करना पड़ जाये। ''

... है—कल्लू का अभी गरम खून है, वह सोच रहा है, इस वक्त कुछ समझ में नहीं आयेगा—कभी तो ऐसा होगा। अमर होकर तो यहां

कोई आया नहीं है मैं भी तो मरूंगा ही।

"लाला"—मालूखा भरे गले से कहता और अपनी नम आंखें पोंछ लेता।

"पगला है, तू डरता है। मैं तो पका आम हूं। कब्र में पांव लटकाये बैठा हूं। यही सच है और मैं इस सच से मुंह नहीं मोड़ना चाहता हूं। "तू जानता है कि मेरा लड़का पढ़ लिख कर इस दुकान पर बैठने से रहा। वह तो अब भी नहीं चाहता। फिर भी मैं हूं कि उसको नजर अन्दाज करता रहता हूं। जानता है क्यों ?" अब तक लाला दोनों को सम्मोहन में ले चुका था। अब वह बेफिक्र था और मन ही मन प्रोफेसर के बच्चे को कोस रहा था।

कल्लू चुप था। उलझन में पड़ा वह सोच रहा था कि यह कैसा तिलिस्म है। उसके सामने प्रोफेसर आ खड़ा हुआ और उसको इस नयी परिस्थिति में से निकल भागने के लिए वह प्रोत्साहित करने लगा। वह कह रहा था—"कल्लू यह फरेब है। तू इस फरेब के चक्कर में मत आना। जरा सोच तो आज तक कितने ऐसे लाला हुए हैं जिन्होंने दलदली धरती में फंसे कल्लू-मालूखा को बाहर निकाला है।" तू इस फरेबी तिलिस्म को तोड़ कर लाला को सदैव-सदैव के लिए छोड़ दे। ये ही तेरे इन्कलाब का समय है। ये ही तेरे प्रभात फेरी का समय है। सोच क्या रहा है। उठ, चल पड़! चलता जा जब तक तेरा मुकाम न आ जाये।"

लाला अपने होंठों पर जीभ फेरता हुआ कह रहा था, "क्योंकि मुझे तुम्हारी चिंता है। दूकान बंद कर दी तो तुम कहां जाओगे ?—मेरी इच्छा तो यह है कि मैं जब इस दूकान से रिटायर होऊं तब तुम दोनों को इस दूकान का मालिक बना दूं। कभी मैं भी तुम्हारी तरह था। मैं वे दिन कभी भूलता नहीं। मैं तो प्रभु से यही चाहता हूं कि उसने जैसे मेरे दिन फेर दिये, वह वैसे तुम्हारे भी फेर दे और इसीलिए इस दूकान को गाड़ी खींचे जा रहा हूं। नहीं तो, प्रभु की कृपा है। कोई भी अच्छा-सा धंधा शुरू कर सकता हूं और इस दो कौड़ी के धंधे से मुक्ति पा सकता हूं।" 'मगर नहीं, मेरा कुछ फर्ज भी बनता है और उसी के कारण मैं कल्लू को रोकना चाहता हूं। आगे उसकी इच्छा, वह जाना चाहे तो जरूर जाये, अब मैं उसे नहीं रोकूंगा। लाला ने तरकश के सारे तीर खाली कर दिये और शिकार के फंसने का इन्तजार करने लगा। उसे यकीन था कि अब वह जा नहीं सकता क्योंकि उसने उन स्वप्नों का चुग्गा डाला है जिन्हें वह चाह कर भी छोड़ कर नहीं जा सकता—वह दूकान का मालिक हो जायेगा, ठाट-बाट से जिन्दगी बसर करेगा। उस जैसे आंख के अंधे और कान के बहरे फटीचर लड़के को और क्या चाहिये ?

कल्लू सोच में पड़ गया था।

मालूखा को यकीन हो गया था कि अब वह नहीं जायेगा।

कल्लू को लगा कि प्रोफेसर देवदूत के रूप में आकाश से उतर रहा है।

अपना ही होता है, यह मारता है तो मार कर छांह में डालता और पराया''पर तुम्हें उस सबसे क्या ?" लाला गर्म तवे को ठण्डा करने की तरकीब जानता था। आखिर नेताओं की सोहबत में रह कर वह इस कला में पारगत हो चुका था कि घडियाली आसू कैसे और कब बहाये जायें। उसने नेताओं से सुना था कि करोडों की चीथडे-चीथडे हुई जिन्दगी को जब तक दम में दम रहे और नेतागिरी की बरकत फले तब तक स्वप्नों की मखमली चादर उढा कर उनको अमरतो की ओस की बूद चटाते रहो, ताकि वे मरने भी न पायें और जी भी न सकें और अपनी नेतागिरी का झण्डा फहराता रहे।"

नौसिखिया नेता सकोच के साथ कहता, "फिर तो यह मुल्क कभी ऊपर नही उठ सकेगा।"

"यदि मुल्क में भिखमगे गरीब, गुरबा, झोंपडी झुग्गी वाले आदि नहीं रहेंगे तो फिर हमें कौन राज करने देगा। अपन लोग तो दिवालिया घोषित हो जायेंगे।" घुर्राट नेता समझाता। थूक गटक कर वह आगे कहता, हम हैं तो जान लो फिर कोई नौशेरवा (ईसा की छठी सदी का फारस का एक अत्यन्त न्यायप्रिय बादशाह) पैदा नही हो सकता। 'यदि कभी उसको हमारी इस मक्कारी का रहस्य मालूम पड गया तो यह शुतुरमुर्गीय जमात हमारी वही हालत करेगी जो रूस की जनता ने वहा के जार की की थी।"

"यह गलत है, भाई।"

"इस धधे में अभी नये-नये आये हो धीरे-धीरे अपने अस्तित्व को जमाने के लिए सब सीख जाओगे चिंता मत करो ''तुम्हारा तीसरा नेत्र अभी खुला नहीं है। खुलते ही तुम भी वही कहोगे जो मै कह रहा हू। मैं यह परम ज्ञान अपनी मा के पेट से लेकर नही जन्मा। कभी मैं भी तुम्हारी तरह सोच कर इस धधे में बडे अरमानो के साथ आया था। परन्तु मुझे यह परम ज्ञान मेरी परम्परा के पूर्वजो ने मेरी झोली मे डाल दिया और कहा धधे का गुरु-मत्र बाहर नही जाना चाहिए। जब किसी भरोसेमद शिष्य को पा लो तब उसके कान में यह फूक मार देना। यो यह परम्परा चलती रहनी चाहिए।'' "

लाला समझ गया था जो गुड से मर सके, उसे जहर क्यो दिया चिकनी चुपडी बातें करो और पत्थर को मोम बना कर एक कोने में

कल्लू भी एक बारगी चक्कर खाने लगा, मालूखा तो मन ही परवरदिगार मानने लगा।

लाला ने सम्मोहन को फैलाते हुए आगे कहा, "इस जिन्दगी मालूखा। उमर भी काफी हो चली है। पता नही कब कूच तू तो समझता है—कल्लू का अभी गरम खून है, वह गौर उसकी कुछ समझ मे नहीं आयेगा—कभी तो ऐसा होगा।

कोई आया नहीं है मैं भी तो मरूंगा ही।

"लाला"—मालूखा भरे गले से कहता और अपनी नम आखो पोछ लेता।

"पगला है, तू डरता है। मैं तो पका आम हू। कब्र मे पाव लटकाये बैठा हू। यही सच है और मैं इस सच से मुह नहीं मोडना चाहता हूं।'''तू जानता है कि मेरा लडका पढ लिख कर इस दुकान पर बैठने से रहा। वह तो अब भी नही चाहता। फिर भी मैं हूं कि उसको नजर अन्दाज करता रहता हूं। जानता है क्यो ?" अब तक लाला दोनो को सम्मोहन मे ले चुका था। अब वह बेफिक्र था और मन ही मन प्रोफेसर के बच्चे को कोस रहा था।

कल्लू चुप था। उलझन में पडा यह सोच रहा था कि यह कैसा तिलिस्म है। उसके सामने प्रोफेसर आ खडा हुआ और उसको इस नयी परिस्थिति में से निकल भागने के लिए वह प्रोत्साहित करने लगा। वह कह रहा था—"कल्लू यह फरेब है। तू इस फरेब के चक्कर मे मत आना। जरा सोच तो आज तक कितने ऐसे लाला हुए हैं जिन्होंने दलदली धरती मे फसे कल्लू-मालूखा को बाहर निकाला है। ''तू इस फरेबी तिलिस्म को तोड कर लाला को सदैव-सदैव के लिए छोड दे। ये ही तेरे इन्कलाब का समय है। ' ये ही तेरे प्रभात फेरी का समय है। सोच क्या रहा है। उठ, चल पड ! चलता जा जब तक तेरा मुकाम न आ जाये।"

लाला अपने होंठो पर जीभ फेरता हुआ कह रहा था, "क्योंकि मुझे तुम्हारी चिंता है। दूकान बद कर दी तो तुम कहा जाओगे ?—मेरी इच्छा तो यह है कि मैं जब इस दूकान से रिटायर होऊं तब तुम दोनो को इस दूकान का मालिक बना दू। कभी मैं भी तुम्हारी तरह था। मैं वे दिन कभी भूलता नही। मैं तो प्रभु से यही चाहता हू कि उसने जैसे मेरे दिन फेर दिये, वह वैसे तुम्हारे भी फेर दे और इसीलिए इस दूकान की गाडी खींचे जा रहा हू। नही तो, प्रभु की कृपा है। कोई भी अच्छा-सा धधा शुरू कर सकता हूं और इस दो कोडी के धधे से मुक्ति पा सकता हूं।'''मगर नही, मेरा कुछ फर्ज भी बनता है और उसी के कारण मैं कल्लू को रोकना चाहता हू। आगे उसकी इच्छा, वह जाना चाहे तो जरूर जाये, अब मैं उसे नहीं रोकूगा। लाला ने तरकश के सारे तीर खाली कर दिये और शिकार के फसने का इन्तजार करने लगा। उसे यकीन था कि अब वह जा नहीं सकता क्योंकि उसने उन स्वप्नो का धुआ डाला है जिन्हें वह चाह कर भी छोड कर नहीं जा सकता—वह दूकान का मालिक हो जायेगा, ठाट-बाट से जिन्दगी बसर करेगा। उस जैसे आख के अधे और कान के बहरे फटीचर लड़के को और क्या चाहिये ?

कल्लू सोच मे पड गया था।

मालूखा को यकीन हो गया था कि अब वह नहीं जायेगा।

कल्लू को लगा कि प्रोफेसर देवदूत के रूप मे आकाश से उतर रहा है।

कोई आया नहीं है मैं भी तो मरूगा ही।

"लाला"—मानूखा भरे गले से कहता और अपनी नम आखो पोछ लेता।

"पगला है, तू डरता है। मैं तो पका आम हू। कब्र मे पाव लटकाये बैठा हू। यही सच है और मैं इस सच से मुह नही मोडना चाहता हू।···तू जानता है कि मेरा लडका पढ़ लिख कर इस दुकान पर बैठने से रहा। वह तो अब भी नही चाहता। फिर भी मैं हू कि उसको नजर अन्दाज करता रहता हू। जानता है क्यो ?" अब तक लाला दोनो को सम्मोहन मे ले चुका था। अब वह बेफिक्र था और मन ही मन प्रोफेसर के बच्चे को कोस रहा था।

कल्लू चुप था। उलझन मे पडा यह सोच रहा था कि यह कैसा तिलिस्म है। उसके सामने प्रोफेसर आ खडा हुआ और उसको इस नयी परिस्थिति मे से निकल भागने के लिए वह प्रोत्साहित करने लगा। वह कह रहा था—"कल्लू यह फरेब है। तू इस फरेब के चक्कर मे मत आना। जरा सोच तो आज तक कितने ऐसे लाला हुए हैं जिन्होंने दलदली धरती मे फसे कल्लू-मानूखा को बाहर निकाला है।" तू इस फरेबी तिलिस्म को तोड कर लाला को सदैव-सदैव के लिए छोड दे। ये ही तेरे इन्कलाब का समय है।' ये ही तेरे प्रभात फेरी का समय है। सोच क्या रहा है। उठ, चल पड! चलता जा जब तक तेरा मुकाम न आ जाये।"

लाला अपने होठो पर जीभ फेरता हुआ कह रहा था, "क्योंकि मुझे तुम्हारी चिंता है। दूकान बंद कर दी तो तुम कहा जाओगे ?—मेरी इच्छा तो यह है कि मैं जब इस दूकान से रिटायर होऊं तब तुम दोनो को इस दूकान का मालिक बना दू। कभी मैं भी तुम्हारी तरह था। मैं वे दिन कभी भूलता नही। मैं तो प्रभु से यही चाहता हू कि उसने जैसे मेरे दिन फेर दिये, वह वैसे तुम्हारे भी फेर दे और इसीलिए इस दूकान की गाडी खीचे जा रहा हू। नही तो, प्रभु की कृपा है। कोई भी अच्छा-सा धधा शुरू कर सकता हू और इस दो कोडी के धधे से मुक्ति पा सकता हू।···मगर नही, मेरा कुछ फर्ज भी बनता है और उसी के कारण मैं कल्लू को रोकना चाहता हू। आगे उसकी इच्छा, वह जाना चाहे तो जरूर जाये, अब मैं उसे नही रोकूगा। लाला ने तरकश के सारे तीर खाली कर दिये और शिकार के फसने का इन्तजार करने लगा। उसे यकीन था कि अब वह जा नही सकता क्योंकि उसने उन स्वप्नो का चुग्गा डाला है जिन्हें वह चाह कर भी छोड कर नहीं जा सकता—वह दूकान का मालिक हो जायेगा, ठाट-बाट से जिन्दगी बसर करेगा। उस जैसे आख के अधे और कान के बहरे फटीचर लड़के को और क्या चाहिये ?

कल्लू सोच मे पड गया था।

मानूखा को यकीन हो गया था कि अब वह नहीं जायेगा।

कल्लू को लगा कि प्रोफेसर देवदूत के रूप मे आकाश से उतर रहा है।

अनगिनत गोल किरणें बच्चों से झूले तक गयी हैं, उनकी अगवानी कर रहे हैं। मंदिर में शंख घण्टे-ध्वनियां बज उठी हैं मस्जिद में अजान दी जा रही है, गुरुद्वारे से वाणी की आवाज गूंज रही है और गिरजाघर की घण्टियां थिरक उठी हैं। यह समवेत आरती सारे गुरुनिमयी रश्मियों में बदलता जा रहा है।...स्वर्णिम शुभ प्रभात मुस्करा उठा है। अनगिनत हाथ भी रश्मियां बन उठे हैं। अदृश्य आकाश की स्वर लहरियां वीणा के मद्धिम स्वर की रुनझुन उठी हैं। उनमें एक सन्देश उमड़ा पड़ रहा है—तुझे कल्लू से सार्वजनिक बनना है, तुझे कमजोर से शक्तिशाली बनना है, तुझे घृणा से प्यार की ओर आना है तुझे दुःख से आनन्द की ओर बढ़ना है, तुझे हिंसा से अहिंसा की ओर बढ़ना है और तुझे असत्य से सत्य की ओर जाना है।...तू उठ बैठा-बैठा क्या सोच रहा है। जो सुना है वह मृगतृष्णा के सम्मोहन से तुझे बाहर ले जायेगा और तुझमें एक नये इन्सान को जन्म देगा।...जिसने तुझे आज तक कुछ नहीं दिया सिवा नरक की कठोर यातनाओं के, तू उस शैतान की बांहों में मत आ।... अब उठ। वो देख "शुभ प्रभात हो रहा है "अरुण-सारथी ज्योति प्राणों को लेकर तेरा मार्ग प्रशस्त कर रहा है" गा रहा है।

कल्लू जग गया। समग्र सम्मोहन के चक्रव्यूह से वह बाहर आ गया। उसमें तेज स्वर से एक साथ रश्मियां गा उठी हैं—शुभ प्रभात "शुभ प्रभात"। चतुर्दिक शुभ प्रभात"।

मालूखा ने उसको सम्मोहनावस्था से मुक्ति दिलाने के लिये कहा, "ला, कल्लू यह पोटली मुझे दे।" कल्लू संभल गया और मुस्करा कर बोला, "नहीं। मैं जा रहा हूं।...आप लोग मुझे क्षमा करना। अब मुझे रोकना नहीं, मैं रोकने से रुकूंगा भी नहीं।"

लाला हतप्रभ रह गया। कल्लू चल पड़ा। उसके साथ-साथ थोड़ी देर मालूखा चलता रहा। मालूखा का मन भारी हो रहा था और उसकी आंखें वह पढ़ना चाहती थीं कि कल्लू ने रुक कर कहा, "जाओ मालूखा, अब तुम लौट जाओ।"

"कल्लू..."मालूखा बुदबुदाया।"

कल्लू ने मालूखा को हाथ जोड़ कर नमस्कार किया और आगे बढ़ गया। मालूखा चुपचाप उसे जाता हुआ देखता रहा। वह काफी देर तक संज्ञाहीन सा खड़ा रहा। उसके पांव तले से धरती खिसकने लगी। उसका सिर चक्कर खाने लगा।

कल्लू ने बहुत आगे पहुंच कर मुड़ने से पहले एकबारगी पीछे मुड़कर देखा। मालूखा लौट रहा था। उसने मन ही मन निर्णय किया कि वह मालूखा को भी एक न एक दिन अपने साथ जरूर लायेगा। उसे लगा कि वह अंधकार को पीछे छोड़कर शुभ प्रभात की ओर बढ़ता जा रहा है। अनगिनत स्वर्णिम रश्मियां उसकी

आरती उतार रही हैं गगन गा रहा है। चारो ओर मगल-कुसुम बिखर रहा है। वह मानो कह रहा है, "ठहरो, प्रोफेसर, मैं आ रहा हूं। मैंने अदृश्य बेडियो के चक्रव्यूह को तोड दिया है। मैंने तुम्हारे शुभ प्रभात को चुना है।...अब मे मेरा यही गन्तव्य है...यही मार्ग !"

कल्लू यह सोचते हुए, अपने मे आनन्द मे भर कर आगे बढ़ता जा रहा था।

●●●

लोकप्रिय उपन्यास साहित्य

सिद्धपुरुष	राजेन्द्र मोहन भटनागर
सूनी मांग	स्वर्ण भारती
स्वर्ण मारिचिका	इन्दु बिश्नोई
ये नए लोग	मोहन चोपड़ा
अम्बर	गायत्री वर्मा
गुलियों के तोते	बलवन्त सिंह
पासा पलट गया	शालिग्राम मिश्र
तेरह दिन	बसन्त प्रभा
मधुप	विमल कुमार
नीलम की अंगूठी	विभूतिभूषण मुखोपाध्याय
आंधी की नींवें	रांगेय राघव
पौलस्त्य	श्रीनिधि सिद्धान्तालंकार
प्रतिशोध की ज्वाला	रामकुमार बेमानी
सर्वंग	गिरिजा सक्सेना
अपने पराये	राजकुमार अनिल
काका	रांगेय राघव
काली लड़की	रजनी पनिकर
अपराजिता	चतुरसेन शास्त्री
बयान एक गधे का	डॉ० चन्द्रशेखर
परिणति	विष्णुदेव उपाध्याय
मोना	बलवन्त सिंह
देवनगरी का स्वप्न	शालिग्राम मिश्र
तिष्यरक्षिता	गिरिजा सक्सेना

आत्माराम एण्ड संस
दिल्ली लखनऊ

लोकप्रिय उपन्यास साहित्य

सिद्धपुरुष	राजेन्द्र मोहन भटनागर
सूनी मांग	स्वर्ण भारत
स्वर्ण मारिचिका	इन्दु बिश्नो
ये नए लोग	मोहन चोपड़
अम्बर	गायत्री वर्मा
गुलियो के तोते	बलवन्त सिंह
पासा पलट गया	शालिग्राम मिश्र
तेरह दिन	बसन्त प्रभा
अकुश	विमल कुन्दू
नीलम की अगूठी	विभूतिभूषण मुखोपाध्याय
आंधी की नीवें	रांगेय राघव
पौलस्त्य	श्रीनिधि सिद्धान्तालंकार
प्रतिशोध की ज्वाला	रामकुमार बेसानी
लवग	गिरिजा सक्सेना
अपने पराये	राजकुमार अनिल
काका	रांगेय राघव
काली लडकी	रजनी पनिकर
अपराजिता	चतुरसेन शास्त्री
बयान एक गधे का	डॉ॰ चन्द्रशेखर
परिणति	विष्णुदेव उपाध्याय
मोना	बलवन्त सिंह
देवनगरी का स्वप्न	शालिग्राम मिश्र
तिरस्कृता	गिरिजा सक्सेना

आत्माराम एण्ड संस
दिल्ली लखनऊ